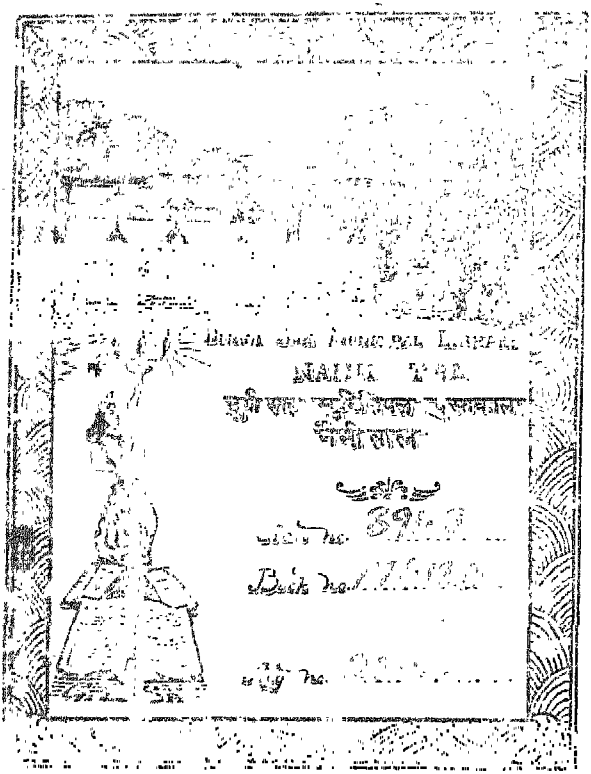


गाँवों की ओर से आज कलाकार उदास हो गये हैं—और यह भी बातें हैं कि कौन जाता है गाँवों के जीवन को देखने—वहाँ भूख के नंगे नाच का सच्चा स्वरूप देखने—वहाँ की समस्याओं से प्रेरणा लेने। मन्मथ बाबू 'दुश्चरित्र' में गाँव की करुणापूर्ण कहानी को ही कहते हैं—गाँव में समाज एक भयंकर सत्य है—मर्यादा एक ऐसी चक्की है जिससे कोई नहीं बचता। संसार में सत्य की विजय तो होनी चाहिए ही पर क्या सत्य की विजय वास्तव में होती है—क्या यहाँ दूध पानी से अलग साफ साफ दिख जाता है—क्या यहाँ रामधारी-से भाई डाकू बनने को बाध्य नहीं होते—

दुश्चरित्र

लेखक की अन्य रचनाएँ

दर्शन और विज्ञान

१—ऐतिहासिक भौतिकवाद

२—अपराध

३—सेक्स से सुख और जीवन

४—यौन विज्ञान और वैवाहिक जीवन

आलोचना

५—कथाकार प्रेमचन्द

६—शरत्‌चंद्र एक अध्ययन

७—बँगला के आधुनिक कवि

राजनीति और इतिहास

८—भारत में सशस्त्र क्रांति-चेष्टा का रोमांचकारी इतिहास

९—अगस्त-क्रांति और प्रतिक्रांति

१०—भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास

उपन्यास

११—सुधार

१२—जिच

१३—जययात्रा

१४—गृहयुद्ध

१५—चक्की

बाल-साहित्य

१६—सरदार भगतसिंह

१७—रामप्रसाद बिस्मिल

१८—प्रेमचन्द और उनका साहित्य

आत्मकथा

१९—क्रांतिकारी की आत्मकथा

दुश्चरित्र

मन्मथनाथ गुप्त

प्रगति प्रकाशन
नई दिल्ली

प्रकाशक—
प्रोग्रेसिव पब्लिशर्स
१४-डी, फ़ीरोज़शाह रोड,
नई दिल्ली।

तीन रुपये आठ आने

मुद्रक—गोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस, दिल्ली।

परिक्रमा

मैं उपन्यास अथवा नाटक की भूमिका लिखने में विश्वास नहीं करता क्योंकि यदि उपन्यास या नाटक को पढ़कर या उसके अभिनय को देखकर पाठक के निकट लेखक का वक्तव्य स्पष्ट नहीं हो जाता, तो केवल प्राक्कथन या वक्तव्य से अपनी कला के स्पष्टीकरण करने का प्रयास हास्यास्पद है। लेखक जो कुछ कहना चाहता है, साथ ही वह जो कुछ नहीं कहना चाहता है (यह अधिक महत्वपूर्ण है) या न कहकर भी कहना चाहता है (इसी में असली परख है) वह उसकी रचना से ही स्पष्ट हो जाना चाहिए। फिर भी कई बार अच्छे उपन्यासकार तथा नाटककार भूमिकाएं लिखते हैं। इसका उद्देश्य केवल औसत दर्जे के पाठक के समक्ष अपनी कला का स्पष्टीकरण है, नहीं तो शायद वह उसे बिलकुल ही समझ न पावे।

यह मानते हुए भी कि औसत दर्जे के पाठक को किसी-किसी क्षेत्र में कुछ बताना नाटककार या उपन्यासकार के लिये उचित हो सकता है, मैं इसमें एक खतरा यह देखता हूं, और वह खतरा लेखक के लिये ही है कि लेखक शायद स्वयं अपनी कला की समग्ररूप से परिक्रमा न कर पाये। सज्ञान कलाकार अपनी कला में जो कुछ डालता है, उसमें उससे अधिक भी हो सकता है। आमतौर से ऐसा होता ही है। ऐसी हालत में लेखक द्वारा अपनी कला की समीक्षा उस कला का स्पष्टीकरण न होकर उसे एक ऐसी सीमा में डाल देगा जो उसके लिये उचित नहीं है। उदाहरण के तौर पर यदि शेक्सपियर अपनी कला के

सम्बन्ध में कुछ लिख जाते, तो उससे उनकी कला के चमत्कारों के खुलने में बाधा पहुंचती क्योंकि शेक्सपियर को विभिन्न युग में विभिन्न लोगों ने विभिन्न यहां तक कि परस्पर विरोधी कारणों से सराहा है। ऐसे ही सब महान् कलाकारों का हुआ है। हमारे सामने बहुत कुछ प्रेमचन्द के सम्बन्ध में भी इस प्रकार के बहुमुखी तथा भिन्नमुखी विचार हैं।

इसी कारण मैं इस प्राक्कथन में एक मध्यम मार्ग का अवलम्बन करते हुए केवल इतना ही सैद्धांतिक रूप से बताने की चेष्टा करूंगा कि मैं उपन्यास तथा कहानी साहित्य की रचना की तरफ क्यों आकृष्ट हुआ। मेरे निकट साहित्य स्वयं कोई लक्ष्य नहीं है, बल्कि वह जीवन के उन्नयन करने तथा उसको ऐश्वर्यशाली बनाने का एक साधन-मात्र है। इस कारण जो लोग कहते हैं, कला कला के लिए है, मैं उनकी बात सम्पूर्ण रूप से समझ नहीं पाता। मैं यह नहीं समझ पाता कि साहित्य केवल लेखक के स्वान्तःसुखाय कैसे हो सकता है। मेरे निकट स्वान्तःसुख वृहत्तर सामाजिक सुख से अलग नहीं है, और जहां वह अलग है, वहां मैं उसे संदेह की दृष्टि से देखता हूं, और मैं उस पर भरोसा नहीं कर पाता।

बड़े-से-बड़े 'कला कला के लिए' मत के प्रतिपादक साहित्य पर कुछ-न-कुछ प्रतिबन्ध अवश्य लगाते हैं, और जहां एक बार किसी भी मामले में प्रतिबंध मान लिया गया, वहां सारा झगड़ा केवल प्रतिबंध की मात्रा पर ही रह जाता है। मैंने कहीं लिखा है कि साहित्य के सम्बन्ध में यह कल्पना कि वह एक मदमत्त-करी है, चाहे जिधर झूम जाय, चाहे जिसका लहलहाता खेत चर जाय यह बिलकुल थोथी कल्पना है। यदि साहित्य मदमत्त करी की तरह बलशाली है, तो उसके लिए वृहत्तर अर्थ में समाज का तथा सर्वकाल का अंकुश भी मौजूद है, और तभी मदमत्त

करी से कुछ मानवीय लाभ हो सकता है। स्मरण रहे कि लाभ से मेरा मतलब केवल द्रव्यगत लाभ नहीं। आत्मिक यानी बौद्धिक लाभ भी लाभ है। यदि इस बृहत्तर अर्थ में लाभ नहीं तो वह तो साहित्य रूपी करी एक जंगल का जीव है, और उससे शतहस्त या सहस्रहस्त दूर रहने की आवश्यकता है।

आज के जटिल जगत् में साहित्य अपनी जिम्मेदारी से अलग नहीं हो सकता। उसे नवनिर्माण में हाथ बटाना ही पड़ेगा। अवश्य उसका हाथ बटाना कला के माध्यम से होगा न कि केवल गला फाड़कर प्रचार-कार्य से। साहित्य उसी प्रकार से एक अलग विषय है जैसे संगीत। कोई यदि नवनिर्माण के जोश में आकर कनस्तर पीट दें, और साथ-साथ जोर से चिल्लावे, तो उसके चिल्लाने को महज इसलिए कि वह नवनिर्माण के जोश से उद्भूत हुआ है संगीत नहीं कहा जा सकता। यही बात साहित्यके सम्बन्ध में भी लागू है। अक्सर कथित प्रगतिशील लोग इस अत्यन्त सहज बात को भुला देते हैं, और कनस्तर पीटने को संगीत बताने का दुराग्रह करते हैं।

इसके पूर्व मेरे ५ उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। वे सभी बहुत सफल रहे, और आलोचकों ने उन्हें सराहा। मेरा यह छठा उपन्यास पाठकों के सन्मुख इसी आशा से पेश किया जाता है कि पाठक इसे पढ़ेंगे, और इसके कारण जो समस्याएं उनके मनमें उद्भूत होंगी, उन पर गहराई से विचार करेंगे। हमारे ग्रामजीवन की ओर से कलाकारगण जिस प्रकार से उदासीन होते जा रहे हैं, वह शोचनीय है क्योंकि अभी तक गांवों ही में भारत रहता है। फिर जैसा कि इस उपन्यास को पढ़ने से ज्ञात होगा ग्राम की समस्याएं नगर की समस्याओं से बहुत भिन्न नहीं हैं। अलमतिविस्तरेण।

मन्मथनाथ गुप्त

एक

जोरावरसिंह जिस समय मरे, तो अपने पीछे दो जवान लड़के गिरधारी और रामधारी को छोड़ गये। गिरधारी का ब्याह हो चुका था, और एक छः साल की लड़की भी थी। उस समय गिरधारी की उम्र तेईस और रामधारी की उम्र सत्रह थी। काम-लायक काफी जमीन थी। तीन दुधारू गायें थीं, दो जोड़ी बैल थे। गांव के तगड़े किसानों की जो हालत होती है, इन दोनों भाइयों की हालत उससे किसी प्रकार कम नहीं थी।

किसी बात की कमी नहीं थी। गाय-बैलों के लिये चारे का भी इन्तजाम हो जाता था। दूध, दही, घी, मट्ठा सब चीज मयस्सर थी, पर पीते वे मट्ठा ही थे। पिता की मृत्यु पर दोनों भाइयों को बड़ा शोक हुआ क्योंकि जोरावरसिंह इन दोनों की मां और बाप दोनों की जगह पर थे। मां का तो बहुत पहले ही देहान्त हो चुका था। कब, इसको उन्हें कुछ याद भी नहीं थी।

समय सब घावों को भर देता है। दोनों भाई पितृशोक भूलकर फिर से काम में लग गये। वही सवेरे से हल लेकर

जुटना या अन्य किसी कृषि-सम्बन्धी काम में जुटना, फिर शाम को छुट्टी पाना। उनके मन में कोई असंतोष नहीं था। भारतीय किसानों के जीवन का मानदंड इतना निम्नकोटि का होता है कि वे थोड़े में ही संतुष्ट हो जाते हैं, और अपने को सुखी समझने लगते हैं। लड़कपन से वे जिस दर्शनशास्त्र की छत्रछाया में पलते हैं, वह उन्हें यही शिक्षा देता है कि वे थोड़े में ही संतुष्ट रहें। कौन जाने यह अच्छा है या बुरा ? पर इतना तो सही है कि इस संतोष के कारण उनकी कर्म-शक्ति कुंठित हो जाती है, और विचार-शक्ति में तेजस्विता नहीं रहती। जिनको सदा यही डर लगा रहता है कि वे जहां पर हैं, वहां से नीचे खिसक न जायँ, वे यदि अपनी अवस्था को स्थिर देखकर खुश रहें तो आश्चर्य ही क्या है।

पर गिरधारी के मन में बराबर कुछ असंतोष बना रहता है। एक तो वह प्राइमरी की चौथी श्रेणी तक पढ़ा है, दूसरे जब वह अपने गांव के मुखिया सेहरसिंह और उसके लड़के केहरसिंह को देखता है, तो उसके मन में एक असंतोष की लहर दौड़ जाती है। सेहरसिंह भी जाति का कुर्मी है, और जोरावरसिंह का कोई दूर का रिश्तेदार लगता है। पहले जोरावर की हालत सेहरसिंह से अच्छी थी, पर जोरावरसिंह को मुकदमेबाजी की लत लग गई। उसी से उसका सत्यानाश हो गया। नहीं तो गिरधारी और रामधारी की हालत और ही होती।

इस असंतोष के बावजूद गिरधारी बराबर अपने कामकाज को मन लगाकर करता था। मन में भले ही एक असंतोष की चिनगारी हो, पर वह अथक रूप से क्रियाशील रहता था। उसने जो थोड़ी-सी शिक्षा पाई थी, उससे उसमें यह लज्जा नहीं पैदा हुई थी कि वह अपने हाथों से हल क्यों जोते। इधर के

सब कुर्मी हल जोतते थे। हां, केहरसिंह नहीं जोतता था; पर उसके बाप को तो गिरधारी ने स्वयं हल जोतते देखा था।

गिरधारी को स्त्री भी ऐसी मिली थी जो घर के सब काम-काज अच्छी तरह करती थी। जमुना एक किसान की लड़की है। जिस समय गिरधारी की शादी हुई थी, उस समय जोरावर-सिंह की हालत अपेक्षाकृत अच्छी थी, फिर भी उसने पतोहू के रूप में जमुना को ही चुना था, जो गृहस्थी तथा सानी-पानी के सब कामों में बचपन से ही दक्ष थी। ऐसा करने में जोरावर-सिंह ने बड़ी दूरदृष्टि से काम लिया था। आज इसीका नतीजा यह था कि परिवार में किसी तरह की हाय-हाय, किल-किल नहीं थी।

रामधारी एक तरफ तो अपने भैया गिरधारी को खेत के सब कामों में मदद देता है, रात जगकर फसल पर पहरा देता है, तथा दूसरी तरफ घर के अन्दर भौजाई के सब कामकाज में हाथ बँटाता है। शरीर से वह खूब पुष्ट है। गिरधारी स्वयं कभी दूध नहीं पीता, पर अपने छोटे भाई तथा लड़की को दूध अवश्य पिलाता है। रामधारी बहुत मना करता है कि वह भी मट्ठा पियेगा, पर भाई और भौजाई की जिद के सामने उसकी एक नहीं चलती। उसे दोनों जून एक लोटा भरके कंडा की आग से औटाया हुआ दूध पीना पड़ता है। घर का दूध पीता है, दिन-भर मेहनत मशक्कत करता है, फिर वह पुष्ट क्यों न हो। वह भाई तथा भौजाई पर जान देता है। भतीजी सुखिया उससे बहुत हिली हुई है। जो चीज वह बाप और मां से मांग नहीं सकती, वह अपने चाचा से मांग लेती है। रामधारी ने रामा-यण की कथा सुनी है और अपने तरीके से लक्ष्मण की तरह होने की कोशिश करता है।

गांव के लोग रामधारी की सरलता पर हँसते हैं। वे नाक चढ़ाकर ताना देते हुए कहते हैं—देखा इस गिरधरिया को ! यह इस मारे अपने भाई की शादी नहीं करता कि कहीं रामधारी को अक्ल न आ जाय ! जब देखो तब कहता है कि भाई के ब्याह की फिक्र है, पर करता-धरता कुछ नहीं। कुछ कोशिश होती तो भला ब्याह नहीं होता ? हमें तो सुनने में नहीं आया कि कहीं कोशिश हो रही है। ऐसी कौन-सी छिपी हुई बात है कि हो भी रही है और किसी को पता नहीं लगता।

लोग रामधारी के भी कान भरते। एक बार रामधारी के इन अनन्य हितैषियों ने साहसपूर्वक स्वयं रामधारी से यह बात कह दी। वास्तव में यह उनकी पहली कोशिश नहीं थी। जोरावरसिंह की मृत्यु के बाद से ये लोग बराबर भाइयों को अलग करके बँटवारा करा देने के लिये चेष्टा करते रहे। पर कोई नतीजा नहीं निकलता था।

रामधारी ऐसी धुन का पक्का था कि किसीकी बात नहीं सुनता। एक दिन एक गांववाले ने रामधारी को अलग पाकर कहा—"रमधरिया, तेरी उमर इतनी हो गई, आखिर तेरी शादी कब होगी ? क्या तू हमेशा भाई और भौजाई की गुलामी ही करता रहेगा ?"

"क्या ?"—कहकर रामधारी ठिठककर खड़ा हो गया। उसके सरल सुन्दर चेहरे पर बल पड़ गये। सचमुच ही वह गांव-वालों की इस बात को समझ नहीं पाता था। पहली बात तो यह थी कि उसे अपने ब्याह की कोई फिक्र नहीं थी। दूसरी बात यह थी कि वह समझता था कि जबतक बाबूजी थे, तब तक यह सब फिक्र वे करते थे, अब यह सारी फिक्र यदि करनी है तो भैया करें।

उसे यह प्रश्न सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। बोला—"अभी बाबूजी के मरे कुछ ही दिन हुए हैं। ब्रह्मभोज वगैरह में बीसियों का खर्च हो गया। आखिर ब्याह में कुछ खर्चा लगेगा ही।...."

पर गांववाले इन बातों से माननेवाले नहीं थे। वे कुछ दिन चुप रहे, एक दिन फिर कह निकले। तब रामधारी ने उन्हें कसकर डांट दिया। वे रामधारी को बेवकूफ समझ कर चुप रह गये, पर इसका अर्थ यह नहीं कि उन्होंने अपनी कुचेष्टा बन्द कर दी।

दो

ऐसे कई वर्ष बीत गये। अभी तक रामधारी का ब्याह नहीं हुआ था। इधर कई सालों से फसल की हालत अच्छी नहीं थी। किसान तो फसल पर ही निर्भर होता है। यदि पानी ठीक समय से बरसा और फसल अच्छी हो गई, तब तो किसान के पौ-बारह हैं, पर यदि पानी देर में बरसा, कम बरसा, या नहीं बरसा, तब तो किसान की आफत है। अभी भारतीय किसान सम्पूर्ण रूप में प्राकृतिक शक्तियों पर ही निर्भर है। इन दिनों कुछ ऐसा हिसाब रहा कि किसी-न-किसी कारण से फसल अच्छी नहीं हुई। दोनों भाई जी-तोड़ मेहनत करते थे, पर फिर भी कोई विशेष फायदा नहीं होता था।

उधर जमुना के बराबर बच्चे होते जा रहे थे। किसान बच्चों से नहीं घबड़ाता, पर जब तक बच्चे सयाने नहीं हो जाते तब तक वे परिवार पर बोझस्वरूप तो होते ही हैं। जहाँ वे कुछ फुटकर काम करने-लायक हुए, वहां फिर बोझ नहीं

रह जाते। कुछ भी हो, इन्हीं कारणों से हो या अन्य कारणों से, रामधारी का ब्याह होने से रह गया था।

रामधारी ब्याह के विरुद्ध नहीं था। ये सब चोंचले स्वस्थ किसानों में नहीं होते। रामधारी जानता था कि सबका ब्याह होता है इसलिए उसका भी होगा। वह घर की हालत भी समझता था। ब्याह हो न हो, होगा न होगा, उसे इन बातों की कोई फिक्र नहीं थी।

इधर सुखिया भी ब्याह के उपयुक्त हो गई थी। चौदह-पन्द्रह साल की लड़की किसानों में बिल्कुल ब्याह-योग्य समझी जाती है। गिरधारी को रामधारी के ब्याह की फिक्र तो थी ही, अब सुखिया के ब्याह की भी फिक्र हो गई। रामधारी का ब्याह तो कुछ टल भी सकता था, पर सुखिया के ब्याह को टालना मुश्किल था। पुरुष अगर आजन्म कुँवारा भी रहे, तो कोई कुछ नहीं कहता, पर स्त्री का यदि एक सीमा के बाद ब्याह नहीं हुआ, तो लोग उँगली उठाने लगते हैं।

साथ-साथ दो ब्याहों की फिक्र करने का नतीजा यह हुआ कि गिरधारी किसीका भी ब्याह नहीं कर पाया। गिरधारी कुछ इस किस्म से सोचता था कि बाबूजी होते तो अब तक रामधारी का ब्याह हो गया होता, इसलिये उसका विवेक यह कहता था कि पहले रामधारी का ब्याह होना चाहिए। पर जब वह सुखिया की तरफ आँख उठाकर देखता था तो उसकी राय बदल जाती थी। इस प्रकार दो इच्छाओं के बीच में पड़कर वह कुछ भी नहीं कर पाया था।

जमुना उसे इस अकर्मण्यता के भँवर से निकालने की कोशिश करती थी। पहले वही जब-तब रामधारी के ब्याह के लिये कहा करती थी, पर अब साल-दो-साल से वह सुखिया के ब्याह की ही बात कहती थी। रामधारी को तो इन बातों से कोई

मतलब ही नहीं था। वह अपने काम से काम रखता था। इस बीच में उसे एक लत अवश्य लग गयी थी। वह यह कि कभी-कभी वह भंग भी घोंट लेता था।

इसी उधेड़-बुन में सुखिया की उम्र सत्रह हो गई, और अभी तक उसका ब्याह नहीं हुआ था। अब गिरधारी को जब भी फ़ुरसत मिलती दौड़ता, पर कोई ढंग की शादी नहीं लग रही थी।

एक दिन गिरधारी और रामधारी दोनों भाई खेत पर से लौटे तो देखा कि घर में रोज की तरह न तो खाने-पीने की ही तैयारी है, और न बैलों के लिए कोई सानी-पानी का ही इन्त-जाम है। जो गायों की ओर देखा तो वे भी दुही नहीं गई थीं। बछड़े जहाँ-के-तहाँ बँधे हुए बुरी तरह चिल्ला रहे थे। सामने न तो सुखिया ही दिखलाई पड़ी न जमुना। बच्चे घर के बाहर खेल रहे थे।

गिरधारी ने जो घर की यह हालत देखी तो समझ गया कि कोई बात जरूर है। उसने यही समझा कि जमुना बीमार है। पर यदि जमुना बीमार है तो सुखिया ने घर के काम क्यों नहीं किये? कई बार ऐसा हुआ कि जमुना को जूड़ी आ गई, तो उससे कुछ काम नहीं रुका। सुखिया सयानी हो चुकी थी, वह मां के सब कामों को खुद कर लेती थी, और शायद मां से अच्छा ही करती थी।

रामधारी तो हाथ-पैर धोने के लिये कुएँ के पास चला गया, और गिरधारी घर के अन्दर पुकारने लगा—"सुखिया, सुखिया!"

कहीं कोई उत्तर नहीं मिला। तब वह उस कोठरी की तरफ बढ़ा जिसमें सुखिया और अन्य बड़े बच्चों की खाटें थीं। उसने फिर पुकारा—"सुखिया, सुखिया!" पर उस कोठरी के सामने

जाकर देखा तो बाहर से साँकल चढ़ायी हुई थी और भीतर से फुफकार की-सी आवाज आ रही थी।

गिरधारी के होश उड़ गये। उसने अब की बार "सुखिया की अम्माँ, सुखिया की अम्माँ!" कहकर पुकारा, पर उसकी यह पुकार सान्ध्य-गगन में प्रतिध्वनित होकर लौट आई। पर बन्द कोठरी से जो फुफकार आ रही थी वह और तेज हो गई। अब गिरधारी पहचान गया कि यह सुखिया के सिसकने की आवाज है। वह कुछ समझ नहीं पाया कि क्या मामला है। उसने चिल्लाकर पुकारा—"सुखिया, सुखिया! क्या बात है? क्यों रो रही है?"—और उसने उस कोठरी की साँकल खोल ली।

अभी वह किवाड़ों के पल्लों को अच्छी तरह खोल भी नहीं पाया था कि पीछे से जमुना बाघ की तरह झपट कर आई, और जल्दी से फिर किवाड़ों को बंद कर साँकल चढ़ाती हुई सामने खड़ी हो गई। उसने इस काम को इतनी फुर्ती से किया कि गिरधारी निश्चेष्ट खड़ा रह गया।

उधर किवाड़ों के खुलने के कारण कोठरी के अन्दर कुछ आहट-सी हुई थी, शायद सुखिया खड़ी हो रही थी, या कौन जाने खड़ी थी, और आगे बढ़ आई थी। गिरधारी ने तो सामने एक छाया-सी देखी थी, और कुछ नहीं। फौरन किवाड़ बंद हो गया था।

गिरधारी के कुछ कहने के पहले ही जमुना गुस्से में बोली—"मर जाने दो इस कलमुंही को, इसने हमारे कुल में कारिख लगा दी।...."

गिरधारी दिन-भर का थका-मांदा था। उसने एकाएक यह जो सुना कि कारिख लगा दी, तो वह यह तो समझ नहीं पाया कि कैसे कारिख लगा दी, और क्या कारिख लगा दी, पर उसने यह समझ लिया कि कोई बहुत खराब बात हुई है, जो नहीं

होनी चाहिये थी, और उसके पैर कमजोर पड़ गये, आंखों के सामने जैसे एक अंधेरा-सा छा गया। वह धम से सामने रस्सी की बीनी हुई छोटी-सी खटोली पर बैठ गया।

पर इससे जमुना को रहम नहीं आया, बोली—"तुम्हीं ने तो यह सत्यानाश कराया, ब्याह कर देते तो सारा झगड़ा पाक हो जाता, सो नहीं भाई की फिक्र में मरे जा रहे हैं। कहते हैं कि पहले भाई का ब्याह होगा। अब लो कालिख पुत गई, कहीं के नहीं रहे। अब भाई की भी शादी न होगी, सैकड़ों निहोरे करोगे तो होगी....।" कहकर वह सिसकने लगी। उसकी आंखों से टप-टप आंसू गिर रहे थे। उधर कोठरी के अन्दर से भी रोने की आवाज आ रही थी—बहुत ही करुण, पर दबी हुई।

खटोली पर बैठकर गिरधारी कुछ सम्हल गया। ऐसी भयंकर विपत्ति उसके जीवन में कभी नहीं आई थी। वह समझ ही नहीं पा रहा था कि क्या करे। फिर उसे यह भी सन्देह हो रहा था कि शायद जो-कुछ हुआ है जमुना उसे बहुत अतिरंजित दृष्टि से ले रही है। सम्भव है मुखिया ने किसी पड़ोस के नौजवान से हँसकर बोल दिया हो, बस इसी पर जमुना ने इतना सारा कुरुक्षेत्र मचा दिया हो। अभी तो गिरधारी बिल्कुल निराशा के अतल सागर में डूब रहा था, पर इस विचार के आते ही वह अच्छी तरह सम्हल गया। उसने सोचा शायद कोई ऐसी बात न हुई हो, शायद यह जमुना का एक तरीका मात्र हो जिससे वह उस पर यह जोर डालना चाहती हो कि लड़की की शादी जल्दी कर दी जाय। यह सोचकर उसका मन फिर प्रफुल्लित हो उठा।

खटोली पर से उठते हुए उसने करीब-करीब स्वाभाविक आवाज में कहा—"तो इतना रोना-धोना काहे का है, जल्दी ही ब्याह कर दिया जायगा।"

गिरधारी की इन निश्चिन्तता-भरी बातों से मानो बारूद के ढेर में आग लग गई। जमुना कर्कश आवाज में चिल्ला उठी—"अब ब्याह करना अपने सींग का; अब उसके साथ ब्याह कौन करेगा ?"

गिरधारी का हृदय फिर धक् से हो गया। पर उसने सोचा अभी दोपहर तक जब वह एक काम से घर पर आया था, सब-कुछ ठीक था, अब इस बीच में ऐसी क्या बात हो गई जिससे अब सुखिया का ब्याह ही न हो सके। जमुना को न मालूम क्या आदत है कि हर बात में नमक-मिर्च लगाकर, तिल को ताड़ बनाकर कहती है। सुखिया उसकी अपनी ही लड़की है, पर कुछ दिनों से वह बराबर उसके पीछे पड़ी रहती है। उसे कहीं जाने-आने तो देती ही नहीं, और घर में भी उसकी बुरी गति बनाती रहती है। घर में जो मुश्किल काम हो, वह सुखिया ही करे। क्यों लड़के भी तो हैं, और एक लड़की भी तो है, पर इनसे जमुना कोई काम नहीं लेती।

गिरधारी ने अब मन ही मन निश्चय कर लिया था कि वह खुद जानेगा कि आज क्या बात हो गई। तदनुसार वह फिर उस बंद किवाड़ की ओर बढ़ा। उसने जाकर फिर साँकल खोल दी। अब की बार जमुना ने उसे मना नहीं किया।

इस समय तक सन्ध्या हो चुकी थी। दीया-बत्ती का समय निकल गया था। कम से कम उस कोठरी में कुछ सुझाई नहीं दे रहा था। उसमें कहीं कोई जंगला तो था नहीं, फिर दिखाई कैसे देता। गिरधारी ने कोठरी के अँधेरे की तरफ इकटक देखते हुए कहा—"सुखिया, सुखिया ! निकल आओ, क्या बात हुई है मुझसे बताओ।"

पर कोई बाहर नहीं आया। हां, रोने की आवाज और बढ़ गई। सिसकना विलाप में परिणत हो गया। स्पष्ट था कि सुखिया

रोते-रोते अशक्त हो गई थी, और उसकी हिचकी-सी बँध रही थी।

गिरधारी ने कोठरी के अन्दर पैर रखते हुए कहा—"सुखिया, बेटी, बाहर निकल आओ। वहां रोने से क्या होगा? बाहर निकल कर जो हुआ हो सो मुझे बताओ।..."

पर सुखिया बाहर नहीं आई। इस बीच में रामधारी हाथ-पैर धोकर भीतर आ चुका था। उसने लड़कों से इस बीच में इतना पता लगा लिया था कि जमुना ने सुखिया को मारा है, इससे अधिक कुछ नहीं मालूम हुआ। रामधारी को इससे अधिक कौतूहल भी नहीं था। मां ने लड़की को मारा, इसमें ऐसी कौन-सी अनहोनी बात थी। जरूर किसी कसूर पर मारा होगा। फिर यह पहला मौका नहीं था। जमुना ही घर का इन्तजाम करती थी। रामधारी जानता था कि लड़कों का स्वभाव है शरारत करना, और जमुना का काम है उनको ठीक करना। ठीक ही था।

पर जब उसने भीतर घुसकर देखा कि अँधेरे में लोग खड़े हैं और कोई रो रहा है, तो उसने यही उचित समझा कि ढिबरी जलावे। एक परिभाषाहीन आशंका उसके मन को छू गई। वह ढिबरी जलाकर वहां पहुँचा जहां गिरधारी खड़ा था।

ढिबरी की रोशनी में गिरधारी ने उस कोठरी में देखा तो सुखिया एक खाट पर पड़ी हुई थी, और उसके हाथ-पैर रस्सी से बँधे हुए थे जैसे चोर के बाँधे जाते हैं। सारे शरीर पर चोट के दाग थे। मुंह पर शायद कुछ खून भी लगा था।

गिरधारी ने जो अपनी प्यारी लड़की को इस दशा में पाया तो उसे बड़ा दुःख हुआ। यदि जमुना के अतिरिक्त और किसी ने सुखिया की यह दशा की होती तो इसी समय खून हो जाता। हां, यदि रामधारी भी ऐसा करता तो वह उसे माफ नहीं

करता। जमुना को भी वह क्षमा न कर सकता, यदि उसके मन में एक शंका न उठ चुकी होती। वह लपककर आगे बढ़ा, और सुखिया के हाथ-पैर की रस्सियों को खोलने लगा। सुखिया को इस हालत में देखकर रामधारी को बड़ा आश्चर्य हुआ। सुखिया तथा अन्य बच्चे कई बार मारे जाते थे, पर ऐसा तो कभी देखने में नहीं आया था कि हाथ और पैरों को रस्सी से बाँध कर डाल दिया गया-हो। वह कुछ समझ ही नहीं पा रहा था कि क्या मामला है।

जमुना कुछ बोल नहीं रही थी। वह चुपचाप पति के पीछे खड़ी थी। उसने स्वयं सुखिया की यह दुर्दशा की थी, पर उसे यह नहीं मालूम था कि उसने सुखिया को इतनी बुरी तरह मारा है, पर इस समय ढिबरी की रोशनी में सुखिया की दुर्दशा के परिणाम को देखकर भी उसके मन में कोई पश्चात्ताप की भावना नहीं आई। रामधारी भी जो कभी भी भाई और भौजाई के किये हुए काम पर सन्देह नहीं करता था, कुछ असन्तुष्ट होकर जमुना की ओर देख रहा था। बात यह है कि उसे सुखिया बहुत प्यारी थी, फिर भी देवर की इस दृष्टि के सामने जमुना जरा भी नहीं तिलमिलाई। उसे निश्चय था कि उसने जो-कुछ किया वह ठीक था।

जब गिरधारी ने रस्सियों को खोला, तो भी सुखिया खड़ी नहीं हुई। गिरधारी ने उसे पकड़कर खड़ा किया, तो वह कराहने लगी। उसके पैर में कोई सख्त चोट थी। गिरधारी ने सुखिया से पूछा—"क्या बात है बेटी, यह चोट कैसे लगी? तुम ने क्या कसूर किया था।"

सुखिया खाट पर बैठती हुई कुछ बोलने ही जा रही थी कि जमुना ने बीच में टोकते हुए कहा—"यह कलमुंही कुछ बोल भी सकती है! चुप रह।" फिर उसने देवर के हाथ से ढिबरी ले

ली, और उससे कहा—"जाओ तुम गाय-बैलों को सानी-पानी दे दो। बेचारे दिन-भर के भूखे-प्यासे होंगे।"

रामधारी ने केवल एक बार भौजाई के चेहरे की तरफ मुँह उठाकर देखा, फिर उसने गिरधारी और सुखिया की ओर देखा, इसके बाद वह चला गया। उसने इसमें कोई अस्वाभाविक बात नहीं पाई। वह जाकर बताया हुआ काम करने लगा।

गिरधारी घर के अन्दर के किसी काम में कभी नहीं बोलता था। वह जानता था कि जमुना घर का इन्तजाम बहुत अच्छी तरह करती है। पर आज जो वह इस तरह व्यवहार कर रही थी, यह उसे पसन्द नहीं आ रहा था। वह अपने धैर्य की सीमा पर पहुँच चुका था। वह कोई बहुत कड़ी बात कहने ही वाला था कि इतने में जमुना ने ढिबरी ऐसी ऊँची जगह पर रख दी कि सारी कोठरी में उजेला हो जाय। फिर उसने सुखिया को पकड़कर खटिया पर लेटाते हुए उसका पेट खोलना चाहा। सुखिया ने इसमें बाधा पहुँचाई, जमुना ने कसकर उसके सिर पर दो चपत जमाई। तब सुखिया का प्रतिरोध बन्द हुआ। जमुना ने उसका पेट खोलकर पति को दिखलाया। सुखिया ने इस बीच में कपड़े से मुंह ढक लिया था।

जमुना ने सुखिया के पेट को अच्छी तरह खोलकर कहा—"कुछ समझ रहे हो?"

"नहीं।" गिरधारी बोला उसे कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था, पर उसका मन एक भयानक आशंका से पूर्ण हो गया था।

जमुना बोली—"तुम बड़े बुद्ध हो।" फिर उसने रुककर गिरधारी के कान के पास मुंह लाकर यह समझा दिया कि सुखिया गर्भवती है।

गिरधारी मन ही मन ऐसी किसी बात की आशंका तो कर रहा था, पर यह बात इतनी भयानक थी, वह इसे तब समझ

सका जब इस प्रकार समझाया गया। इस समय तक उसका मन सुखिया के प्रति सहानुभूति से पूर्ण था, पर ज्यों ही उसने यह सुना उसका चेहरा कड़ा पड़ गया। एक ही क्षण में समाज के गुरुभार दंड का सारा रूप इसके सामने आगया। वह आतंक-ग्रस्त हो गया। अभी कई सालों की बात है, इसी गाँव में एक कुर्मी के ही घर में ऐसी बात हुई थी। इस पर उसके साथ क्या किया गया था, यह उसे स्मरण हो आया। लड़की को तो छोड़ना ही पड़ा, और बाप, भाई, घर-भर की पूरी फजीहत हुई। सैकड़ों का खर्च हुआ, फिर भी समाज में नाक कटी की कटी रह गई। गिरधारी सिहर उठा।

बाहर से रामधारी के कुट्टी काटने की आवाज आ रही थी। कितनी परिचित आवाज थी, पर गिरधारी को यह अति-परिचित आवाज भी अत्यन्त अपरिचित रूप में जैसे नींद के अन्दर से आती हुई ज्ञात होती थी। गिरधारी के पैर के नीचे से जमीन खिसक गई थी।

इस बीच में सुखिया ने पेट ढक लिया, और अब वह पिता की तरफ टुकुर-टुकुर देख रही थी। मां को तो वह देख चुकी थी, अब पिता को देखना था। उसने पिता की तरफ देखा तो वहां जैसे अपने लिये मृत्युदंड लिखा हुआ दिखलाई पड़ा। उसने सहमकर फिर मुंह ढक लिया। यह मुंह ढक लेना कोई ऐसी बात नहीं थी जो किसी भी तरह दुष्कृत्य की श्रेणी में आ सके, पर न मालूम क्या हो गया। इस बात से गिरधारी को एकाएक इतना क्रोध आया कि उसने न आव देखा न ताव, वह शेर की तरह सुखिया पर टूट पड़ा। बोला—"कलमुंही-बड़ी शर्मवाली बनती है।" और उसे खटिया से गिराकर थप्पड़, घूँसा लात से मारने लगा। इतना मारा, इतना मारा कि गिरधारी स्वयं बेदम हो गया।

जब वह मारता ही गया, मारता ही गया; रुका नही तब जमुना ने उसे हाथ पकड़ कर खींच लिया, बोली—"ठहरो; क्या मार ही डालोगे ?"

गिरधारी के सिर पर खून चढ़ा हुआ था, उसने कहा—"हाँ, इसे आज मार डालूंगा चाहे फाँसी ही हो जाय। मेरे मुंह में इस नागिन ने कालिख लगा दी।"

यह कहकर वह फिर मारने के लिये आगे बढ़ा, पर जमुना ने दृढ़ हस्तों से उसे पकड़ लिया। गिरधारी ने जमुना का हाथ जबर्दस्ती छुड़ाना चाहा; पर वह थकावट, भूख, प्यास, क्रोध से इतना कमजोर पड़ चुका था कि जमुना से अपना हाथ छुड़ा न सका। फिर भी उसने दो-तीन मिनट तक खींचा-खींची की। जब कोई नतीजा नहीं निकला, तब वह धम से उसी चारपाई पर बैठ गया जिस पर सुखिया इससे पहले पड़ी हुई थी।

गिरधारी जब कुछ शांत हुआ, तब जमुना ने उसको छोड़ दिया, और जाकर ध्यान से सुखिया को देखने लगी। बाहर से एक कठोर और अटूट कर्तव्य की तरह रामधारी के कुट्टी काटने की आवाज आ रही थी। कट-कट-कटाकट। नपी-तुली चिर-परिचित आवाज।

जमुना ने बाहर से थोड़ा-सा पानी लाकर सुखिया के चेहरे पर छींटे देना शुरू किया। सुखिया बेहोश हो गई थी, और उसका सारा बदन खिंच रहा था।

गिरधारी ने जो स्त्री की शंकित मुद्रा देखी, तो वह कुछ घबरा गया। वह चारपाई से उठकर पास आया और बोला—"मर तो नहीं गई ?" उसके स्वर में आतंक था।

"नहीं।" जमुना ने कहा। फिर बोली—"मैं सब ठीक किये लेती हूं, तुम बाहर जाओ; शायद कोई बाहर आ जाय।"

गिरधारी बाहर चला गया। आंगन की ताजी हवा से उसकी जान में जान आई; पर इन चन्द मिनटों में उसके हृदय पर जो बोझ लद गया था वह नहीं उतरा। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया त्यों-त्यों वह जैसे सारी परिस्थिति की भयंकर सम्भावनाओं को और अधिक समझता गया। और जितना ही वह परिस्थिति को समझता गया, उतना ही वह अपने को मँझधार में पाने लगा। उसके मन में यह उच्चाकांक्षा थी कि वह अपने कुल के नाम को उज्ज्वल करे, कम से कम वह चाहता था कि सेहरसिंह की तरह हो जाय। दस आदमी मानें और जानें। पर अब तो उसे इसके बदले यह दिखाई दे रहा था कि समाज के सामने वह एक अछूत-सा हो जायगा। सब उँगली उठायेंगे और हँसेंगे, और सब इस दुष्ट लड़की के कारण। वह उसे कितनी सीधी समझता था। कितने प्यार से वह उसे 'बाबा-बाबा' कहकर पुकारती थी, और उसी ने भीतर-भीतर इस प्रकार लुटिया डुबो दी। हाय, अब वह कहीं का नहीं रहा। उसे बहुत अफसोस हो रहा था।

वह टहलते-टहलते उस जगह पर पहुँचा जहां रामधारी शायद भंग के नशे में कुट्टी काटता चला जा रहा था। उसने देखा कि रामधारी ने सब गाय तथा बैलों को यथारीति बाँधकर सानी-पानी दे दिया था। गायें तथा बैल बड़े मजे में अपना-अपना चारा खा रहे थे। बीच-बीच में नाँद से मुंह उठाकर फों-फों की सी आवाज़ करते थे, कुछ चबाते थे, फिर नाँद में मुंह डालकर खाने लगते थे।

गिरधारी ने पीछे से रामधारी को देखा। रामधारी का बलिष्ठ दाहिना हाथ एक नियमित इकरसता के साथ उठता और गिरता जाता था। और बायां हाथ कुट्टी को आगे ढकेलता जाता था। अथक रूप से, अनवरत। गिरधारी ने भाई को देखा और

उसकी निश्चिन्तता देखी, और उसे न मालूम क्यों यह अच्छी नहीं मालूम हुई। उसे इस समय यह भी याद आया कि रामधारी का ब्याह पहले हो या सुखिया का, इसी उधेड़-बुन में उसने दो साल टाल दिये थे। इसी पशोपेश के कारण ही उसने बहुत सोचने के बाद मन ही मन यह तय किया था कि दोनों की शादी लगभग एक साथ करेगा। उसने अपना यह फैसला न जमुना को बतलाया था न रामधारी को। वह एकाएक सबको आश्चर्य में डालना चाहता था।

पर वह तो खुद ही एक भयंकर आश्चर्य का शिकार हो गया था। इसी भाई के प्रति प्रेम के कारण उसने जमुना की बात नहीं मानी थी। जो नतीजा हुआ, वह तो सामने आ गया। उसे बड़ा पश्चात्ताप हो रहा था। यदि भाई के मोह में न पड़कर वह जमुना की बात सुनता, तो यह नौबत नहीं आती।

उसने कर्कश आवाज में रामधारी को पुकारा—"रमधरिया, रमधरिया!"

पर कोई उत्तर नहीं मिला। रामधारी मगन होकर कुट्टी काटता जा रहा था। जैसे इस काम की सामंजस्यपूर्ण आवाज में वह बहा जा रहा था। कट-कट-कटाकट। उसके हाथ इतनी आसानी से अपना काम कर रहे थे कि मालूम होता था कि उसे श्रम नहीं हो रहा है। मानो यह भी कोई आनन्द का तरीका हो।

गिरधारी ने अब पहले से कर्कश स्वर में कहा—"रामधारी, क्या हो रहा है? क्या आज ही सब कुट्टी काट डालोगे?"

इतनी देर में रामधारी का ध्यान पीछे खड़े गिरधारी की ओर गया। उसने अपना काम बन्द कर दिया और खड़ा हो गया। बोला—"तुम कुछ कह रहे थे भैया?"

वही मधुर 'भैया' शब्द? गिरधारी एक क्षण तक चुप रहा।

उसे अब समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह क्यों एकाएक रामधारी पर नाराज हो गया था। यदि सुखिया बिगड़ गई तो इसमें रामधारी का क्या कसूर था ? रामधारी ने तो एक दफे भी यह नहीं कहा था कि सुखिया का ब्याह बाद को होगा, मेरा पहले हो जाय ! भैया-भैया शब्द से गिरधारी का हृदय विगलित हो गया, पर भीतर का वह भार तो बना ही था। हाय वह भार यदि किसी तरह उतर जाता। जमुना आकर कहती कि एक भयंकर गलती हो गई, पेट नहीं है। पर यह कहां हो सकता है ? गिरधारी ने नरम लहजे में कहा —"जरा समझदारी से काम लो। कुट्टी छोड़कर दूध दुह डालो। आज गायें दुही नहीं गई हैं।"

"हां—!" कहकर रामधारी दूहने की तैयारी में चल पड़ा। उसे यह समझ में ही नहीं आ रहा था कि इतनी सीधी-सी बात उसकी समझ में क्यों न आई थी। कुट्टी काटना छोड़कर उसे दूध दुहना चाहिये था।"

तीन

सुखिया की घटना से जमुना उतनी नहीं घबराई थी जितना कि गिरधारी घबराया था। रामधारी को इसका कुछ पता ही नहीं लगा। उसने समझा जैसे सैकड़ों दफे घर में झगड़े-बखेड़े हुआ करते हैं, वैसे ही अब भी हुआ होगा। वह ब्योरे में दिलचस्पी नहीं रखता था।

गिरधारी ने घबराकर जमुना से पूछा—"अब क्या होगा?" उसे कुछ उपाय ही नहीं सूझ पड़ता था। एक उपाय था, सुखिया को मार डालना; पर गिरधारी में यह हिम्मत नहीं थी। हजार कसूरवार हो, औरत जाति है, फिर लड़की है।

प्रश्न के उत्तर में जमुना ने कहा—"घबड़ाओ मत, सब ठीक कर लूंगी।"

गिरधारी ने ध्यान से जमुना के चेहरे को देखा। क्या वह अपनी शक्तियों के सम्बन्ध में कुछ बेजा तखमीना नहीं लगा रही थी। उसके जी में आया कि वह पूछे कि कैसे, पर उसने न पूछना ही उचित समझा।

जमुना ने सिर्फ इतना कहा—"इस बीच में कोई जान न पाये, बस यही है।"

गिरधारी को यह भी बहुत मुश्किल मालूम हुआ। ऐसा कैसे हो सकता था कि इसी गांव में रहा जाय और कोई कुछ न जाने। जमुना ने इसका भी हल निकाला। बोली—"बस इसे दिन-रात बन्द रखूंगी, कहीं जाने-आने नहीं पायेगी।"

एक प्रश्न गिरधारी की जीभ पर आया, पर वह कुछ बोला नहीं।

इसके बाद जो हुआ उसका संक्षिप्त विवरण यह है कि सुखिया दिन-रात नजरबंद रखी जाने लगी। कोई पूछता तो जमुना कह देती बीमार है। बीमार वह एक अर्थ में थी ही, क्योंकि एक तो उसे उलटी बहुत आती थी, तिस पर मार के कारण उससे उठा नहीं जाता था। इस बीच में जमुना ने अपनी सारी हकीमी उस पर खर्च कर डाली। कहीं पुराना गुड़ आया तो कहीं और अज्ञात जड़ी बूटियां आईं, कहीं मालिश हुई तो कहीं और कुछ हुआ, पर कुछ नतीजा नहीं निकला। सुखिया पर सारा स्त्री-विज्ञान विफल गया।

अन्त में उसने हारकर गिरधारी से कहा—"मेरे किये अब कुछ न होगा, मैं अब कुछ नहीं कर सकती!" फिर उसने उन सारी बातों का वर्णन किया, जो उसने किया था।

अब तो पति-पत्नी दोनों आफत में पड़ गये। तो क्या लड़की की हत्या ही करनी पड़ेगी? यही अपत्य स्नेह है। समाज के डर के आगे न कोई स्नेह है न प्रेम। दोनों परामर्श करने लगे कि अब क्या हो। इस समय यदि सुखिया एकाएक किसी भयंकर रोग से मर जाती तो उसके बाप और मां से बढ़कर सुखी जीव दुनिया में कोई न होते।

दोनों बड़ी देर तक दिमाग लड़ाते रहे पर जब कोई उपाय

नहीं निकला तो दोनों बहुत घबराये। गिरधारी को इतना भारी अफसोस हुआ कि उसने खेत में जाना भी छोड़ दिया। रामधारी ही बाहर के सब काम सम्हलाने लगा। उधर जमुना भी घर के काम-काज में अवहेलना करने लगी। इस प्रकार भीतर का भी बहुत-कुछ काम रामधारी के ऊपर आ गया। रामधारी ने इसकी कोई विशेष परवाह न की, पहले वह कभी-कभी भंग खाता था, उसने अब भंग जल्दी-जल्दी खाना शुरू किया। पहले फुर्सत के दिन चख लेता था, पर अब जब-तब खूब चढ़ाने लगा।

सुखिया की सब चोटें अच्छी हो गयी थीं। अब वह दिन-रात जमुना की देख-रेख में रहती थी। जमुना ने तब से उसे मारा तो नहीं, पर उसे रोज जब देखो तब कोसा करती थी। सुखिया का जीवन बिल्कुल असहनीय हो रहा था, पर वह मौन पशु की तरह सब ज्यादतियों को सहती थी। उसका जो पैर फिसल गया था, उसमें भी उसका हाथ नहीं था। उसे केहर-सिंह का चेहरा अच्छा लगता था, इसलिये वह उससे कभी-कभी बोल-बतला लेती थी। वह यह नहीं जानती थी कि इस बोलने-बतलाने का नतीजा यहां तक पहुंचेगा। उसको किसी ने इस किस्म की कोई शिक्षा नहीं दी थी कि यहां तक ठीक है, और इससे आगे ठीक नहीं। उसे लड़कपन से जो शिक्षा दी गयी थी, उसमें तो सभी कुछ मना किया गया था। वह अपने मन में बहुत पछताती थी, पर पछताने से क्या होता था, उसके गर्भ में बच्चा बढ़ता ही जा रहा था।

जब इस प्रकार कुछ समय और भी बीत गया, तो एक दिन गिरधारी किसी दूसरे गांव से लौटकर जमुना को ऐसे पुकारने लगा जैसे कोई बहुत भारी जरूरत हो। जमुना पुकार सुनकर यही समझी कि कोई और नयी आफत खड़ी हो गयी है। वह डरी भागी आयी, बोली—"क्या ?"

गिरधारी ने अनुप्राणित की तरह जोश में आते हुए कहा—"चलो बताता हूं।"

जमुना समझ नहीं पायी कि क्या बात है, पर इतना तो समझ गयी कि कोई नयी आफत नहीं है। इसी को उसने एक बहुत बड़ी न्यामत समझा, और पति ने जिधर बताया, उधर जाकर खड़ी हो गयी। फिर दोनों चुपचाप परामर्श करने लगे।

बिना किसी भूमिका के ही गिरधारी ने कहा—"एक तरकीब है।...."

"काहे की तरकीब ?" जमुना ने पूछा।

गिरधारी ने स्वर को और भी नीचा करते हुए और चारों तरफ अच्छी तरह देख लेते हुए कहा—"काशीजी चला जाय।"

"क्यों ?" कारण न समझ पाकर जमुना ने पूछा।

"सुना है कि बहुत जल्दी ही ग्रहण लगनेवाला है, इस मौके पर काशीजी में लाखों की भीड़ होती है। वहां सुखिया को ले जाकर छोड़ दिया जाय।

गिरधारी ने सोचा था कि इस तरकीब की बात को सुनकर जमुना बहुत खुश होगी, पर उसने कहा—"छोड़ देने से क्या होगा ? वह किसी बदमाश के हाथ लग जाय तो ?"

गिरधारी ने यहीं तक सोचा था कि सुखिया को काशीजी में छोड़ आने में उससे छुटकारा मिल जायगा, पर इसके आगे सुखिया की क्या गति होगी, इसे उसने नहीं सोचा था। पत्नी की बातों से वह एकाएक सहम गया; पर सुखिया से छुटकारा पाने के लिए वह इतना लालायित था कि उसने कहा—"पर यह मार डालने से तो अच्छा ही है।"

"हां।" जमुना ने अन्यमनस्क होकर कहा, फिर भी उसे यह तरकीब अच्छी नहीं जँची। न मालूम क्यों उसके मन ने

इस पर गवाही नहीं दी। बोली—"और कोई तरकीब नहीं हो सकती ?"

गिरधारी ने विद्रोह बल्कि नाराजगी के लहजे में कहा—"नहीं, लेकिन मुझे अब दोष न देना, मैं इससे आगे कुछ सोच नहीं सकता !"

फिर गिरधारी ने मानो अपने तर्क को जोर पहुँचाने के लिये कहा - "आज मैं पास के एक गांव में गया था। वहां मालूम हुआ कि वहां की एक लड़की की भी यही हालत हुई थी, तब उसके घरवाले उसे काशी ले जाकर छोड़ आये, और लौटकर लोगों से कह दिया कि ताऊन में मर गयी।"

जमुना ने कहा—"तो सब लोग इस बात को जब जान ही गये तो फिर इज्जत कहां बची ? लोग तो यह जान ही गये कि फलाने के घर में ऐसा हुआ था और उसे इस तरह छोड़ आये।"

गिरधारी तो आज अनुप्राणित-सा हो रहा था, उसने अनुप्राणित की तरह दार्शनिक रूप से कड़वी हँसी हँसते हुए कहा—"यहां जानने से कुछ बिगड़ता थोड़े ही है, रंगे हाथों पकड़े जाने से ही हेठी होती है। और कोई बात नहीं। नहीं तो गांववालों से कुछ छिपता थोड़े ही है। बस पकड़ा न जाय। पकड़ गये तो बस बिरादरी की तरफ से दण्ड पड़ा और आफत आयी।"

जमुना ने पति के इन जोशीले वाक्यों को शायद नहीं सुना, बोली—"फिर उस लड़की का क्या हुआ ?"

गिरधारी ने कहा—"क्या हुआ क्या पता ? जैसी तकदीर रही होगी, वैसा हुआ होगा।" फिर जैसे अपने ही को सम्बोधित कर बोला— "माँ-बाप ने उसे ढंग से पाला-पोसा था कि बाद को चलकर शादी वगैरह होगी, पर उसने अपने हाथ से तकदीर बिगाड़ ली, तो मां-बाप क्या करते ? उन लोगों ने ले जाकर उसे छोड़ दिया। अब जैसे तकदीर का लिखा होगा, वैसा हुआ

होगा। यदि तकदीर अच्छी रही होगी तो किसी धर्मात्मा के हाथ पड़ी होगी, और उसने उसे नौकरानी वगैरह बनाकर रख लिया होगा। यदि तकदीर खराब रही होगी, तो किसी बदमाश के पाले पड़ी होगी। फिर जैसे सारे वक्तव्य का सारांश बताते हुए बोला—"जिसको जैसी तकदीर है, वैसा होगा, इसमें कौन क्या कर सकता है ?"

पति-पत्नी में काफी देर तक इस विषय में बातचीत हुई। जब उनको इसके अलावा कोई उपाय ही न सूझा तो जमुना ने भी इसमें सम्मति दे दी। बोला—"तकदीर में ऐसा ही लिखा है तो कौन क्या करे ?" जमुना ने भी आखिर तकदीर की काली शक्ति के सामने घुटने टेक दिये। काशीजी में अकेली सुखिया पर क्या गुजरेगी, इस बात की चिन्ता को उसने जबर्दस्ती मन के सामने से हटा दिया। भाग्यवाद विचार-शक्ति के लिये उत्तेजक नहीं है, बल्कि यह विचार-शक्ति का शत्रु है।

अब जब यह तय हो गया कि सुखिया को काशीजी में छोड़ आया जाय, तो अब यह प्रश्न तय करना रहा कि यह कैसे हो, और कौन-कौन उसके साथ जाय। जमुना ने कहा—"मुझसे नहीं जाया जायगा। कुछ भी हो अपनी ही लड़की है, मैं उसे इस तरह छोड़ नहीं आ सकती।"

गिरधारी ने भी कहा—"तुम से नहीं होगा तो यहां मुझसे ही कब होगा। यह तो पूरा कसाई का काम है। मैं तो ऐसा कभी नहीं कर सकता। इससे तो मुझे उसे मार डालना आसान मालूम होता है। मारकर नदी में बहा दूंगा, यह मुझसे हो सकता है, पर लड़की को ले जाकर छोड़ दूं और वह किसी बदमाश के पाले पड़े,—अरे बाप रे! मैं इस विचार को सह ही नहीं सकता।"

पति-पत्नी दोनों में से कोई भी इस यात्रा के लिए राजी

नहीं हुआ। एक बार गिरधारी ने अलबत्ता यह कहा कि अगर दोनों चलें तो शायद हो जाय, पर जमुना किसी भी प्रकार जाने के लिये राजी नहीं हुई।

इसलिये यह तय हुआ कि रामधारी सुखिया को अपने साथ काशीजी ले जाय, और वहां छोड़कर चला आये। रामधारी को अब तक पूरी बात का पता नहीं था। जान-बूझकर जमुना ने उससे पूरी बात नहीं बताई थी। कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें अपने निकटतम से भी कहने की इच्छा नहीं होती। सुखिया का रहस्य ऐसा ही रहस्य था। रामधारी यही जानता था कि सुखिया को कोई ऐसा रोग हो गया था, जिसे वह नहीं समझता था। इससे आगे न तो किसी ने उसे कुछ बताया था और न उसको कुछ कौतूहल ही था। इधर कामों का बोझ इतना बढ़ गया था कि उसे इन सब झमेलों के विषय में सोचने की फुर्सत नहीं थी।

चार

जब रामधारी को गिरधारी ने एकाएक कहा कि तुम्हें काशी-जी जाना है, तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने स्वप्न में भी कभी काशी जाने की कल्पना नहीं की थी। वह तो चार-छः गांव दूर पर जो हाट लगता था, उसके आगे भी कहीं नहीं गया था। वह हक्का-बक्का हो गया, बोला—"क्यों?"

भाई की किसी बात पर क्यों पूछना उसके स्वभाव में नहीं था, पर काशी जानेवाली बात इतनी अजीब थी कि उसके मुंह से यह प्रश्न स्वतः निकल गया। घर और गांव से निकलते हुए उसे कुछ डर-सा भी लगता था, इसलिये भी उसने यह प्रश्न किया था।

गिरधारी कुछ हिचकिचाया, पर वह तो तय करके ही आया था। उसने संक्षेप में सब बात बता दी। रामधारी ने जो सारी बातें सुन लीं, तो उसने अस्पष्ट तरीके से इतना तो समझ लिया कि सुखिया का यहां पर रहना परिवार के हित के लिये घातक है, पर यह उसकी समझ में नहीं आया कि वह कैसे काशीजी

जायगा, और यदि जैसा कि गिरधारी ने बताया कि रेल पर बैठते ही वह काशी पहुंच जायगा, तो वहां पहुंच कर वह कैसे मुखिया से अपना पिंड छुड़ायेगा, यह समझ में नहीं आ रहा था। यदि खेती तथा गृहस्थी-सम्बन्धी कोई कठिन से कठिन काम होता तो वह उसे करना स्वीकार कर लेता, चाहे उसमें रात ही जागनी पड़ती। फिर उसे कुछ विवेक के दंशन का भी अनुभव हो रहा था। उसके दिमाग में विचार इतनी तेजी से दौड़ रहे थे कि ऐसे कभी नहीं दौड़े। इधर बिरादरी का भय था, तो उधर पुलिस, रेल तथा बदमाशों का डर। एक वज्र देहाती को एकाएक शहर में जाकर डकैती करने के लिये कहा जाय तो जैसी मानसिक हालत होगी, रामधारी की मानसिक हालत वैसी ही हुई।

गिरधारी ने उसको सारी योजना ऐसे समझायी मानो उसने यह काम बहुत दफे किया हो, और अपने तजर्बे से सारी बात बता रहा हो। असल में गिरधारी खुद बहुत घबराया हुआ था। घबराहट कभी-कभी बाह्य रूप से ऐसा शान्त रूप अख्तियार करती है कि घबराया हुआ व्यक्ति बिल्कुल स्थिर तथा शान्त मालूम देता है।

गिरधारी ने कहा—"ग्रहण नहाने के लिये काशीजी में लाखों की भीड़ होती है, तुम उसे लेकर भीड़ में जाना, वहां पर उसका हाथ छोड़ देना, और फिर लौट आना।"

गिरधारी की बातों से मालूम हो रहा था जैसे काम बहुत ही आसान हो, पर रामधारी को यह सारा काम एक पहाड़-सा मालूम हो रहा था। उसकी समझ ही में नहीं आ रहा था कि इतनी भीड़ कैसे हो सकती है कि हाथ छोड़ दे तो पता न लगे। उसे कुछ अजीब हिचकिचाहट मालूम हो रही थी, फिर भी वह राजी हो गया।

यात्रा की तैयारी होने लगी। तैयारी क्या होनी थी, कोई

खास सामान तो लेना नहीं था, जाना था और काम करके लौट आना था।

जिस समय सुखिया से कहा गया कि तुम्हें चाचा के साथ रेल पर जाना है, उस समय उसने कुछ प्रतिवाद नहीं किया। वह मानो इसी दिन की प्रतीक्षा कर रही थी। खबर सुनते ही उसे एक ऐसी भावना हुई, जैसे एकाएक किसी ने उसका गला घोंट दिया हो; पर वह कुछ बोली नहीं। जब से उसका रहस्य खुल गया था, तब से उसके साथ जैसा शत्रुतापूर्ण व्यवहार हो रहा था, उठते-बैठते जैसे वह कोसी तथा डांटी जाती थी, यहां तक कि छोटे भाई-बहन भी एक अज्ञात भय से परिचालित होकर उसे एक कोढ़ी की तरह दूर रखते थे, उससे उसे अब इस घर के प्रति कोई मोह नहीं था। फिर भी उसने तो जीवन में इस घर के अतिरिक्त कुछ जाना नहीं। केहरसिंह ? उसका तो कोई पता नहीं था। और वह शायद पता भी पाता तो कुछ कर नहीं सकता था। इस प्रकार उसके सामने जिधर देखो उधर अँधेरा ही अँधेरा था। भयंकर निरवच्छिन्न अन्धकार।

फिर भी अनिश्चय का भय तो था ही। पता नहीं चाचा उसे कहां ले जा रहा है। क्या उद्देश्य है ? जो वह कहीं सुनसान में ले जाकर गला घोंट दे तो। औरों की तरह चाचा ने उससे कुछ कहा नहीं है, न डांटा है न गालियां दी हैं; पर वह बदल गया है इसमें सन्देह नहीं। जब कभी आंखें चार हो जाती हैं तो आंखें फेर लेता है। पहले कितना अच्छा था ? वह भी तो इसी घर का है, वह कैसे सबसे अलग जा सकता है ?

सुखिया को बड़ा भय होने लगा, पर वह जानती थी कि जाना ही पड़ेगा। फांसीवाले को भी तो डर लगता है, पर फिर भी उसे फांसी के तख्ते की ओर जाना पड़ता है। मजबूरी के सामने क्या किया जाय ?

एक दिन रात के अन्धकार में अपने घर की बैलगाड़ी पर रामधारी, गिरधारी और सुखिया रवाना हो गये। जिस समय सुखिया बैलगाड़ी पर चढ़ी उस समय न तो जमुना ही आयी, और न अन्य भाई-बहन आये। भाई-बहिन तो सो गये होंगे, पर जमुना नहीं आयी; इससे सुखिया के मन में अजीब भावना हुई। यद्यपि गत कई महीनों में जमुना ने उसके साथ जो व्यवहार किये थे, वे इतने खराब थे कि कभी भुलाये नहीं जा सकते, पर फिर भी जब जमुना नहीं आयी तो सुखिया की आंखों के सामने जैसे एक अजीब परदा-सा पड़ गया जिसके कारण उसे न तो अपना भूतकाल ही दिखायी पड़ा, न वर्तमान। भविष्य की तो कोई बात ही नहीं थी। वह तो अँधेरा था ही।

रामधारी गाड़ी हाँक रहा था। चांदनी रात थी, पर कितनी भयंकर। कोई नहीं बोल रहा था। केवल रामधारी बीच-बीच में बैलों से कुछ कहता जाता था। कुछ अस्फुट शब्द, मनुष्य की भाषा में जिनके कोई अर्थ नहीं होते। पर बैल शायद उन्हें समझते हैं। इसलिये गाड़ी आगे बढ़ती जा रही थी। यों तो यह गाड़ी परिचित थी पर आज न मालूम क्या सोचकर गाड़ी पर कुछ परदा-सा कर दिया गया था। शायद गिरधारी चाहता था कि चांद को भी लड़की के अपराध की बात ज्ञात न हो।

तीनों अपने-अपने विचारों में डूबे हुए थे। गिरधारी एक तरफ तो ज्यों-ज्यों गाड़ी आगे बढ़ रही थी, त्यों-त्यों मुक्ति के आनन्द से विह्वल-सा हो रहा था, एक बड़ा भारी बोझ उसके हृदय पर से उतर रहा था; पर वह दूसरी तरफ बहुत दुःख में था। रह-रहकर उसके हृदय में एक हूक-सी उठ रही थी। ओह, इतने सालों का प्यार अब समाप्त होने जा रहा था। पर क्या किया जाय? उसने अपने को समझाया कि वह मजबूर था।

रामधारी ने आज भंग का एक अच्छा-सा गोला चढ़ा लिया

था, उसे कुछ अधिक अफसोस नहीं, था पर भंग की उत्तेजना के बावजूद वह भीतर-भीतर घबरा रहा था। उसे ऐसा मालूम हो रहा था कि भैया जिला वगैरह में जाते रहते हैं, उन्हें ही काशी जाना चाहिए था। वह तो कभी जिले में भी नहीं गया। अब उस पर यह भयंकर काम आ पड़ा।

गाड़ी दो-तीन घंटे में स्टेशन पहुँच गयी। बात यह है कि उन्होंने पासवाला स्टेशन छोड़ दिया था। वे दो स्टेशन आगे चलकर गाड़ी पकड़ना चाहते थे। जब रामधारी और सुखिया को छोड़कर गिरधारी बैलगाड़ी लेकर जाने के लिये तैयार हुआ तो सुखिया की इच्छा हुई कि वह बाप के पैरों पर गिर पड़े, वह इसके लिये आगे भी बढ़ी, बाप से उसकी आंखें चार भी हुईं, पर बाप की दृष्टि में कोई ऐसी बात थी जिसके कारण वह पथरा कर खड़ी रह गयी। आगे नहीं बढ़ी। एक महान् स्नेह का इस तरह अन्त हुआ। बिदाई के समय पिता-पुत्री में एक भी बात नहीं हुई। अभी रेल की देर थी; पर गिरधारी ठहरा नहीं, रामधारी को अलग से सब समझा कर रुपये देकर वह जल्दी से चला गया। वह यहाँ अधिक देर तक रुकना नहीं चाहता था।

रामधारी और सुखिया यथासमय रेल पर चढ़कर काशीजी के लिये रवाना हो गये। न तो रामधारी ही कभी रेल पर चढ़ा था, और न सुखिया ही। रामधारी तो एक बार पास के एक स्टेशन में आकर रेल देख गया था, पर सुखिया ने तो रेल देखी भी नहीं थी। सुखिया जिस समय रेल पर चढ़ी तो उसे कुछ भय मालूम हुआ, पर जब उसने अपनी चारों तरफ आदमियों को बैठे हुए देखा तो उसे कुछ इत्मीनान हुआ। यहाँ तक कि एक क्षण के लिए कुछ कौतुक और हर्ष भी मालूम हुआ। आखिर वह एक बच्ची ही थी। उसने समाज के विरुद्ध बचपन में आकर अपनी अनजान में एक अपराध कर डाला था, पर

इस कारण उसके बचपन में फर्क थोड़े ही आया था। रेल के नयेपन के अतिरिक्त घर के दम घुटा देनेवाले वातावरण से मुक्ति का भी आनन्द कुछ कम नहीं था। बैलगाड़ी में बैठे-बैठे उसे जो यह भय हो रहा था कि शायद ये लोग उसे मारने ले जा रहे हैं, अब रेल में इतने आदमियों के साथ बैठकर वह भय भी जाता रहा था। रामधारी इतने आदमियों में उसे थोड़े ही मार सकता था।

वह टकटकी बाँधकर कभी रेल की बत्ती की ओर, तो कभी मुसाफिरों की ओर देखती रही। उसे नहीं मालूम था कि दुनिया में इतनी तरह के आदमी, और इतने तरह के कपड़े होते हैं। डब्बे में कुछ स्त्रियाँ भी थीं। सुखिया ने इनकी तरफ देखा और उसे और भी इत्मीनान हुआ। वह जिस अवस्था में थी उसमें मुहूर्त्त का इत्मीनान ही बहुत बड़ी चीज है। ऐसी परिस्थितियों में आगे की, भविष्य की बात कौन सोचता है। भविष्य की बात न सोचने में ही भलाई है। सुखिया को स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी कि चाचा उसे एक अपरिचित स्थान में छोड़ने के लिये जा रहा है, जैसे लोग बिल्ली को छोड़ आते हैं। उसे बस एक ही भय था, मृत्यु का भय। वह भी इसलिए उत्पन्न हुआ था कि जमुना ने उसे बार-बार धमकाया था कि तुझे मार डालूँगी, और मारकर नदी में डाल दूँगी।

गाड़ी पर के सब यात्री मौका आने पर या तो सो गये या ऊँघने लगे। जो जैसे था वह वैसे ही ऊँघने लगा, यहाँ तक कि रामधारी भी बैठे-बैठे ऊँघने लगा। थोड़ी देर में उसकेखर्राटों की आवाज भी दूसरेखर्राटों की आवाज में मिल गयी; पर सुखिया को नींद नहीं आ रही थी। उसके मन में इस समय इतनी तरह के विचार तथा भावनाएँ उठ रही थीं कि नींद की कोई गुंजाइश नहीं थी। रेल की कर्कश कट-कट आवाज उसे मानो किसी अज्ञात

भयों से पूर्ण भविष्य के सम्बन्ध में चेतावनी दे रही थी। वह खुले हुए जंगले से बाहर की चाँदनी की ओर देख रही थी: पर उसे सब अर्थहीन मालूम हो रहा था। वह, गाँव की अनपढ़ किसान लड़की थी, पर चाँदनी का वह भी अपने ढंग से उपभोग तथा प्रशंसा करती थी, किन्तु आज यह चाँदनी और उसकी स्वर्गीय मधुरता उसे अनर्थक मालूम हो रही थी। उसके निकट इस समय एक ही सत्य था, वह था उसका जाना। कट-कट-कट-कट। यही कट-कट उसके लिये एकमात्र सत्य था। वह कहीं जा रही है स्वप्नमय चाँदनी के साम्राज्य को प्रबल वेग से चीरती हुई, जो कुछ भी प्रिय और परिचित है, उससे दूर, बहुत दूर जा रही थी। कहां जा रही थी, इसका उसे कुछ पता नहीं था। कट-कट-कट-कट।

बीच-बीच में गाड़ी स्टेशनों पर रुक रही थी, यात्रियों की भीड़ दिखायी पड़ रही थी। सब लोग उतावले, व्यग्र, व्यस्त मालूम पड़ रहे थे। जो उतर रहे थे, वे भी, और जो चढ़ रहे थे, वे भी। भला इन लोगों को काहे की इतनी जल्दी है, क्यों ये जा रहे हैं, कहाँ जा रहे हैं। उसे तो कहीं जाने की इच्छा नहीं थी, फिर भी वह जा रही है। वह इनको समझ नहीं पा रही थी।

सामने के बेंच पर उसी की उम्र की एक स्त्री थी। वह ऊँघ रही थी। बगल के एक आदमी पर उसके सारे शरीर का भार पड़ रहा था, पर वह आदमी कुछ नहीं कह रहा था, बल्कि ऐसा मालूम होता था कि इस बोझ के कारण वह अपनी ऊँघ के अन्दर से मुस्करा रहा है। उस स्त्री के भी चेहरे पर एक मन्द मुस्कान है। शायद ये लोग पति-पत्नी हैं। स्त्री के माथे पर सिंदूर है। शायद क्यों जरूर ही पति-पत्नी हैं। वह भी इसी प्रकार होती। सोचकर उसे बड़ा दुःख हुआ। दुःख हो या न हो, वह तो चली जा रही थी। गाड़ी एक दैत्य की तरह

दौड़ रही थी, कट-कट-कट-कट....

इतने में रामधारी एक बार ऊँघ से जगा, फिर बगल में सुखिया को देखकर फिर ऊँघने लगा। न मालूम क्यों जिस समय रामधारी ने सुखिया की तरफ देखा, उस समय सुखिया को यह इच्छा हुई कि वह ऐसा चेहरा बनाये मानो वह भी ऊँघ रही है, जगी नहीं है। सुखिया के मन में यह इच्छा क्यों हुई, वह उसकी समझ में नहीं आया, पर उसने ऐसा किया, इसमें सन्देह नहीं। रामधारी ने देखा कि सुखिया भी निश्चिन्त होकर ऊँघ रही है, बस वह फिर ऊँघने लगा।

इसी प्रकार सुखिया अपने विचारों में तल्लीन जगती रही, और रामधारी बीच-बीच में उसे कनखी से देख लेता रहा। गाड़ी पर बैठकर सुखिया के मन में जो निश्चिन्तता-सी आई थी, वह रामधारी की इन दृष्टियों से सम्पूर्ण रूप से नष्ट हो गयी। ज्यों-ज्यों गाड़ी आगे बढ़ती गयी, ज्यों-ज्यों रात अधिक होती गयी, त्यों-त्यों सुखिया के मन में किसी एक अज्ञात भय की फिर से उत्पत्ति होने लगी। उसके मन की हालत फिर वैसे ही गयी, जैसे बैलगाड़ी में बैठकर हुई थी। इतनी अच्छी रोशनी, उसके लिये रेल की यह रोशनी बहुत ही अच्छी थी, इतनी भीड़ के बावजूद उसे भय मालूम होने लगा। उसे ऐसा मालूम होने लगा कि यह रोशनी तथा यह भीड़ निरर्थक है, उसे कोई नहीं बचा सकता। वह तो सम्पूर्ण रूप से अपने चाचा के वश में है। और चाचा से उसे डर मालूम हो रहा था। इतना डर जितना कि कभी किसी से मालूम नहीं हुआ।

भय को दूर करने के लिये उसने पूरी आंखें खोल दीं, और डब्बे के सब मुसाफिरों को ध्यान से देखने लगी। सभी मुसाफिर सो रहे थे, सो नहीं रहे थे तो ऊँघ रहे थे, ऊँघ नहीं रहे थे तो आँखें बंद किये हुए थे। जो-जो मुसाफिर अभी-अभी स्टेशन

पर चढ़े थे, वे जरूर कुछ हिल-डुल रहे थे, क्योंकि उन्हें बेंच पर जगह नहीं मिली थी। वे अपनी गठरी या बिस्तरे पर बैठे हुए थे। इनको देखकर सुखिया को कुछ तसल्ली हुई। भय के समय सोते हुए आदमियों को देखकर और भी भय लगता है। ऐसे समय में जागे हुए लोगों का दृश्य हिम्मत बँधानेवाला होता है।

सुखिया उन मुसाफिरों की तरफ सतृष्ण नेत्रों से देखने लगी, मानो वे उसके त्राता हों। पर वे भी देखते ही देखते गाड़ी की लकड़ीवाली दीवार से उठंगकर सोने-से लगे। एक आदमी का मुंह कुछ खुल गया, और उसके गन्दे तथा मैले दाँत दिखाई देने लगे। उसे देखकर सुखिया को मुर्दे की याद आयी। सुखिया ने जीवन में दो ही चार मुर्दे देखे थे, उनमें से दो के मुंह इसी तरह खुल गये थे। हाँ, उसे खूब याद है। एक तो उसके पड़ोस का बूढ़ा था, और एक उसकी बिरादरी का ही एक आदमी था। इन मुर्दों को देखकर कई-कई दिनों तक सुखिया को संध्या-समय से ही डर लगने लगता था। दिन में अँधेरी जगह पर जाते हुए भी डर लगता था।

रेल अपनी अबाध गति से कट-कट करती चली जा रही थी। सुखिया को डर लग रहा था। उसे इच्छा हो रही थी कि चिल्लाकर सब मुसाफिरों को जगा दे। पर वह चिल्लाई नहीं, सिटपिटा कर गुमसुम बैठी रही। मन ही मन यह चाहती रही कि कोई स्टेशन आ जाय तो गाड़ी रुके, और कोई जाय और कोई आये। इस प्रकार यह मरघटवाली शांति तो दूर हो। सुखिया आज ही पहली बार रेल पर चढ़ी थी—पर कुछ घंटों में ही उसने समझ लिया था कि बीच-बीच में स्टेशन होते हैं, उनमें गाड़ी रुकती है, मुसाफिर उतरते चढ़ते हैं। वह मन ही मन चाहने लगी कि स्टेशन आ जाय।

इतने में रामधारी ने फिर एक बार आंख खोली। रामधारी

खेत पर पहरा देने का आदी था। कैसे सोकर भी बीच-बीच में जगा जाता है, इसका उसे अच्छी तरह अभ्यास था। उसने आंखें खोलकर जो देखा कि सुखिया ठीक मौजूद है, तो वह फिर आंखें बन्द करने जा रहा था कि सुखिया बोली—"चाचा, तबियत खराब मालूम हो रही है।........" उसे और कुछ कहने की हिम्मत नहीं हुई।

वह जब से बैलगाड़ी पर चढ़ी थी तब से यह पहला ही मौका था जब सुखिया ने इस तरह बात करने की हिम्मत की थी। रामधारी ने दो-एक बात इस किस्म की जरूर कह दी थी कि इधर चलो, आओ, मेरे साथ आओ, यहाँ बैठो; यानी वे बातें जो एक साथ चलने के लिये बहुत जरूरी थीं। इससे एक शब्द भी अधिक नहीं। इसलिये जब सुखिया ने यह बात कही, तो रामधारी कुछ घबरा-सा गया। वह जमुहाई लेकर सँभल कर बैठ गया, फिर एक बार सुखिया को ध्यान से देखकर बोला—"क्या बात है ?"

सुखिया पहली बात दुहराते हुए बोली—"तबियत कुछ खराब मालूम हो रही है।"

रामधारी ने कहा—"हां।"—फिर मानो वह अपने विचारों में डूब गया। उसे एकाएक याद आ गयी कि वह ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहा है त्यों-त्यों उसके कष्टकर कर्तव्य का समय निकटतर आता जा रहा है। रेल चढ़ने का डर तो टूट चुका था, पर एक जीती-जागती औरत को, केवल औरत नहीं भतीजी को इस प्रकार एक अजनबी जगह में सैकड़ों विपदों के बीच अकेली छोड़कर धोखे से चल देना, यह उसे बहुत कठिन मालूम पड़ रहा था। पर अब तो वह चल ही चुका था। भैया ने कहा था कि जोरावरसिंह का नाम डूब जायगा, इसलिये उसे यह काम तो करना ही था। पर फिर भी उसे घबड़ाहट मालूम दे

रही थी। भैया ने उसे ही यह काम क्यों सौंपा ? वह खुद भी तो इस काम को कर सकते थे। उसे कुछ असन्तोष-सा मालूम हुआ, पर क्या किया जाता ? खड़े-खड़े बाप-दादों के नाम को तो डूबने नहीं दिया जा सकता था। उसने मन को कड़ा कर लिया।

इतने में एक स्टेशन आ गया। सामने ही पानी-पाँड़े आता दिखाई दिया। रामधारी ने पानी की बात सोची भी नहीं थी, पर पाँड़े को देखकर जंगले से हाथ बढ़ाते हुए उसने पानी मांग लिया। फिर उसने सुखिया के हाथ में वह लोटा देकर कहा—"पीओ।"

सुखिया को बड़ा आश्चर्य हुआ, उसने तो पानी नहीं मांगा था, फिर भी उसने लोटे को हाथ में ले लिया। बोली—"प्यास तो नहीं है।"

रामधारी ने डांटते हुए कहा—"प्यास नहीं है, प्यास नहीं है; अभी तो कह रही थी कि तबियत खराब है, पी ले तबियत ठीक हो जायगी।........"

सुखिया ने ध्यान से एक बार अपने चाचा की ओर देखा, समझ गयी बहस करना फजूल है, इस कारण वह झट से पानी पीने लगी। फिर उसने लोटा जहां का तहां रख दिया, और चुपचाप बैठ गयी। दो मुसाफिर उतरे, एक चढ़ा, फिर गाड़ी खुल गयी। थोड़ी देर में रामधारी फिर ऊँघने लगा। अब की बार उसकी ऊँघ पहले की तरह गहरी नहीं हुई, क्योंकि वह बार-बार आंखें खोलकर ताकने लगा। कोई किरकिरी-सी चीज उसके मन में करकरा रही थी, जो उसे सोने नहीं दे रही थी।

पांच

जब अच्छी तरह दिन चढ़ गया, तब भी रेल कट-कट चली जा रही थी। स्टेशन आते-जाते थे, मुसाफिर चढ़ते-उतरते जाते थे; पर रामधारी और सुखिया अपनी-अपनी जगह पर डटे हुए थे। जब तक रात रही, तब तक सुखिया बिल्कुल नहीं सोयी। सोने के नाम पर उसे डर मालूम हो रहा था; न मालूम सोते समय क्या हो जाय। पर ज्यों ही दिन की रोशनी दिखायी पड़ी, त्यों ही सारे डर दूर हो गये। जो भय रात के समय बड़े ही वास्तविक ज्ञात हो रहे थे, वे दिन के आते ही अन्धकार की तरह काफ़ूर हो गये। उसकी आंख लग गयी।

जब काशी का स्टेशन आया तब रामधारी ने हड़बड़ाहट में उसे जगाया। डब्बा बिल्कुल खाली-सा हो रहा था, अधिकांश लोग ग्रहण नहाने के लिये आये हुए थे।

रामधारी ने गाड़ी से उतरते ही देखा कि सामने अपार जनसमुद्र है। जिधर देखो उधर नरमुंड ही नरमुंड दिखाई पड़ रहे थे। रामधारी जब सुखिया को लेकर स्टेशन से बाहर

निकला, तो उसके सामने कोई गन्तव्य स्थान नहीं था। गिरधारी ने इसके आगे कुछ नहीं बताया था। रामधारी ने अपने जीवन में इतनी बड़ी भीड़ कभी नहीं देखी थी। स्टेशन से लेकर जहाँ तक दिखाई पड़ता था, मनुष्यों के सिवाय कुछ नहीं था। उस भीड़ को देखकर रामधारी के मन में एक भय-सा छा गया। उसे ऐसा मालूम होने लगा जैसे इस जनसमुद्र में वह खो गया हो। वह मन ही मन जल्दी-जल्दी अपने गांव का नाम पिथौरा तथा स्टेशन रामगढ़ याद करने लगा। उसे ऐसा भय लगने लगा जैसे वह गांव तथा स्टेशन का नाम भूल जायगा। वह जल्दी-जल्दी इन दो नामों की पुनरावृत्ति करने लगा। कहां का टिकट लोगे ? रामगढ़ का। फिर एक दफे रामगढ़ पहुँच गया, तो वह पिथौरा तो पहुँच ही जायगा। इसी स्टेशन में आकर वह रेल देख गया था।

रामधारी और सुखिया स्टेशन के ऐन बाहर जरा किनारे से खड़े हो गये। पर दस-दस मिनट पर ग्रहण के स्नानार्थियों को लेकर जो गाड़ियाँ आ रही थीं, उनके कारण वे वहां ठहर न सके। यात्रियों का एक गोल स्टेशन से निकलकर उन्हें धक्का-सा देता हुआ निकल गया। सुखिया ने सहजात बुद्धिवश रामधारी के बायें हाथ को कसकर पकड़ रखा था, नहीं तो वह फौरन अलग बह जाती। काफी जोर से हाथ पकड़े रहने के कारण ही वह खिंचकर भी नहीं खिंची। जिस समय यात्रियों का यह गोल चला गया, और रामधारी ने देखा कि जिस जगह वे खड़े थे उससे वे कई गज हटकर खड़े हैं तथा उसने बायें हाथ की उंगलियों में यह अनुभव किया कि कितने जोर का खिंचाव पड़ा था, तो उसे एक खुशी-सी हुई। जिस भीड़ को देखकर वह अभी कुछ मुहूर्त्त पहले घबड़ा रहा था, और अपने को मँझधार में पा रहा था, वही भीड़ उसे एक परित्राता शक्ति के

रूप में ज्ञात हुई। इसी भीड़ से तो उसका काम बनेगा।

उसका मन कार्यसिद्धि के आनन्द से परिपूर्ण हो गया। जब से सुखिया ने उसको रेल में जगाया था, तब से यह जो समस्या उसके दिमाग को परेशान कर रही थी कि भैया ने कहने को तो कह दिया, पर काम कैसे होगा, उसने उसका हल पा लिया। उसे ऐसा मालूम हुआ कि यह तो बायें हाथ का खेल है।

सुखिया अपनी शारीरिक परिस्थिति तथा रतजगा के कारण यों ही परेशान थी, भीड़ ने जो उसे खींचा था, और वह मुश्किल से बच पायी थी, इस कारण वह उस हिरनी की तरह, जो बाघ द्वारा खदेड़ी गयी थी और उससे किसी तरह बच गई थी, हांफ रही थी। वह भयचकित दृष्टि से चारों तरफ देख रही थी। अब भी उसने दृढ़ हस्तों से रामधारी के हाथ को पकड़ रखा था।

स्टेशन से फिर एक भीड़ निकली। उसमें अजीब कपड़े तथा शक्ल-सूरत के लोग थे। कम से कम सुखिया को ऐसा ही मालूम पड़ा। यह भीड़ 'हर हर महादेव' और 'गंगा मैया की जय' बोलती हुई एक लुढ़कते हुए बर्फ-स्तूप की तरह उसी तरफ दौड़ी जिधर रामधारी और सुखिया खड़े थे। सुखिया ने घबड़ाते हुए कहा—"चाचा, हट जाओ, भीड़ आ रही है।...."

पर रामधारी तो रिहर्सल करना चाहता था। वह हटा नहीं। वह मानो आनन्द के साथ भीड़ की प्रतीक्षा करने लगा। डांट-कर बोला—"भीड़ है तो क्या है, कोई खा थोड़े ही जायगा।" कहकर वह जहां खड़ा था वहीं खड़ा रहा।

एक क्षण के लिये सुखिया के चेहरे पर एक आतंक-सा छा गया, उसे योंही तकलीफ हो रही थी, पर आत्मरक्षा की सहजात बुद्धि के कारण उसने रामधारी का हाथ कसकर पकड़ लिया, और उससे सटकर खड़ी हो गयी। भीड़ एक मुहूर्त के अन्दर ही

उन पर आ पड़ी। बड़े जोर का धक्का लगा। रामधारी और सुखिया अलग होते-होते रह गये। सुखिया ने अपनी सारी ताकत लगाकर रामधारी के हाथ को पकड़ रखा था। सुखिया अब की बार भी बच तो गयी, पर एक तो उसका हाथ करीब-करीब उखड़-सा गया था, फिर पेट पर बहुत जोर का धक्का लगा था। किन्तु उसे इन बातों से उतनी परेशानी नहीं थी जितनी इस बात से थी कि अब की बार रामधारी ने उसका हाथ नहीं पकड़ा था, जो कुछ जोर था वह उसी की तरफ से लगा था। उसके मन में इससे अपने भविष्य के सम्बन्ध में कोई आभास नहीं आया, यह बात सही है; पर उसे डर लगने लगा।........

जिस समय भीड़ चली गयी, उस समय रामधारी के दाहिने हाथ में जो छोटी-सी पोटली थी जिसमें कुछ चबेना और दो-एक कपड़े थे, उसका कहीं पता नहीं था। रामधारी सुखिया का हाथ छोड़कर हक्का-बक्का हो उसे खोजने लगा, जैसे कोई खजाना खो गया हो। खैरियत यह थी कि उस पोटली में रुपये नहीं थे, नहीं तो अनर्थ हो जाता। पोटली को इस प्रकार गायब होते देखकर रामधारी अजीब तरीके से घबरा गया था। रिहर्सल की बात भूलकर वह अपनी परेशानी में व्यस्त था। उसने जल्दी-जल्दी मन ही मन पिथौरा, रामगढ़ इन दो शब्दों की याद की। जब थोड़ी ढुँढ़ाई के बाद भी वह पोटली नहीं मिली, तो उसने सुखिया से भी कहा—"देख तो बेटा गठरी किधर गिर पड़ी।"

सुखिया बोली—"क्या चाचाजी पोटली खो गयी ?"

"हां" कहकर वह खोजने लगा। सुखिया भी आंखें दौड़ा कर खोजने लगी। रामधारी सीधा-साधा सरल आदमी था, वह थोड़े में ही कुसंस्कार का शिकार हो जाता था। उसने मन ही मन सोचा कि जैसा मैंने बुरा सोचा, वैसा ही बुरा हुआ। इतने में सुखिया को दूर पड़ी एक पोटली-सी दिखाई पड़ी। उसने अपने

चाचा से बताया। दोनों फौरन उस तरफ लपके। अभी कुछ मिनट पहले पोटली रामधारी के हाथ में थी, पर इसी बीच में उसकी शक्ल बदल गयी थी। बहुत-से लोग उस पर से चल चुके थे। यात्री लोग थे, पुण्य कमाने आये थे, इसीलिये किसीने पोटली उठायी नहीं थी। पर उसका सब करम हो गया था।

रामधारी ने पोटली को उठाकर देखा तो उसके ऊपर का कपड़ा फट चुका था। फिर भी पोटली मिल गयी, इसकी उसे बड़ी खुशी थी। रामधारी ने उस पोटली को उठाकर झाड़ा। सुखिया ने कहा—"लाओ चाचा मैं अच्छी तरह रख लेती हूं।"

रामधारी ने पोटली उसकी तरफ बढ़ाई, फिर एकाएक कुछ सोचकर उसका चेहरा कड़ा पड़ गया, और उसने अकारण कर्कश आवाज में कहा—"नहीं, मैं ही रखूंगा। तू अपने को सँभाल।"

सुखिया यह समझ नहीं पायी कि चाचाजी नाराज क्यों हुए, पर वह कुछ बोली नहीं।

रामधारी के सामने यह प्रश्न था कि अब क्या किया जाय, कहां चला जाय? ग्रहण तो रात को लगेगा, पर इस बीच में क्या किया जाय? उसने खूब अच्छी तरह सोचा, भैया ने इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा था। एक क्षण तक वह खड़ा-खड़ा सोचता रहा। उसने स्टेशन की तरफ देखा, फिर सुखिया की ओर देखा। फिर उसने यह तय कर लिया कि भीड़ जिधर जा रही है उधर ही जाना चाहिये। अवश्य ही ये लोग ठीक जगह पर जा रहे होंगे। रामधारी सुखिया का हाथ पकड़ कर भीड़ के साथ-साथ चलने लगा। उसने एक राहगीर से पूछकर यह भी पता लगा लिया कि ये लोग शहर में जा रहे हैं, वहां वे देवताओं का दर्शन आदि करके ग्रहण का स्नान करेंगे।

दोनों इस अज्ञात नगरी में हाथ पकड़े चले जा रहे।"

रामधारी का मन कई कारणों से बहुत तपा हुआ था। उसके सामने कोई बात साफ नहीं थी। वह न तो कोई दार्शनिक था, न कोई बाल की खाल निकालनेवाला; पर अपने ढंग से उसका भी एक विवेक था। इस विवेक के सामने जो प्रश्न आते थे वे इस ढंग से नहीं आते थे कि क्या सत्य है और क्या मिथ्या है, बल्कि इस ढंग से आते थे कि जोरावरसिंह के कुल की बदनामी होगी, बिरादरी का दंड पड़ेगा, नाक कट जायगी, दया करनी चाहिये, अपनी ही औलाद है, वगैरह वगैरह। पर कठिनाई इस बात में पड़ रही थी कि उसका यह विवेक इस मौके पर उसे कुछ स्पष्ट नहीं बता रहा था। वह बड़े असमंजस में पड़ा हुआ था। यह तो उसने देख लिया था कि जिस काम के लिये उसे भैया ने भेजा था, वह काम बहुत आसान था। पर आसान है या मुश्किल, यह प्रश्न थोड़े ही था। वह कुछ समझ नहीं पा रहा था। उसे अपने ऊपर बड़ी खीझ मालूम हो रही थी।

सिर्फ एक ही बात उसके सामने स्पष्ट थी। वह थी भैया की आज्ञा। इस बात को सोचकर उसे कुछ तसल्ली हुई। संशय के समय मनुष्य किसी बाहरी शक्ति से हिदायत चाहता है। यही कमजोर मनुष्य की विशेषता है। इसी विशेषता का शोषण करके धर्म तथा इसी प्रकार के अन्य संस्कार जीते हैं। कुछ भी हो, भैया की आज्ञा स्पष्ट थी। जोरावरसिंह की नाक नहीं कटनी चाहिये, भैया ने यह कहा था, और वह इस पर तुला हुआ था।

दोनों ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते जाते थे त्यों-त्यों भीड़ अधिक होती जाती थी। तरह-तरह का वेश, तरह-तरह की भाषा, यह एक अजीब भीड़ थी। सब लोगों के चेहरों पर एक दिव्य जोश था। सब पुरुष चिल्ला-चिल्लाकर उत्सव की जेहनियत में बात कर रहे थे, सब स्त्रियां खुश थीं, और आंख फाड़-फाड़कर देख रही थीं। तीर्थयात्रा के कारण इन स्त्रियों को अपनी संकीर्ण दुनिया से

निकलने का मौका मिला था। जिधर देखो उधर सड़क के किनारों पर दूकानें लगी हुई थीं। उनमें तरह-तरह की चीजें बिक रही थीं। इस अपार जनसमुद्र को मथकर उसमें से रत्न लेने के लिये तरह-तरह की तैयारियां थी। फेरीवाले भी अपना टिप्पस लगाते हुए घूम रहे थे।

रामधारी और सुखिया शायद बहुत आगे नहीं गये थे, पर वे दोनों विभिन्न कारणों से थक गये थे। एक जगह रामधारी ने यह देखा कि सड़क के किनारे एक मैदान-सा है, उसमें बहुत-से यात्री जहां-तहां बैठकर विश्राम कर रहे हैं, या खा-पी रहे हैं। रामधारी ने सूर्य की तरफ देखा तो दोपहर हो चुका था। उसे भूख-प्यास दोनों लगी थीं। इसके अतिरिक्त वह विश्राम भी करना चाहता था, इसलिये वह वहीं पर रुक गया।

मैदान में यों तो भीड़ काफी थी, पर लोग थोड़ी देर ठहर कर उठते जाते थे, इसलिये उसे एक खाली जगह मिल गयी। वहां दोनों डट गये। सुखिया मानो इसी की प्रतीक्षा कर रही थी। वह जल्दी से जमीन पर बैठ गयी। कपड़ा तो मैला हो ही चुका था, इसके अतिरिक्त अब जान पर बन रही थी।

रामधारी भी बैठ गया। इन लोगों ने जो चारों तरफ के लोगों पर दृष्टि डाली और सबको खाते-पीते देखा, तो इन्हें भी खाने-पीने की इच्छा हुई। सुखिया तो भूख-प्यास से अधमरी हो रही थी। उसके अन्दर जो वृद्धिशील बच्चा था, वह प्रतिक्षण उसका सारा रस पीता जा रहा था। रात को उसने घर से चलते समय खाया ही क्या था, कुछ खाया ही नहीं गया था। अनिश्चित उद्देश्य के लिये यात्रा की बात से वह घबरायी हुई थी। उसके मन में कुछ यह शंका थी कि लोग उसे मारने के लिए जा रहे हैं। ऐसी हालत में वह कैसे खाती? उसे बड़ी इच्छा हो रही थी कि रामधारी पोटली खोलकर चबैना

निकाले, पर ऐसा कहने का साहस नहीं करती थी। जिस दिन से उसका रहस्य खुल गया था उस दिन से वह अपने को किसी बात की हकदार नहीं समझती थी। उस दिन से वह यह समझती थी कि लोग जो कुछ दे रहे हैं, वह एहसान ही है। समाज की चक्की अपनी कल से इसी तरह आटा निकालती है कि जो अत्याचारी है वह तो खैर अपने को सही समझता ही है, पर जो अत्याचारित है, वह अक्सर अपने को दोषी समझता है।

रामधारी ने चारों तरफ दृष्टि दौड़ाई तो पास ही एक नल दिखलाई पड़ा। बहुत-से लोग उसे घेरकर पानी ले रहे थे। बस रामधारी भी वहां पहुंचा, और मुंह-हाथ धोने तथा पानी लेने के लिये अपनी बारी की प्रतीक्षा करने लगा।

सुखिया वहीं पोटली लेकर बैठी रही। जहां वह बैठी थी, वहां से रामधारी की पीठ कुछ देर तक तो दिखाई पड़ी, पर जब वह आगे बढ़ गया, और उसके पीछे लोग हो गये, तो वह पीठ भी नहीं दिखाई पड़ी। सुखिया जमीन पर बैठकर हाथ से पोटली को टो रही थी, और इधर-उधर ताक रही थी।

इतने में एक फेरीवाला उधर से पहुँचा, वह टिकली, बिंदिया, कंघी इस तरह की छोटी-छोटी चीजें बेच रहा था। वह आकर सुखिया के सामने खड़ा हो गया, और अपनी चीजें निकाल कर दिखाने लगा। सुखिया जब बच्ची थी कई बार चाचा के साथ अपनी तरफ के हाट में गयी थी, पर यहां उसने जिन चीजों को देखा, वे उस हाट की चीजों से कहीं अच्छी थीं। यों तो उसे भूख लगी थी, पर उसने जो इन चीजों को देखा तो वह भूख भूल गयी। उसके गांव के जाने हुए लोगों में किसी ने इतनी अच्छी कंघी न देखी होगी। बाबूजी एक बार जिला गये थे, तो वहां से जमुना के लिये एक कंघी लाये थे; पर वह भी इस फेरीवाले के पास की लाल कंघी से अच्छी नहीं थी।

कितना अच्छा रंग है, जैसे चम-चम-चम-चम कर रही है। उसके मन में यह विचार आया कि वह इस कंघी को मोल ले ले, और लौटकर गांव में सबको आश्चर्य में डाल दे। एक सरल बालिका की सरल साध।

रामधारी अभी पानी लेकर नहीं लौटा था। सुखिया के पास पांच रुपये थे। चलते समय जमुना ने सबसे छिपाकर उसे ये पांच रुपये दिये थे। सुखिया ने सोचा कि इन्हीं रुपयों में से कंघी खरीदी जाय। उसने उसका दाम पूछा। फेरीवाले ने एक दाम बता दिया। अन्त में सुखिया ने उस कंघी को लिया, एक छोटा-सा साबुन लिया, और कुछ टिकली-बिंदिया लीं। इस प्रकार उसकी पूंजी के डेढ़ रुपये खर्च हो गये।

फेरीवाला चला गया। पहले तो सुखिया ने खरीदी हुई चीजों को बाहर रखा कि चाचा के आने पर उसे दिखायेगी कि कितना अच्छा सौदा लिया है, पर जब उसने दूर से रामधारी को लोटा भरकर आते देखा, तो न मालूम क्यों उसे यह विचार रुचिकर नहीं ज्ञात हुआ, उसकी हिम्मत कम हो गई, और उसने सब चीजों को समेट कर छिपा लिया।

रामधारी के आने के बाद घर का चबेना तो खाया ही गया, और रामधारी ने उधर पानी की तरफ से आते हुए कुछ मिठाई खरीदी थी वह भी खाई गयी। खाना खाकर सुखिया को बहुत शान्ति मालूम हुई। जैसे शारीरिक-मानसिक सब क्लेश दूर हो गये। उसे ऐसा प्रतीत होने लगा, जैसे वह भी और यात्रियों की तरह यात्री है। उधर रामधारी के अन्दर घबराहट बढ़ती जा रही थी। वह बेचैनी से इधर-उधर देख रहा था। शहर के लिये एक वज्र देहाती की जो घबराहट होती है, वह तो इस बीच में करीब-करीब दूर हो चुकी थी।

उसने पास के एक यात्री से पूछा—"कितने बजे ग्रहण लगेगा ?"

उस यात्री ने उसे बतलाया कि कि रात को बारह बजे के करीब ग्रहण लगेगा। बिल्कुल आधी रात को ग्रहण लगेगा, यह सुनकर रामधारी को बहुत खुशी हुई। उसने फिर उस यात्री से पूछा—"यहाँ से गंगाजी कितनी दूर पड़ेंगी ?" यों ही उसने प्रश्न करने के आनन्द में प्रश्न किया था। कितनी ही दूर हो उसके लिये क्या आता-जाता था। वह सुखिया को, पास के यात्रियों को और शायद अपने को यह दिखलाना चाहता था कि वह बज्र देहाती नहीं है। यात्री ने अपने ज्ञान के अनुसार उत्तर दिया।

दोनों वहीं पर देर तक बैठे रहे। यात्रियों की कई टोलियां बैठ-बैठकर चली गयीं। किसी को विश्वनाथ का दर्शन करना था तो किसी को कुछ और करना था। यों तो ग्रहण के स्नान से ही मोक्ष हो जायगा, यह समझकर यात्री आये थे; पर शायद इसी बात को और भी पक्की करा लेने के लिये साथ-साथ लोग तमाम देवी-देवताओं का दर्शन भी कर जाना चाहते थे। यदि एक मामले में धोका हो, तो दूसरा जरूर फल देगा।

जिस यात्री से रामधारी ने प्रश्न किये थे, उसने अपनी टोली के साथ उठते हुए रामधारी से पूछा—"विश्वनाथ का दर्शन नहीं करना है ?"

रामधारी ने इस प्रश्न पर विचार ही नहीं किया था। वह यहाँ पुण्य कमाने थोड़े ही आया था। पर एकाएक इस प्रश्न से उसके मन में यह विचार आया कि क्यों न लगे-हाथों पुण्य भी कमा लिया जाय। उसने कहा—"थोड़ी देर में चलेंगे।"

वह यात्री चला गया। रामधारी के मन में अब एक नयी बात आयी कि विश्वनाथजी का दर्शन करना है। पर उसने सोचा कि इस बोझ से छुटकारा मिल जाय, तब वह दर्शन

वगैरह करे। धर्म के सम्बन्ध में भी उसके कुछ निजी विचार थे। जोरावरसिंह के कुल पर कलंक न लगे, इसलिये वह सुखिया को एक अजनबी जगह में अकेली छोड़ जाने के लिये तैयार था, पर साथ ही उसके मन में यह सन्देह भी था कि धोखा देना बुरा है। इन सब बातों को सोचकर उसने अभी आये हुए विचार की रोशनी में चीजों को सोचा तो यह तय किया कि नहीं सुखिया को छोड़ देने में कुछ पाप लगे, तो गंगा-स्नान और विश्वनाथ-दर्शन से वह पाप धुल जायगा। इस नतीजे पर पहुँच कर उसे बहुत खुशी हुई। उसे ऐसा मालूम हुआ कि अब उसके मन के सब सन्देह दूर हो गये।

उसे इस पर इतनी खुशी हुई कि पास से एक मिठाईवाला जा रहा था, उसने उसे चिल्लाकर बुलाया, और सुखिया से कहा कि जो-जो मिठाई पसन्द आये ले ले। सुखिया चाचा से इस बात की आशा नहीं करती थी, इसलिये उसने एक बार चाचा के चेहरे को देखा। चाचा का वही हँसमुख चेहरा था जिससे वह बचपन से परिचित थी। सब सन्देह दूर हो जाने के कारण रामधारी के चेहरे पर का सारा तनाव दूर हो चुका था। इसी तनाव के कारण उसका चेहरा पहले रूखा और कड़ा मालूम होता था। अब वह एक बच्चे की तरह कोमल मालूम हो रहा था।

सुखिया ने कुछ मिठाइयाँ लीं। यद्यपि वे दोनों अभी खा चुके थे, पर फिर खाने लगे। अब सुखिया को यह इच्छा हो रही थी कि कुछ देर सोने को मिल जाय तो अच्छा रहे। पर वहाँ सोने की जगह कहाँ थी। अब उसे बिल्कुल निश्चिन्तता हो गयी थी।

रामधारी अपने साथ भंग की कुछ गोलियाँ ले आया था ; कुछ ही बची थीं। वह उन्हें चढ़ाने के लिये व्याकुल हो रहा था,

पर भतीजी के सामने उन्हें चढ़ाना नहीं चाहता था। इसलिये वह लोटा लेकर फिर नल की तरफ चला, और वहाँ एक किनारे बैठकर मजे में एक, दो, तीन गोलिया चढ़ाईं, और फिर पानी लेकर वापस आ गया।

जब मैदान की भीड़ बिल्कुल छँट-सी गयी, और दिन बहुत ढल गया, तब रामधारी और सुखिया—बल्कि यह कहना चाहिये कि रामधारी, क्योंकि सुखिया तो केवल उसका अनुसरण कर रही थी—चल पड़े। रामधारी अच्छी तरह जानता था कि उसे क्या करना है, पर सुखिया अभी तक यह समझ नहीं पायी थी कि वह क्यों लायी गयी थी, और कहां जा रही है।

वे लोग उसी तरफ चले जिस तरफ भीड़ जा रही थी। भीड़ क्रमश: घनी होती जा रही थी। पचासों हाट एक साथ लगे तो जैसी आवाज़ होती है, वैसी आवाज हो रही थी। बीच-बीच में गगन-पवन को चीरती हुई 'हर हर महादेव' और 'गंगा मैया की जय' की आवाज सुनाई पड़ रही थी।

भीड़ ज्यों-ज्यों बढ़ती गयी त्यों-त्यों दोनों का साथ चलना बहुत मुश्किल होने लगा। फिर भीड़ केवल एक तरफ जा रही हो, ऐसी बात नहीं। कुछ लोग प्रधान भीड़ को चीरते हुए इधर से उधर जाते दिखाई पड़ रहे थे। सच तो यह है कि इन्हीं के कारण चलना अधिक कठिन हो रहा था। भीड़ में सब यात्री ही थे, ऐसी बात भी नहीं। कुछ लोग तो ऐसे ही इधर से उधर घूमते हुए मालूम होते थे। बार-बार सुखिया को तथा रामधारी को धक्के लग रहे थे। रामधारी के लिये तो कोई बात नहीं थी, एक तो वह तगड़ा था, और दूसरा भंग-भवानी के प्रभाव के कारण वह अजेय बन चुका था। उसे तो ज्यों-ज्यों धक्का लग रहा था त्यों-त्यों उसका नशा चढ़ रहा था, एक फुरफुरी-सी मालूम हो रहा था, और अच्छा मालूम हो रहा था। उसे ऐसा

मालूम हो रहा था कि जैसे उसके सामने सैकड़ों, हजारों, लाखों बाधायें आ रही हैं, और वह उन सबको जीतता हुआ, उन सबको अपने बाहुबल से तितर-बितर करता हुआ आगे बढ़ता चला जा रहा है। उसे न दीन की खबर थी न दुनिया की, उसे, बस यही खबर थी कि उसे आगे बढ़े चले जाना है। मंजिलें बहुत हैं, पर उसे आगे जाना है, निर्भीक होकर सब बाधाओं पर विजय प्राप्त करना है। वह इसी धुन में जैसे गरम छुरी मक्खन में धँसती जाती है वैसे आगे चला जा रहा था।

जिस समय सन्ध्या हुई, उस समय भी रामधारी चला जा रहा था। सुखिया उसके हाथ को बहुत कसकर पकड़े हुए थी। कई बार सुखिया को छोटे-मोटे धक्के लगे थे, पर एक बार ठीक उसके पेट पर एक धक्का लगा। एक क्षण के लिये उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। ऐसा मालूम हुआ कि जिस हाथ से उसने रामधारी का हाथ पकड़ रखा था, वह शिथिल हो गया, और छूटना ही चाहता है, पर इच्छा-शक्ति के प्रबल प्रयोग से डूबता हुआ जिस तरह तिनके को छोड़ता नहीं है, उसी तरह उसने रामधारी का हाथ नहीं छोड़ा। उसने उस हाथ में ही सारी शक्ति केन्द्रित कर ली।

रामधारी इन सब बातों से बेखबर चलने के आनन्द में मग्न चला जा रहा था। अब सुखिया से चला नहीं जा रहा था। उसने रामधारी से चिल्लाकर कहा—"चाचा, अब मुझसे चला नहीं जाता, इस भीड़ से निकलो; दम घुट रहा है।"

रामधारी ने पहले तो कुछ भी नहीं सुना, उस भयानक भीड़ में कुछ सुनाई ही नहीं पड़ रहा था, पर जब सुखिया ने दोबारा-तिबारा उसी बात को कहा, तो उसे सुनाई पड़ा कि सुखिया कुछ कह रही है। नशे के कारण वह बाहरी दुनिया से बिल्कुल बेखबर हो चुका था। अब जैसे वह फिर वास्तविक जगत् में

लौट आया। उसे याद आ गई कि उसे क्या करना है। इसी समय एक बड़े जोर का धक्का आया। बस, रामधारी ने जरा ताकत लगाकर हाथ छुड़ा लिया।

उसने क्या किया, यह अभी अच्छी तरह समझ भी नहीं पाया था कि वह वहाँ से बहुत दूर जा पड़ा। अब यदि वह खोजना भी चाहता तो सुखिया को नहीं खोज सकता था। अपार जन-समुद्र के किस भँवर में वह समा गयी, यह कुछ पता नहीं। रामधारी के मन में एक सूनापन मालूम हुआ। जैसे उसका सारा नशा एकाएक हिरन हो गया था। अब वह चल नहीं रहा था। भीड़ उसे जिधर ढकेल रही थी वह उधर जा रहा था। बिना किसी मकसद या उद्देश्य के। जैसे पानी में तिनका बहता है। उसने बहुत कोशिश की कि वह किसी जगह रुके, पर वहाँ रुकावट कहाँ थी जो वह रुकता। और ऊपर से 'हर हर महादेव' और 'गंगा मैया की जय !'

थोड़ी देर पहले वह अपने को विश्व-विजयी समझ रहा था, पर इस समय वह अपने को उस धूल के समान पा रहा था, जिसे हवा जिधर से भी फूंक देती है उधर उड़ जाती है।

जब वह घण्टों बाद एक जगह रुक पाया तो उसने देखा कि उसकी पोटली भी गायब है। जल्दी से उसने टेंट में हाथ डाला तो वहाँ रुपयों का बटुआ भी गायब था। खैरियत यह थी कि वह सीने के पास फतुही में भंग की गोलियों के साथ कुछ रुपये रक्खा करता था।

छः

जब ग्रहण के बाद सवेरा हुआ, तो रामधारी किसी के मकान के चबूतरे पर बैठा हुआ था। उसकी मिर्जई तथा धोती कहीं-कहीं से फट गयी थी। जो हाल उसके कपड़ों का था वही हाल उसके मन का था। जब से घर से चला था, तब से गाड़ी में जो कुछ झपकी लग गयी हो सो लग गयी हो, उसके बाद से फिर विश्राम का कोई मौका नहीं मिला था। जिस काम के लिये वह भेजा गया था, उसे सफलतापूर्वक कर डालने के कारण उसे कुछ खुशी नहीं हो रही थी। उस पर पोटली के चले जाने से उसे और भी दुःख हो रहा था। उसी में लोटा भी था।

वह बड़ी देर तक पथरीले चबूतरे पर बैठा रहा, और गत चौबीस घंटों की घटनाओं को याद करने लगा। याद करते-करते उसे कुछ ऐसा मालूम होने लगा कि जिस समय उसने सुखिया का हाथ छोड़ दिया था, उस समय एक दबी हुई चीख सुनाई पड़ी थी। हां, इसमें कोई सन्देह नहीं था कि यह सुखिया की ही चीख थी। बचपन से ही उसने सुखिया को देखा था, वह

सुखिया की खांसी तक को पहचानता था। हां, इसमें कोई गलती नहीं थी, यह उसी की चीख थी। उसने क्यों चीखा था? क्या वह दब गयी? या असहायावस्था के कारण चीख पड़ी थी।

वह इसी प्रकार के दुख:पूर्ण विचारों में तल्लीन जाने कब तक बैठा रहा। उसके सामने की तरल भीड़ कम होती जा रही थी। यात्री स्नान और दर्शन कर अपने-अपने घर वापस जा रहे थे। जिस तेजी से रेलगाड़ियाँ उन्हें भारत के कोने-कोने से ले लायी थीं, उसी तेजी से वे उन्हें वापस ले जा रही थीं। रामधारी के मन में भी घर जाने की इच्छा हुई। इसी विचार से वह उठने लगा। फिर भी घर जाने में जितना आनन्द होना चाहिये था उतना तो नहीं हो रहा था। कहीं कुछ सूनापन मालूम हो रहा था। जैसे कुछ नहीं है। जैसे कुछ था और कुछ नहीं रहा। क्या यह पश्चात्ताप की भावना थी, या पाप की?

रामधारी उठा और जिधर अधिकतर लोग जा रहे थे, उद्देश्यहीन तरीके से उधर चलने लगा। फिर उसे स्मरण हो आया कि उसने यह तय किया था कि गंगाजी नहाना है और विश्वनाथजी का दर्शन करना है। तदनुसार उसने लोगों से पूछकर गंगाजी का रास्ता लिया।

उसे मालूम नहीं था, पर वह गंगाजी के बहुत पास ही था। थोड़ी ही देर में दूर से गंगाजी दिखाई देने लगीं। कैसी पवित्र धारा मालूम हो रही थी। शुभ्र, जैसे पृथ्वी के गले में प्रकाण्ड मोतियों की एक माला हो। अर्द्धचन्द्रकार। अभी तक भीड़ काफी थी, पर कल भीड़ के सम्बन्ध में रामधारी को जो धारणा हुई थी, आज उसके मुकाबिले में यह तो कुछ भी नहीं थी। वह धीरे-धीरे सम्हल कर सीढ़ी से उतरा, फिर एक जगह जहाँ उसे भीड़ कुछ झीनी मालूम हुई, वह पंडे के पास कपड़े रखकर अँगोछा पहनकर उतर पड़ा। कुछ-कुछ तैरना जानता था।

घेग्वटके दो-तीन सीढ़ी तक उतर गया। फिर नहाने लगा। उसने एक डुबकी, दो डुबकी, तीन डुबकी, कई डुबकियां लगायीं। मानो वह डुबकियों से अपने पापों को धो डालना चाहता था। उसने शरीर को भी पानी से खूब मला, मुंह धोया, नाक साफ की। एक-एक रोम मला।

थोड़ी देर में उसे ऐसा मालूम होने लगा कि वह साफ और पवित्र हो गया है। गंगा के श्वेत जल में उसके मन तथा शरीर का मानो सारा क्लेश धुल चुका था।

वह उठा और हनुमान चालीसा के कुछ पद्य दुहराते हुए उसने कपड़े पहने, फिर उसने पंडे को औरों की तरह एक इकन्नी देकर माथे पर चन्दन लगा लिया। अब उसके दुःखजनक विचार जा चुके थे। थकावट भी कम मालूम हो रही थी। वह धीरे-धीरे सँभलकर सीढ़ी से सड़क पर गया और विश्वनाथजी के मन्दिर का रास्ता पूछकर चलने लगा। यों तो उसे बड़ी इच्छा थी कि जब यहाँ आया है तो दर्शन करके ही जाय; पर इस समय एकाएक उसमें पिथौरा पहुंचने की, फौरन पहुंचने की इच्छा उत्पन्न हुई, और अब उसमें विश्वनाथजी के दर्शन के लिए वह जोश नहीं रहा जो पहले था। न मालूम क्यों एकाएक उसे ऐसा मालूम हुआ कि वह इस समय गिरधारी के बगल में होता तो अच्छा रहता। बचपन से वह गिरधारी पर ही निर्भर था। इस संसार में गिरधारी ही उसका एकमात्र अवलम्बन था। उसके पैर में कुछ कमजोरी मालूम होने लगी। आँखें भी कड़वा रही थीं।

पर विश्वनाथजी का दर्शन तो करना ही था। उसे स्मरण हो आया कि दूर-दूर से लोग केवल विश्वनाथजी का दर्शन करने आते हैं। उसके गांव के पास के एक कुर्मी ने विश्वनाथ-जी का दर्शन किया था, लोग कहते थे कि यह बड़ा भाग्यवान

है। इस बात की याद आते ही उसके अन्दर फिर एक खुशी की लहर दौड़ गयी। वह जल्दी-जल्दी उधर की तरफ चलने लगा जिधर विश्वनाथजी का मन्दिर उसे बताया गया था।

उसने बाकायदा विश्वनाथजी, अन्नपूर्णाजी और ज्ञानवापी का दर्शन किया, और फिर लोगों से पूछकर स्टेशन की ओर चलने लगा। इस विचारमात्र से कि अब वह घर की ओर जा रहा है उसे बहुत खुशी हुई। खैरियत यह थी कि उसके पास किराये के पैसे थे, कुछ दो-एक आने ज्यादा भी थे; पर इतना पैसा नहीं था कि वह इसमें से कुछ खा सके। शहर में चीजें बहुत महँगी थीं। एक-दो पैसे का भुना हुआ चना खा सकता था, पर इधर-उधर कहीं ऐसी दूकान नहीं दिखायी देती थी जहाँ उसे यह वस्तु मिल सके। इसलिये उसने तय किया कि अब वह घर चलकर ही कुछ खायगा।

घर का नाम याद आते ही उसे बड़ी खुशी हुई। पर उसे एकाध बार यह भी विचार आया कि वह शायद घर न पहुँच सके। ऐसा विचार आने का कोई कारण तो नहीं था, उसके पास किराये का रुपया था, फिर क्या चिंता थी। फिर भी घूम-घूमकर यही विचार उसके दिमाग में आने लगा। उसने पिथौरा की याद की तो उस सुपरिचित गांव का नकशा उसकी आँखों के सामने आया ही नहीं। अरे यह क्या ? अपने घर का भी चित्र उसके सामने नहीं आ रहा था। गिरधारी का भी चेहरा याद नहीं पड़ रहा था। कहाँ, कुछ भी नहीं याद पड़ रहा था। जमुना का चेहरा भी याद नहीं आ रहा था। हाँ, केवल सुखिया का चेहरा याद आ रहा था। अत्यंत स्पष्ट, चेहरे पर की एक-एक रेखा साफ। उसने उस चेहरे को भुलाकर गिरधारी और जमुना के चेहरे की याद करनी चाही तो याद नहीं आयी। कैसी मुश्किल है ?

उसे इस बात से बहुत बेचैनी मालूम हुई। वह सामने ही एक दूकान पर खड़ा हो गया। यहां चबैना आदि बिक रहा था। उसने दो पैसे का चबैना लिया, फिर वहीं बैठकर चबाकर पानी पिया। इससे कुछ शान्ति मिली।

फिर वह चल निकला। अब वह दोनों तरफ की दुकानों को ध्यान से देखता चला जा रहा था। वह बार-बार इस बात को स्मरण कर रहा था कि वह गंगाजी में स्नान कर चुका, विश्वनाथ दर्शन कर चुका, अब उसमें कोई पाप नहीं है। उसका मन संतुष्ट था। पर दो पैसे का चबैना खाने से भूख बढ़ी थी न कि घटी। पर उसे इस समय इसकी परवाह नहीं थी। कल सवेरे तक वह जरूर घर पहुँच जायगा। फिर जो मन में आयेगा सो खायगा।

इस प्रकार कभी दुःखप्रद और कभी सुखद विचारों में डूबता-उतराता वह चला जा रहा था। इतने में उसने देखा कि रास्ते के बगल में एक भीड़ लगी हुई है। यह रास्ता अपेक्षाकृत निर्जन था। किसी ने उससे कहा था कि इस सड़क से जाने पर स्टेशन जल्दी मिलेगा।

रास्ते में ऐसी कई भीड़ें उसे मिली थीं। कहीं बन्दर नाच रहे थे, तो कहीं फन उठाये हुए सांप थे, तो कहीं जड़ी-बूटी बिक रही थी। उसने इन भीड़ों में ज़रा झांककर कोई दिलचस्पी की बात नहीं पायी थी। यदि दिलचस्पी मालूम भी हुई थी तो वह यह समझकर खड़ा नहीं हुआ था कि न मालूम हरेक को खड़ा होने का हक है या नहीं। वह जल्दी से इन भीड़ों के अन्दर क्या हो रहा है, देख लेता और आगे बढ़ जाता था।

इस समय उसकी मानसिक स्थिति जैसी थी, और वह भाई की छत्रछाया में पहुंचने के लिये जिस प्रकार व्याकुल हो रहा था, उसमें उसने इस भीड़ की तरफ ध्यान ही नहीं दिया। चौबीस

घंटों में ही वह इतना शहरी हो चुका था कि वह जान गया कि इन भीड़ों में कोई तत्व की बात नहीं होती।

घर जाने के विचार से भी उसे पूरी खुशी नहीं थी। पर वह कुछ ही आगे बढ़ा था कि उसे ऐसा ज्ञात हुआ कि उसे सुखिया की आवाज सुनाई पड़ रही है। उसने सोचा यह भ्रम है, उसके दुर्बल मन का विकारमात्र है। पर नहीं उसे सुखिया की आवाज आयी, यह उसके रोने की-सी आवाज थी। उसने चारों तरफ देखा; पर कुछ दिखाई नहीं पड़ा।

फिर वह आगे बढ़ा, पर अब की बार फिर वही आवाज सुनाई पड़ी जैसे सुखिया रोकर कुछ कह रही हो।

वह ठिठककर खड़ा हो गया। अब तक उसने इस विषय में सोचा ही नहीं था, बल्कि अब तक उसने जबर्दस्ती अपने को इस विचार से अलग रखा था कि छोड़ने को तो उसने सुखिया को छोड़ दिया, पर उस पर क्या गुजरी होगी। अब उसके मन में यह विचार आया कि यदि वह भीड़ द्वारा कुचलने से बच गयी हो, तो उसे क्या हुआ होगा? उसके माथे पर बल आ गये, और वह पीछे को लौट पड़ा। क्यों, किस उद्देश्य से, यह उसके निकट कुछ स्पष्ट नहीं था।

उसने जिस भीड़ की तरफ देखा भी नहीं था, वह उसके सामने आकर एकाएक जैसे किसी मंत्र से चालित होकर रुक गया। वह शायद इस प्रकार रुककर सोच लेना चाहता था कि आगे क्या करे। पर वहां जो उसने भीड़ के अन्दर निगाह डाली तो उसने देखा कि बीच में एक औरत खड़ी है, उसके बाल बिखरे हुए हैं, कपड़े मैले तथा फटे हैं, सब लोग इसका मजाक उड़ा रहे हैं। कोई पालतू बन्दर जंगली बन्दरों में पहुंच जाय तो उसकी जो हालत होती है, वही हालत उस औरत की हो रही थी।

रामधारी ने सुना था कि काशी एक तरफ तो बड़ा भारी तीर्थ-स्थान है, और दूसरी तरफ यह बदमाशों का एक प्रधान अड्डा है। न मालूम क्यों इस बात को स्मरण करते ही उसका माथा ठनक गया। एक अजीब आशंका से उसका मन भाराक्रान्त हो गया, मानो उसी पर कोई विपत्ति पड़ रही हो।

इतने में भीड़ में से एक ने 'पगली' कहकर उस स्त्री के स्तन को उघार देना चाहा। उस स्त्री ने बचने की कोशिश की और चिल्लाकर उसका प्रतिवाद किया।

उसके चिल्लाते ही रामधारी पहचान गया कि वह सुखिया थी। आश्चर्य की बात थी कि उसने अब तक इसे पहचाना क्यों नहीं था। सच तो यह है कि उसकी आंखें कड़वा रही थीं, कुछ सिर में खफीफ-सा दर्द भी था, इसलिये उसने भीड़ के अन्दर खड़ी सुखिया को पहचाना नहीं था। फिर इन चंद घंटों में सुखिया का चेहरा इतना कुम्हला गया था, पेट इतना बड़ा तथा उम्र इतनी बढ़ी हुई मालूम देती थी, वह इस प्रकार डरी हुई थी कि यदि रामधारी उसे प्रथम दृष्टि में पहचान नहीं पाया तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी।

रामधारी ने जो सुखिया को इस हालत में देखा, और उसकी तरफ पन्द्रह-बीस जोड़े आंखों को एक साथ कामुकता के साथ ताकते देखा, तो उसने यह नहीं सोचा कि उसने जान-बूझकर इस स्त्री का विसर्जन किया था, अब इसके साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। उसने यह नहीं सोचा कि इसी उद्देश्य के लिये उसने काशी की यात्रा की थी। उसने यह सब-कुछ नहीं सोचा, और लपक कर सुखिया के पास जा पहुंचा, मानो उसकी कोई बहुत प्यारी चीज खतरे में हो। सुखिया ने जो उसको देखा तो 'चाचा! चाचा' कहकर उससे लिपट गयी, और रोने लगी।

रामधारी ने स्नेह के साथ सुखिया को पकड़ लिया, और

भीड़ की तरफ आग्नेय नेत्रों से देखा। भीड़ के अधिकांश लोग समझ गये कि इस खोई हुई औरत का कोई रिश्तेदार मिल गया, और वे लोग फौरन वहां से चोर की तरह खिसक गये। पर दो एक तमाशबीन ऐसे थे, जो खिसकने के लिये तैयार नहीं थे। इनमें एक वह भी व्यक्ति था जिसने सुखिया के स्तन को उघारने की अपचेष्टा की थी।

रामधारी ने सुखिया को वहीं जमीन पर बैठा दिया। वह शायद किसी तरह अपने को बेहोश होने से रोक रहा थी। जब से वह भीड़ में अकेली छूट गयी थी, तब से वह पानी के सोते में पड़े हुए नमक की डली की तरह बड़ी देर तक तो भीड़ ही में इधर से उधर घुलती रही; फिर जब वह कठिनता से भीड़ से बाहर निकली तो उसे और भी तकलीफों का सामना करना पड़ा। थोड़ी ही देर में कुछ लोग उसके पीछे पड़ गये। अभी तक जो लोग उसके पीछे पड़े हुए थे, उनमें से कई शुरू से ही उसके पीछे पड़े थे। इन लोगों ने उसके बाल पकड़ कर खींचे थे, कपड़ा पकड़ कर खींचा था। एक दफे तो उसे करीब-करीब नंगी कर दिया था और उसकी खरीदी हुई कंघी, टिकली वगैरह गिर पड़ी थीं। जब वह किसी तरह कपड़ा सम्हाल कर कंघी-टिकली बटोरने के लिये उद्यत हुई तो इन्हीं लोगों ने उसकी कंघी वगैरह ले ली थीं और फिर लौटाया नहीं था।

इन लोगों से बचने के लिये वह इधर से उधर जा रही थी। जो लोग उसका पीछा कर रहे थे, वे शायद और लोगों के सामने अपने बेहूदे मजाक के समर्थन के लिये उसे 'पगली-पगली' कहकर चिल्लाने लगे थे, यद्यपि वे जानते थे कि वह कतई पगली नहीं थी।

वह अपनी प्रतिरोध-शक्ति की सीमा पर पहुंच चुकी थी। इसलिये जब रामधारी मिल गया, तो उसका वही हाल हुआ जो डूबे हुए जहाज से तैरकर आये हुए मुसाफिर का किनारे पहुँचने

पर होता है। सुखिया करीब-करीब बेहोश हो गयी।

रामधारी ने उसकी तरफ ध्यान न देकर जो दो-तीन आदमी खड़े थे उनकी तरफ ध्यान दिया, और देहाती भाषा में बोला—"साले यहाँ से जाओगे या मारूँगा दो हाथ......."

'साला' शब्द से सम्बोधित लोगों ने रामधारी के हृष्ट-पुष्ट शरीर को देखा, उसकी लाल-लाल आँखों को देखा, और वे कुछ गिड़गिड़ाते हुए खिसक गये। जाते समय उन लोगों ने तृषित नेत्रों से एक बार सुखिया की ओर देखा, और आपस में कहते चले गये—"मालूम होता है यह उसका मनसेधू है...।"

जब रामधारी ने इन लोगों से छुट्टी पाई, तब उसने सुखिया की तरफ ध्यान दिया। सुखिया जैसे सो सी रही थी। उसने उसका कन्धा पकड़कर हिलाया, पर सुखिया कुछ बोली नहीं। उसकी आँखें बन्द थीं। रास्ते में एक स्त्री को बेहोश और एक दूसरे पुरुष को उसे होश में लाने की कोशिश करने का तमाशा देखने के लिये एक दूसरी भीड़ जमा हो गयी। भीड़ हमेशा पाजी लोगों की ही होती हो, ऐसी बात नहीं। भीड़ में से एक व्यक्ति ने एक लोटा पानी लाकर रामधारी को दिया और पूछा—"मिरगी आती है क्या?"

रामधारी ने कुछ उत्तर दिये बिना सुखिया के मुंह पर पानी के छींटे मारे। सुखिया धीरे-धीरे होश में आ गयी। रामधारी ने सुखिया को शोहदों के भीड़ के हाथों से बचा तो लिया, पर उसने परिणाम नहीं सोचा था। अब उसने जो सुखिया को होश में आते हुए देखा, और उसकी चारों तरफ एक भीड़ जमा हो गयी, तो उसे बड़ी झुंझलाहट मालूम हुई। उसने जिस व्यक्ति से लोटा लिया था, उसे लोटा वापस देते हुए भीड़ से कुछ रुखाई के साथ ही कहा—"आपलोग क्या तमाशा देख रहे हैं, जाइये।"

रामधारी भीड़ में से इसलिये और भी निकलना चाहता था कि वह अब सोचना चाहता था। एकाएक उसने लपककर जो-कुछ किया था, उसमें सोचने का कोई अंश नहीं था। भतीजी को अपमानित होते देखकर वह बिना परिणाम सोचे कूद पड़ा था।

भीड़ में से कुछ लोग जो बहुत ही शरीफ थे, वे रामधारी के अनुरोध पर फौरन चले गये। पर कुछ जिनमें भले, बुरे, उदासीन सब तरह के लोग थे, फिर भी नहीं हटे। इनमें से एक शरीफ आदमी ने, जो शायद मुहल्ले का ही था, रामधारी से कहा—"तब तक मेरे घर में चले चलो, मेरी स्त्री वगैरह हैं, उनकी मदद से सब ठीक कर फिर चले जाना"—और भीड़ की तरफ देखते हुए बोला—"जब तक किसी घर में नहीं घुमोगे इस भीड़ से छुटकारा नहीं मिलेगा।"

भीड़ में से एक आदमी ने इस पर अजीब तरह की आवाज की। जिस व्यक्ति ने रामधारी को अपने घर में थोड़ी देर के लिये आश्रय देने के लिये कहा था, वह इस आवाजकशी से कुछ झेंप गया, और उसने फिर अपने प्रस्ताव को नहीं दोहराया।

पर रामधारी की हालत तो डूबनेवाले की तरह हो रही थी। उसे तो इस भीड़ से बचने के लिये किसी सहारे की जरूरत थी। उसने झट से उस व्यक्ति के प्रस्ताव को मान लिया, और सुखिया का हाथ पकड़कर उसके घर में जाने के लिये तैयार हो गया।

उस व्यक्ति ने एक आवेश के मुहूर्त में यह प्रस्ताव रखा था। पूरा परिणाम नहीं सोचा था। पर जब रामधारी ने उस के प्रस्ताव को ग्रहण कर लिया तो वह उन्हें अपने घर ले चला। भीड़ के लोग तमाशे को उखड़ता देखकर फौरन तितर-बितर हो गये।

सात

रामधारी सुखिया को लेकर जिस व्यक्ति के घर में पहुँचा, उसकी स्त्री उस व्यक्ति से भी शरीफ निकली, और उसने जब अपने पति से यह सुना कि एक देहाती और उसकी स्त्री विपत्ति में पड़ गये हैं क्योंकि स्त्री को मिरगी आ गयी, तो वह फौरन इनको आश्रय देने के लिये तैयार हो गयी।

रामधारी तो बाहर बरामदे में बैठा रहा, और वह स्त्री सुखिया को भीतर ले गयी। उसने उसे एक कपड़ा भी दिया, और कपड़े वगैरह बदलवा कर बाहर भेज दिया। कल ग्रहण में इस स्त्री ने बहुत-सा अनाज और कपड़ा दान में दिया था। फिर रामधारी को उपदेश देती हुई बोली—"ऐसी स्त्री को लेकर तीरथ करने नहीं आना चाहिये था। अगर कुछ हो गया तो..." घर की मालकिन ने इसी बीच में यह ताड़ लिया था कि सुखिया सन्तान-सम्भवा है।

रामधारी क्या कहता; बोला—"हाँ!" पर उसके विचार बहुत दूर की सैर कर रहे थे। वह यही सोच रहा था कि वह

फिर से कहाँ के जंजाल में फँस गया। काम बनाकर घर जा रहा था, फिर से सब बिगड़ गया। अब फिर से वही बखेड़ा सिर पर आ गया। अब रोज-रोज ग्रहण थोड़े ही लगेगा जो वह हाथ छुड़ाकर चला जायगा। उसे बड़ा अफसोस होने लगा। वह यह क्या कर बैठा। पर साथ ही उसका मन यह कह रहा था कि आँखों के सामने सुखिया को अपमानित होते कैसे देखता ? आखिर वह उसीका रक्त-मांस—न सही उसका तो उसके भाई का रक्त-मांस—थी। पर भैया से वह क्या कहेगा ? क्या वह इसे लेकर घर लौटेगा ? इसकी तो कल्पना भी नहीं हो सकती। फिर ये लोग क्या कह रहे थे कि यह उसकी स्त्री है। छीः, उसे बड़ी घृणा हुई। पर लोगों का इसमें क्या दोष है ? लोग और क्या कहते ? उनसे सत्य कैसे कहा जाय ?

उस शरीफ स्त्री ने पूछा—"तुम्हारी जोरू को पहले से मिरगी आती है क्या ?"

कुछ प्रतिवाद करने के लिये रामधारी की जीभ हिली, पर कुछ समझकर वह बोला—"नहीं, भीड़ से मिरगी आ गयी थी।"

इस तरह वह स्त्री कभी रामधारी से और कभी सुखिया से प्रश्न पूछती रही। यहाँ तक कि ये परेशान हो गये। रामधारी कहने ही वाला था कि अब चला जाय, इतने ही में उस स्त्री ने कहा—"अरे मैं बातों में फँसकर तुम्हारे खाने का प्रबन्ध भूल गयी।"

"रहने दीजिये !" रामधारी ने कहा।

पर वह स्त्री नहीं मानी। बोली—"सीधा दिये देती हूँ, यहीं लकड़ी वगैरह आ जायगी, पकाकर खाना खा लो। फिर चले जाना।"

रामधारी ने यदि यह तय किया होता कि सुखिया को लेकर

घर लौटना है, तब तो वह खाने पर किसी भी तरह राजी नहीं होता, पर जब से सुखिया मिल गई थी तब से वह इस सम्बन्ध में किसी नतीजे पर पहुँच नहीं पा रहा था।

इसीलिये वह राजी हो गया। वह कुछ समय चाहता था जिसमें वह अपने से बात करना चाहता था। बात यह है कि गिरधारी ने जहाँ तक बताया था, परिस्थिति उससे भिन्न रूप में आ चुकी थी। इसलिये कोई और फैसला करना था। सबसे बड़ी बात यह थी कि ग्रहण फिर नहीं पड़नेवाला था।

सीधा लेकर जब ये लोग पकाने की तैयारी करने लगे, तब गृहस्वामिनी चली गई। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता था, त्यों-त्यों रामधारी के सामने यह समस्या, कि सुखिया को लेकर क्या किया जाय, यह प्रश्न बहुत जोरों से आ रहा था। वह इस सम्बन्ध में किसी निश्चय पर पहुँच ही नहीं पा रहा था। अब जैसी परिस्थित थी, इसमें रामधारी यदि चाहता भी तो सुखिया से छुटकारा नहीं पा सकता था। वह इन्हीं विचारों की उधेड़-बुन में पड़ा हुआ था कि सुखिया ने कहा कि खाना पक चुका है। रामधारी क्या करता, मिर्जई उतारकर खाने के लिए तैयार हो गया।

खाना परोसती हुई सुखिया बोली—"जल्दी से खाना खाकर चल देना चाहिए। मेरी तबियत बहुत खराब मालूम हो रही है।" उसने बहुत करुण दृष्टि से रामधारी की ओर देखा।

रामधारी ने अप्रसन्न होकर कहा—"हाँ" फिर कुछ सोचकर बोला—"मेरे पास तो दोनों के किराये लायक पैसे भी नहीं बचे। जिस वक्त मेरा-तुम्हारा हाथ छूट गया था, उसी वक्त किसी ने टेंट से मेरे सब रुपये भी निकाल लिये।"

सुखिया को यह रुपया निकल जानेवाली बात मालूम नहीं थी। अब जो मालूम हुई तो उसके मन में यह जो अस्पष्ट संदेह

था कि रामधारी ने शायद जान-बूझकर उसका हाथ छोड़ दिया था, वह दूर हो गया। उसने सोचा जैसे टेंट से रुपये निकल गये, उसी तरह आकस्मिक रूप से हाथ भी छूट गया होगा। वैसी भयंकर भीड़ में हाथ छूटना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। आते समय रेल के स्टेशन के सामने ही हाथ छूटा जा रहा था, संध्या-समयवाली तो खैर बहुत बड़ी भीड़ थी। पर साथ ही उसे यह भी मालूम हुआ कि दोनों के लिये यथेष्ट किराया नहीं है, तो उसे फिर एक भय-सा मालूम हुआ। हाथ के कौर को रोककर बोली—"तो फिर क्या होगा ?"

रामधारी ने कहा—"यही सोच रहा हूँ।"...सचमुच वह यही सोच रहा था।

दोनों कुछ देर चुपचाप खाते रहे। फिर सुखिया ही बोली "मेरे पास कुछ रुपये हैं। उनसे शायद काम चल जाय।"

रामधारी को इस खबर से कोई खुशी नहीं हुई। वह तो गिरधारी की आज्ञा का पालन कर सुखिया को ले ही नहीं जाना चाहता था। इस कारण एक बहाने का सहारा ले रहा था, क्योंकि असली बात बताना नहीं चाहता था। रुखाई से बोला—"ये रुपये तुम्हारे पास कहां से आये ?"

सुखिया बोली—"अम्मा ने चलते दिन ये रुपये दिये थे। बोली थी कि बेटी परदेश जा रही हो, ये रुपये काम आयेंगे। चलकर अम्मा से पुछवा दूंगी।"

रामधारी को इस संतोषजनक उत्तर से भी प्रसन्नता नहीं हुई। पहले की तरह रुखाई के साथ बोला—"कितने रुपये हैं ?"

उत्तर देने में सुखिया कुछ झिझकी। वह यह बताना नहीं चाहती थी कि पांच रुपये दिये गये थे, और उनमें से डेढ़ रुपया खर्च हो चुका था। बोली—"साढ़े तीन हैं।"

रामधारी ने यों ही कहा—"साढ़े तीन दिये थे ?"

"नहीं, दिये तो पांच थे, पर साढ़े तीन ही रह गये ।"

रामधारी ने इसके उत्तर में ऐसे प्रश्न पूछा मानो उसे किसी भारी रहस्य का पता मिल गया हो—"डेढ़ क्या हुए ?"

"खर्च हो गये ।" झेंपती हुई सुखिया बोली, मानो वह रंगे हाथों पकड़ी गयी हो ।

रामधारी को क्रोध आ गया—"खर्च हो गये, यह तो मैं भी समझा । कैसे खर्च हो गये, कहां खर्च हो गये यह भी तो कुछ पता लगे । मैं तो बराबर साथ ही डटा हुआ हूं, कैसे रुपये खर्च हो गये समझ में नहीं आता । तू बहुत ही चालाक मालूम होती है, तभी तो भौजी की आंखों में धूल झोंक पाई ।" रामधारी को सचमुच क्रोध आ गया था ।

अब सुखिया को कंघी, बिंदिया वगैरह खरीदने का और उन्हें खोने का सारा किस्सा बताना पड़ा । सुनकर रामधारी गुम-सुम हो गया । उसे सारी स्त्री-जाति पर ही क्रोध आ रहा था कि मरने भी चलेगी तो कंघी-बिंदिया नहीं भूलेगी । उनका खाना खतम हो चुका था । पास ही रखे हुए घड़े से पानी लेकर उसने मुंह धोया, फिर निर्णयात्मक ढंग से बोला—"साढ़े तीन रुपये से भी तो काम नहीं चलेगा ।"

सुखिया भी खा चुकी थी । जूठ वगैरह बटोरती हुई वह बोली—"मालकिन बड़ी शरीफ हैं, न हो इनसे कुछ ले लिया जाय ।"...

प्रस्ताव बिल्कुल उचित था, पर दोनों के उद्देश्य अलग-अलग थे । रामधारी तो एक बहाना ढूंढ़ रहा था । वह केवल सुखिया के निकट ही यह बहाना कर रहा था, यह बात नहीं; वह अपने को भी यही बहाना दे रहा था । सुखिया के इस प्रस्ताव से उसके बहाने का आधार बिल्कुल खतम हो जाता था । सच तो यह है कि और आठ-दस आने पैसे मिलने ही से काम

बच जाता था। दोनों के रेल का किराया निकल आता था। पर यह विचार रामधारी को पसन्द कब था, झुंझलाकर बोला—"अब मैं दुनिया-भर से भीख मांगता फिरूं?" कहकर उसने मुंह बिचका लिया।

यह बात तो सच है कि रामधारी ने जीवन में कभी किसी के सामने हाथ नहीं पसारा था। उसकी जरूरतें बहुत थोड़ी थीं। वे आसानी से पूरी हो जाती थीं। फिर वह किसी से कुछ मांगता क्यों? उसकी एक ही निजी जरूरत थी। वह थी भंग के लिये पैसों की। सो भाई से ये पैसे मिल ही जाते थे। पर इस समय वह इस कारण नाराज नहीं हुआ था।

सुखिया बोली—"तो फिर क्या होगा?" उसके स्वर में भय तथा निराशा थी।

रामधारी ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। सुखिया कुछ देर रुककर प्रार्थना के स्वर में बोली—"पर चाचाजी, मेरी तबियत खराब हो रही है।"

रामधारी ने एक बार कनखी से बर्तनों को साफ करती हुई सुखिया की ओर देखा। सचमुच उसके चेहरे से ज्ञात होता था कि उसे तकलीफ है, पर पिथौरा में उसे वापस ले जाना असंभव था। ऐसा करने पर गिरधारी भी उससे नाराज होगा और जमुना भी। फिर जिस बात के लिये इतना दूर आना हुआ, वह तो रह जायगी, और जगहँसाई होगी सो ऊपर से। जोरावरसिंह की नाक कट जायगी। उसने चेहरे को कड़ा करते हुए कहा—"तेरा पिथौरा जाना नहीं हो सकता।"

रामधारी के ये वाक्य इतने निर्मम मालूम हुए कि सुखिया के हृदय की गति रुक-सी गयी। उसके सामने सारा जगत् जैसे मलिन पड़ गया। शरीर कड़ा हो गया, आंखें पथरा-सी गयीं। पेट के नीचे एक अजीब बेचैनी-सी मालूम होने लगी। जिस

बर्तन को वह साफ करने में लगी हुई थी, वह हाथ से अलग हो गया।

पर रामधारी निर्मम और निश्चल होकर बाध की खटिया पर बैठा रहा। वह इस समय समाज के दण्ड का मूर्त्त रूप हो रहा था जिसमें न दया थी, न कोमलता। शायद उसमें मानवता भी नहीं थी। कई मुहूर्त्त तक दोनों अपनी-अपनी जगह पर जैसे-के-तैसे बैठे रहे।

अन्तिम प्रयास के तौर पर सुखिया ने कहा—"पर चाचाजी, तुमने तो अपनी आंख से देखा कि मेरी क्या गति हो रही थी।"

रामधारी के सामने वह दृश्य आ गया, जिसे देखकर वह सुधबुध ही भूल गया था, और वह लपक कर सुखिया की बगल में जाकर खड़ा हो गया था। वह चौंक पड़ा। उसका जो कड़ा तथा रूखा रूप था, उसमें फर्क आ गया। निर्ममता की जगह परेशानी और असहायता झलकने लगी। इसी दृश्य को वह भुलाना चाहता था। इसी दृश्य ने तो उसे सन्देह में डाल दिया था। नहीं तो क्या था?

फिर भी जी कड़ा करके वह चुप रहा। अजीब विपत्ति थी। न तो वह सुखिया को पिथौरा वापस ही ले जा सकता था और न उसे छोड़कर चले जाने में ही कोई भलाई थी। न तो आगे बढ़ सकता था, न पीछे हट सकता था, ज्यों का त्यों रहना तो असम्भव था। जीवन में ज्यों का त्यों रहने के लिये कोई गुंजाइश नहीं है। आगे बढ़ो या पीछे हटो। पर यहां तो....। पर इसके लिये कौन जिम्मेदार था। वह तो नहीं था। फिर वह क्यों भुगते। वह क्यों परेशान हो, वह क्यों त्याग करे? एकाएक उसका चेहरा फिर कड़ा पड़ गया, बोला—"पर इसके लिये जिम्मेदार कौन है? तुम्हीं ने तो सारा काम बिगाड़ कर रख लिया।"...

सुखिया यंत्रचालित-सी फिर बर्तन साफ करने लगी थी।

बोली—"पर चाचाजी जब ऐसा ही करना था तो मुझे बचाया क्यों ? जैसा होता निपट लेती। जो कुछ होना हो जल्दी हो जाय, अब तो मुझसे सहा नहीं जाता।...." कहकर वह सिसकने लगी, पर साथ-साथ बर्तन भी मांजने लगी। यही स्त्री का भाग्य था। सुख हो दुःख हो, उसे अपना काम करना ही है।

रामधारी सिर पर हाथ रखकर सोच रहा था। उसकी कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था। सबसे बड़ा दुःख यह था कि भंग की गोली खतम हो गयी थी, नहीं तो इतना दुःख नहीं होता। जब सुखिया बर्तन मांज चुकी, और अब कोई न कोई निर्णय करना जरूरी हो गया, तो एकाएक रामधारी ने अपने को सुखिया से कहते पाया—"नहीं, मैं तुम्हें बदमाशों के हाथ छोड़ नहीं सकता...." फिर मानो आगे जो कुछ कहना चाहता था, उसमें अन्तर्निहित साहस से घबराकर वह चुप हो गया।

सुखिया ने इसका अर्थ यह लगाया कि उसका चाचा उसे पिथौरा वापस ले जायगा। उसे इस बात से इतनी खुशी हुई मानो नवजीवन का दान पाया। वह करीब-करीब दौड़कर रामधारी के पास पहुँची, और उसके पैरों पर गिर पड़ी। बोली—"तो जल्दी पिथौरा चलो, मेरी तबियत खराब मालूम हो रही है।"

सुखिया के पैर छूने से तथा उसकी बातों से रामधारी को एक अजीब घिन-सी मालूम हुई। उसने जल्दी से पैर छुड़ा लिया और हटकर बोला—"नहीं, नहीं; मैं तुम्हें पिथौरा नहीं ले जाऊँगा।"

सुखिया की हालत ऐसी हुई जैसे वह एकाएक स्वर्ग के उद्यान से गिराकर नरक के जलते हुए कुण्ड में डाल दी गयी हो, बोली—"क्या ?" और उससे कुछ कहा ही नहीं गया।

रामधारी ने कहा—"मैं तुम्हें पिथौरा नहीं ले जा सकता,

साथ ही गुंडों के हाथ में छोड़ नहीं सकता, इसलिये मैं भी पिथौरा नहीं लौटूँगा; तुम्हारे ही साथ रहूँगा।....”

सुखिया ठीक-ठीक बात समझ नहीं पायी, पर वह इतना समझ गयी कि अभी उसे अकेली छोड़कर नहीं जाया जा रहा है। इसी से उसे बड़ी सान्त्वना मिली। जो सर्वस्व खोने की आशंका कर रहा हो, उसके लिये कुछ बच जाना यही क्या कम था।

आठ

सेहरसिंह पिथौरा का मुखिया था, इसलिये केहरसिंह गाँव का 'प्रिन्स आफ वेल्स' था। सेहरसिंह की सारी ताकत इस बात में थी कि वह मुखिया था, नम्बर एक काँइया था तथा पुलिस से मिला रहता था। जब-तब दारोगाजी की बोहनी करवा देता था। अवश्य इससे उसे भी रुपया-अधेली का फायदा रहता था। पर सबसे बड़ा जो फायदा था वह यह था कि गाँव में उसका सिक्का जमा हुआ था। ऊपर से सब उसकी इज्जत करते थे; भीतर-भीतर भले ही सभी उससे डरते तथा जलते हों।

केहरसिंह अभी हाल में शहर से एक ग्रामोफोन ले आया था। गांव में इसकी बड़ी धूम थी। गांव में तो जैसे एक जोश-सा आ गया। कोई ग्रामोफोन की शक्ल पर हैरान था तो कोई रेकार्ड पर फिदा था। गाने नौजवानों की जीभ पर हो गये। गांव में पहली ही बार ग्रामोफोन आया था, इसलिये पहले ही रोज सब लोग उसके बाजे को सुनने के लिये दौड़ पड़े। कुछ बुजुर्ग और स्त्रियां बची हों तो बची हों, बाकी सब लोग आये

थे। सब लोग केहरसिंह से खुश थे। स्वयं सेहरसिंह जहाँ बाजा बज रहा था, वहाँ नहीं आये, पर वे दूर से लोगों के आने-जाने की चहल-पहल सुनते रहे और मन ही मन बड़े गौरव का अनुभव करते रहे कि यह अच्छी चीज रही कि बिना बुलाये सब लोग दरवाजे पर आ रहे हैं। जिस समय केहरसिंह ग्रामोफोन लेकर शहर से आया था, उस समय वे मन ही मन बहुत नाराज हुए थे कि लड़के ने नाहक को एक अंजुली-भर रुपये बरबाद कर दिये; पर जब उन्होंने दूर से बैठे-बैठे लोगों की चहल-पहल देखी तो मन ही मन लड़के की बुद्धि की सराहना करने लगे। उन्हें इस लड़के से यह उम्मीद थी कि वह उनके वंश के नाम को उज्ज्वल कर सकेगा। अपत्य स्नेह से उसका मन विगलित हो गया।

सब आये, पर गिरधारी नहीं आया। जो लोग पहले दिन नहीं आये वे दूसरे दिन आये, जो तब भी नहीं आये वे तीसरे दिन आये। गिरधारी जो नहीं आया था, उसमें कोई विशेष कारण नहीं था, वह अपनी मुसीबतों में इतना परेशान था, कि वह नहीं आया। रामधारी सुखिया को लेकर गया तो खुद भी नहीं आया। महीना-भर के करीब हो गया; पर रामधारी का कुछ पता नहीं। सुखिया से छुटकारा मिला, इससे तो गिरधारी कुछ खुश था, पर रामधारी के न रहने से सब काम-काज में बड़ा हर्ज हो रहा था। जमुना भी इन दिनों बीमार रहने लगी थी। इसलिये घर के और बाहर के सब काम-काज गिरधारी के मत्थे ही आ पड़े थे। इसी कारण बहुत इच्छा होते हुए भी गिरधारी ग्रामोफोन सुनने नहीं जा सका था।

नहीं, गिरधारी को सुखिया के मामले में केहरसिंह पर शक नहीं था। उसे तो, बल्कि जमुना को भी, अपने ही एक पट्टीदार मुन्नासिंह पर सन्देह था। यह अपने बाप का इकलौता लड़का था। बाप ने बहुत पढ़ाना चाहा था, पर पढ़ाई छोड़कर भाग

जाता था। सिर में तेल लगाकर इधर-उधर घूमता फिरता था। बाप मर गया था, फिर भी होश नहीं आया था। शहर को बहुत दौड़ा करता था। इतनी ही उम्र में, मुकदमेबाजी के लिये तीस की उम्र कम ही है, वह मुकदमेबाज के रूप में मशहूर हो चुका था। सेहरसिंह भी उससे घबड़ाता था। इसी पर पति-पत्नी दोनों का सन्देह था।

कुछ भी हो, केहरसिंह ने तो खयाल नहीं किया कि गिरधारी नहीं आया, पर सेहरसिंह को इस बात का बड़ा मलाल रहा कि गिरधारी ग्रामोफोन सुनने के लिये उसकी चौपाल में क्यों नहीं आया। उसने इस बात को एक अपमान के रूप में लिया। उसने और पता लगाया तो मालूम हुआ कि रामधारी भी नहीं आया। खबर देनेवालों ने तो यह भी खबर दी कि रामधारी बहुत दिनों से दिखाई नहीं पड़ा। सेहरसिंह को बड़ा ताज्जुब हुआ कि इतने दिन से रामधारी बाहर गया हुआ है, और उसे पता नहीं लगा। उसने इस बात को भी एक तरह से अपनी हेठी के रूप में लिया।

सेहरसिंह ऐसी किसी बात की तलाश में रहा करता था। उसने सहजात बुद्धि से यह भी समझ लिया कि इसी बात से कोई ऐसी बात निकल सकती है जिससे गिरधारी की अकड़ निकल जाय। वह शायद अपने को जोरावरसिंह का लड़का समझकर उससे ऐसा व्यवहार करने की हिम्मत करता है। नहीं तो सब आये, वह क्यों नहीं आया? वह कौन तीसमारखाँ है।

सेहरसिंह के स्वभाव में जल्दबाजी नहीं थी। जल्दबाजी से वह दूर रहता था। वह जानता था कि हथेली पर सरसों नहीं जमा करती। प्रत्येक काम में कुछ समय लगता है। अनुकूल समय की प्रतीक्षा करनी चाहिये, और जब समय अनुकूल

आ जाय तो हथौड़ी की चोट लगानी चाहिये। वह मौका देखने लगा।

थोड़े दिन में सेहरसिंह को यह भी पता लगा कि गिरधारी की बड़ी लड़की सुखिया भी गाँव में नहीं है। इस खबर के मालूम होते ही सेहरसिंह की बाछें खिल गयीं। साथ-साथ नाइन ने यह भी बताया कि जमुना बहुत बीमार रहती है और किसी से बातचीत करना पसन्द नहीं करती। सेहरसिंह की इस नाइन से बड़ी दोस्ती थी। आज की नहीं, जब यह नाइन जवान थी तभी की थी। सेहरसिंह की मां बहुत पहले ही मर चुकी थी, इसलिये सेहरसिंह जब कभी मौका लगता था तो इसे रात को भी अपने पास बुलाया करते थे। पर यह बात बहुत पहले की है। अब सेहरसिंह बुड्ढा हो चुका था। नाइन के भी बाल पक रहे थे, पर वह प्राचीन काल की मित्रता इतनी तो बाकी थी ही कि सेहरसिंह इसके जरिये से जब इच्छा होती थी गाँव के भीतरी भेदों का पता लगाया करते थे। कुछ दिनों से इस नाइन का एक लड़का बीमार था, तभी बातें मालूम होने में देर हो गयी थी।

सेहरसिंह ने गिरधारी के घर की सब खबरों को दो और दो-चार करके देखा। फिर उसने कुछ नतीजे निकाले। उसका चेहरा गम्भीर हो गया। फिर वह एक लाठी लेकर उधर चल पड़ा जिधर गिरधारी का खेत था।

गिरधारी अभी तक खेत ही में था। सेहरसिंह को अपने खेत की तरफ आते हुए देखकर गिरधारी के चेहरे पर बल पड़ गये। वह यह जानता था कि सेहरसिंह बिना कारण कहीं नहीं जाता, जब कहीं जाता है तो अवश्य कोई न कोई अपकर्म उसका ध्येय होता है। पर ऊपर से उसे इज्जत तो दिखाना जरूरी था ही। विशेषकर इन दिनों वह इस सम्बन्ध में बहुत

सचेत हो गया था। उसने झट से सेहरसिंह को 'जय रामजी की' किया। सेहरसिंह रुक गया और एकदम उसी जगह पर आकर खड़ा हो गया जहाँ गिरधारी पानी की एक नाली को सम्हाल रहा था। सेहरसिंह ने कहा—"सब ठीक है न ?"—फिर जैसे यों-हीं पूछ बैठा—"रामधारी दिखाई नहीं पड़ रहा है; क्या कुछ बीमार है ?"

गिरधारी का हृदय धक् से हुआ। न मालूम क्यों उसे यह प्रश्न अच्छा नहीं मालूम हुआ। उसने कहा "नहीं, वह बाहर गया है।"

सेहरसिंह ने बैलों की जोड़ की तरफ देखते हुए कहा—"बाहर कहाँ गया, कोई मुकदमा है क्या ? मुझे तो पता नहीं लगा।"

गिरधारी ने बात बनाते हुए कहा—"नहीं मुकदमा नहीं यों ही घूमने-घामने गया है, बहुत दिनों से छटपटा रहा था कि घूमने जाऊँगा, मैं ने कहा जाओ...।"

सेहरसिंह सारी दुनिया को चराये हुए था, वह जानता था कि किसान यों ही घूमने नहीं जाया करते, बोला—"अच्छा ?"

फिर एकाएक बिलकुल पास आते हुए चुपके से बोला—"रामधारी तो घूमने गया, और सुखिया कहाँ गयी ?" अबकी उसकी बातों में केवल सरल कौतूहल नहीं था, बल्कि भयंकर डाँट थी। वह सीधा-सीधा गिरधारी की आँखों के अन्दर ताक रहा था।

प्रश्न की गुस्ताखी से गिरधारी घबरा गया। उसे ऐसा मालूम हुआ कि जैसे सबको सब-कुछ मालूम हो चुका है। वह घबरा गया। फिर भी निराशा के साहस में बोला—"सुखिया अपने मामा के यहाँ गयी है....।"

यह कहकर भी गिरधारी को बड़ा अफसोस हुआ, क्योंकि सुखिया का ननिहाल यहाँ से दस कोस के अन्दर ही था, और

सेहरसिंह-जैसा दुष्ट तथा प्रभावशाली व्यक्ति अनायास ही वहाँ से खबर मँगा सकता था। पर बात मुंह से निकल चुकी थी। अब उस पर डटे रहने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था।

सेहरसिंह ने अबकी बार बिल्कुल पुलिसवालों का लहजा अख्तियार किया, बोला—"देखो यह तो मुझसे उड़नघाइयाँ न बताओ। हमको सब मालूम हो चुका है। हम तो तुम्हें मदद करने आये थे, पर तुम तो मुझसे झूठ ही बोलते जा रहे हो। साफ-साफ क्यों नहीं कहते कि तुम्हारा लायक भाई तुम्हारी लड़की को लेकर भाग गया है। भाई इतना बड़ा हुआ, उसकी शादी नहीं की, लड़की इतनी बड़ी हुई, उसकी शादी नहीं की। जो होना था सो हुआ। भयंकर अनाचार हुआ और उसे छिपा रहे हो? कुछ धरम का भी ख्याल रक्खो।"

गिरधारी ने जो यह सुना तो उसके पाँव के नीचे से जमीन खिसक गयी। सेहरसिंह जो-कुछ कह रहा था, वह तो सत्य से भी भयंकर था। केवल लड़की नहीं, वह तो भाई को भी ले बीता था। और गिरधारी जानता था कि आज सेहरसिंह जो कह रहा है कल सारा गाँव वही कहेगा। यह तो अच्छा लेने का देना पड़ गया। इससे तो अच्छा था कि वह खुद जाता। रमधरिया बड़ा गधा निकला। न मालूम कहाँ फँस गया। अब तो उसके पास कोई जवाब भी नहीं है। वह अपनी बिरादरी को जानता था। वहाँ तो किसी बात की कहने भर की देर थी। सत्य को कौन देखता है? सब दूसरे की मुसीबत पर मजा देखने चलते हैं। गिरधारी को ऐसा मालूम हुआ जैसे एक ही मुहूर्त्त में उसके लिये सारे जगत् का अन्त हो गया। इसी सेहरसिंह की वह बराबरी करना चाहता था। पर अब तो भाग्य ने उसे कहीं का नहीं रखा। लड़की ने उसे बरबाद कर दिया, और उस बरबादी में जो कुछ कसर थी, उसे रामधारी ने पूरा कर दिया। यदि

रामधारी ठीक समय पर लौट आता तो वह बिरादरी से निबट लेता, पर यहाँ तो दो-दो आदमी गायब हैं, इन दोनों के एक साथ गायब होने की वह व्याख्या कैसे कर सकता था।

गिरधारी घबड़ाकर बोला—"नहीं, नहीं; यह बात नहीं। रामधारी-सा भाई लाख में एक होता है। उसमें कभी कोई कुचाल देखने में नहीं आयी।"

सेहरसिंह दबनेवाला नहीं था। वह तो जीवन भर दूसरों की मुसीबत से फायदा उठानेवाला था। मुसीबत ही वह मौका था जब उसकी दाल गलती थी। दूसरों की मुसीबत ही वह खमीर थी जिससे उसका भाग्य उठता था। उसने निर्भय तरीके से कहा—"यह तो हम से उड़ो मत। अब तो बात बहुत दूर जा चुकी है।" फिर झूठ बोलते हुए कहा—"दारोगाजी पूछते थे तो मैंने तुम्हें बचाने के लिये कहा कि कहीं ननिहाल वगैरह गये होंगे। मैं तुम्हें बचाना ही चाहता हूँ। आखिर जोरावरसिंह के लड़के ही हो, वे हमारे दोस्त थे, पर तुम तो हमसे भी उड़ रहे हो, फिर हम क्या करें? और धर्म का मामला ठहरा।"

गिरधारी ने जो दारोगा का नाम सुना तो वह और भी घबड़ा गया। इतना तो उसे मालूम था ही कि इस इलाके के दारोगा के साथ सेहरसिंह का हमेशा अच्छा रब्त-जब्त रहा है। वह कानून से बिल्कुल अपरिचित था। उसे यह नहीं मालूम था कि पुलिस किस मामले में फँसा सकती है, और किस मामले में नहीं। उसने यह जो सुना कि दारोगाजी इस विषय से परिचित हैं, बस उसकी फूँक सरक गयी। दारोगा का नाम सुनते ही उसे यह भी डर हुआ कि कहीं रामधारी ने अधिक जोश दिखाकर सुखिया को मार न डाला हो। अदालत, जेल, फाँसी सब एक मिनट में उसकी आँखों के सामने घूम गयी। वह गिड़गिड़ाकर बोला—"मुखिया, तुम अगर नहीं बचाओगे तो हम तो मर

जायँगे। हमें तुमसे बड़ी उम्मीद है।"

मेहरसिंह ने जो गिरधारी को इस तरह गिड़गिड़ाते देखा, तो उसकी बाछें खिल गयीं। जालिम को अपने जुल्म की सफलता पर जितनी खुशी होती है, उतनी किसी बात पर नहीं होती। उसने कहा—"हम तो तुम्हें बचाने के लिये तैयार हैं, पर तुम तो हमसे भी सब बात छिपा रहे हो। हमें सही बात मालूम हो जाय, तब तो हम तुम्हारी कुछ पैरवी करें; नहीं तो दारोगा जी का तो यही ख्याल है कि रामधारी सुखिया को लेकर भाग गया।"

गिरधारी एक मिनट के लिये हिचकिचाया, फिर उसने एकाएक एक फैसले पर पहुँचते हुए कहना शुरू किया—"मुखिया, तुम्हें तो सब मालूम है। लड़की को हमल रह गया था, इसीलिये रामधारी को भेजा कि उसे गयाजी में कर आवे।" गिरधारी सच बोला, पर फिर भी अन्त में आकर काशीजी की जगह गयाजी कह दिया।

सुनकर मेहरसिंह ने चेहरा गम्भीर बना लिया, बोला—"मामला तो बहुत ही खराब है, चाचा से नाजायज ताल्लुक, और फिर लड़की को छोड़ आना। रामधारी तो खैर भागा हुआ है, पर तुम्हें सात साल की नप सकती है।"

गिरधारी ने कुछ मामूली प्रतिवाद करते हुए कहा—"चाचा से ताल्लुक नहीं, पर मुखिया ऐसा करो कि हम बच जायँ, और हमारे कुल पर कोई कलंक न लगे।"

मेहरसिंह गम्भीर होकर बोला—"रामधारी की तो मैं कुछ कहता नहीं। तुम्हें मैं बचा सकता हूँ, पर दारोगाजी को जानते हो, एक ही काँइयाँ हैं, कुछ खर्च-पत्ता लगेगा, ऐसा नहीं होगा कि मुफ्त में काम बन जाय।" फिर रुककर बोला—"पर मैं जहाँ तक हो सकेगा कम में करा दूँगा, सो यह मेरा काम रहा।"

गिरधारी यदि जेल से डरता था. तो खर्च से उससे कम नहीं डरता था। फिर रामधारी को उसने चालीस रुपये देकर भेजे थे। चा-ली-स। घर पर कोई बड़ी पूँजी नहीं थी। बोला—"जानते ही हो हमारी हैसियत, दस-पांच रुपये से काम बन जाय ऐसा कर दो. नहीं तो मुखिया हम तो मर जायँगे।"

एक पक्के दूकानदार की तरह सेहरसिंह ने यह कहा—"देखो भाई, मुझे इसमें कुछ लेना-देना नहीं है। मैं तो कहता हूँ कि तुम खुद जाकर दारोगाजी से सब तय कर लो। मै तो सिर्फ इसमे इसलिए पड़ा कि अपने घर की बात है, जैसे तुम्हारी आबरू गयी तैसे मेरी गयी। अगर तुमको जेहल हो गया, और जोरावरसिंह की नाट कट गयी, तो मेरी तो उससे पहले कट गयी।" फिर कुछ सोचकर बोला—"पर भाई पांच सौ से कम मे कुछ नहीं होगा।"

"पांच सौ ?" गिरधारी तो बिल्कुल अचम्भे में आ गया। बोला-—"पांच सौ! मै गरीब आदमी कहाँ से पाऊँगा? मुझे बेच भी डालोगे मुखिया तो पाँच सौ नहीं मिलेगे।"

सेहरसिंह ने चलने के लिये रुख दिखाते हुए कहा—"तो मैं नहीं जानता। दारोगा कोई किसी का अपना थोड़े ही है, वह पाँच सौ से कम कभी न लेगा।" कहकर फिर एक कदम पीछे हटकर मानो अब वह जा ही रहा है, बोला—"पर सोच देखो, अगर बात खुल गयी तो बिरादरी को ही पाँच सौ खिलाने-पिलाने में लग जायँगे। और दोनों भाई जेहल करोगे से अलग। फिर यह भी याद रखना कि तुम्हारे और लड़के-बाले है, जिनकी तुम्हें शादी-ब्याह करना है..।"

गिरधारी पहले से अधिक गिड़गिड़ाता हुआ बोला—"पर मुखिया मैं तो मर जाऊँगा।"

सेहरसिंह ने चलना शुरू कर दिया, बोला—"पर सोचकर

देखना। मेरी उम्र साठ के करीब हो रही है, पर सठिया नहीं गया, जो सलाह दे रहा हूँ देखोगे कि बावन तोला पाव रत्ती ठीक है।" वह जल्दी-जल्दी चलने लगा।

गिरधारी उसके पीछे-पीछे चलता हुआ बोला—"मुखिया बाप की नाक तो बचानी ही है, कुछ कम कर दो, जिससे मैं दे सकूँ।"

सेहरसिंह खड़ा हो गया। वह समझ गया कि अब सौदा पट चुका है। बैल बेचकर हो या जिस तरह हो, वह रुपया तो देगा ही। बस सौदा पटने में दस-बीस की इधर-उधर होगी। बोला—"लाओ दस-पन्द्रह कम करा दूँगा।"

अन्त तक साढ़े चार सौ में सौदा तय हुआ। गिरधारी बोला—"अब तो फँस गया हूँ, रुपये दूँगा ही, पर एक दिन में तो नहीं दे सकता। बैल वगैरह बेचना पड़ेगा, तभी रुपये दे सकूँगा।"

मुखिया ने तसल्ली देते हुए कहा—"सो परवाह मत करो। हफ्ता-दस रोज में दे देना, पर आज कम-से-कम सौ रुपये तो देना ही जिससे दारोगाजी का कुछ धीरज तो बँध जाय। नहीं तो कहीं वारंट काट दिया तो फिर कुछ नहीं हो सकेगा। जब तक दारोगाजी के हाथ में मामला है तभी तक यें कर सकते हैं। आगे निकल गया फिर तो एक हजार भी दोगे तो कोई नहीं लेगा।"

सौदा तय हो गया और सेहरसिंह बहुत खुश होकर घर चला गया। साढ़े चार सौ कोई मामूली रकम नहीं थी।

नौ

रामधारी और सुखिया बनारस में एक कोठरी लेकर रहने लगे। रामधारी मजूर का काम करने लगा, और इस प्रकार दोनों का गुजारा चलने लगा।

रामधारी को यह जीवन कतई पसन्द न था। वह देहाती था, और देहात की मिट्टी-पानी में ही वह पला और बढ़ा था। शहर प्रथम आश्चर्य के रूप में उसे बहुत अच्छा ज्ञात हुआ था, पर रोज के रहने के लिये वह देहात को ही पसन्द करता न कि शहर को। फिर भी रामधारी में एक विशेष ढंग की कर्तव्य-बुद्धि थी, और उसके लिए वह सब कुछ त्याग करने के लिये तत्पर रहता था। इसी के कारण वह दुखी होकर भी रुका रहा।

हाँ एक बात से उसे बड़ा दुख रहा। उसे सब लोग सुखिया का पति समझते थे। जब उसने इसका प्रतिवाद किया, और कहा कि उनमें चाचा-भतीजी का सम्बन्ध है, तो लोगों ने तो मुंह पर कुछ भी नहीं कहा, पर पीठ-पीछे वे और भी अधिक

हँसे। वे यह कहने लगे कि ऐसा बहुत देखा है। सुखिया की गर्भवती अवस्था को यह लोग देखकर ही ताड़ जाते थे, और ये लोग उस पर अजीब-अजीब तरह के अभियोग लगाते थे। कई बार रामधारी ने अपने कानों से लोगों को यह कहते सुना कि वह इस लड़की को भगाकर लाया है, और अब अपने को कहीं चाचा बताता है, तो कहीं कुछ बताता है।

रामधारी ने जब-जब ऐसी बातें सुनीं तो उसे बड़ा दुख हुआ। वह लोगों को संतुष्ट करने के लिये सख्त जाड़ा होते हुए भी कोठरी के बाहर सोता था, सुखिया से कम-से-कम बात करता था, पर इससे पास-पड़ोस के लोगों में संदेह की निवृत्ति न होकर उनका सन्देह और बढ़ता था। लोग कहते थे कि उल्लू बना रहा है, जैसे हम कुछ समझते नहीं।

सुखिया के भी कानों में लोगों की बातें पड़ जाती थीं, पर वह रामधारी से इन बातों को छिपाती थी। उसे यह डर था कि कहीं रामधारी ऐसी बातों को सुन ले तो उस पर नाराज न हो जाय। इस कारण रामधारी को उतना ही मालूम होता था जितना उसे खुद सुनने का मौका मिलता था।

रामधारी ने अन्तिम रूप से कुछ सोचा नहीं था। उसके ऐसे एक व्यक्ति के लिये किसी विषय पर एक अन्तिम नतीजा तथा लक्ष्य लेकर चलना सम्भव नहीं था। ज्यों-ज्यों घटनायें घटित होती जाती थीं, और उसके सामने समस्यायें आती-जाती थीं, त्यों-त्यों वह उनका मुकाबला करता था। उसके पास प्रत्येक समस्या के लिये तैयार सुन्दर हल नहीं थे। वह घटनाओं से परिचालित होता था, घटनाओं को अपने ढंग से ढालना नहीं जानता था।

रामधारी शहर में नया था, पर उसने धीरे-धीरे रोटी-दाल-सम्बन्धी तथा वासस्थान सम्बन्धी सब प्रश्नों को सुलझा लिया

था। यह मानना पड़ेगा कि सुखिया इस मामले में उसका पूरा सहयोग करती रही। पर दोनों को पिथौरा की याद आती रहती थी। पर अपने-अपने ढंग से।

रामधारी यों तो कामधाम में जाता, पैसे भी ले आकर सिर्फ भंग के पैसे काटकर सुखिया के सुपुर्द कर देता, पर वह बहुत चिड़चिड़ा हो गया। जरा-जरा-सी बात पर कुरुक्षेत्र-सा मचा देता। सुखिया तो उससे डरा ही करती थी। जिस समय वह मजदूरी के लिये चला जाता, उसी समय सुखिया को चैन मिलता, बाकी समय डरते-डरते बिताती थी। रामधारी सुखिया पर यह जो अकारण या बहुत थोड़े कारण पर बिगड़ा करता, इसका कारण यह था कि वह अपने सारे दुर्भाग्य को उसीके कारण उद्‌भूत समझता था। उसे गांव में भी कुछ कम काम नहीं करना पड़ता था, पर वह वहाँ पर यह समझता था कि अपने तथा अपनों के लिये काम करता है, पर यहाँ तो बात ही दूसरी थी। वह सुखिया को भतीजी समझते हुए भी भतीजी, या अपनी नहीं समझ सकता था। कभी उनका यह सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ तथा सुन्दर था, पर अब उनके बीच में एक ऐसी खाई उत्पन्न हो चुकी थी जिसे वह कभी भी लांघने का न तो साहस ही करता था, और न इसके लिये उसमें इच्छा ही थी।

रामधारी यों कोई पर्दा-प्रथा का उपासक या विरोधी नहीं था। जैसा बाप-दादों के जमानों से होता चला आया था, उसी को वह उचित और अच्छा समझता था। उसीको वह स्वाभाविक भी समझता था। पर अब वह सुखिया के सम्बन्ध में यह चाहता था कि वह सम्पूर्ण रूप से अपने को उस कोठरी के अन्दर दिन-रात बन्द रखे जिसे उसने किराये पर ले रखा

था। इस सम्बन्ध में वह किसी भी तरह की ढिलाई को पसन्द नहीं करता था।

एक दिन मजदूरी से लौटने पर रामधारी ने सुखिया को एक पास-पड़ोस के पुरुष से बातचीत करते हुए देख लिया, उस समय तो उसने कुछ नहीं कहा। पर जब वह खाने को बैठा, तो उसने सुखिया को पचासों गालियाँ दीं, बोला—"तेरा जी नहीं भरा है। एक दफे तो कारिख लगवा चुकी, सो खुद तो जिन्दगी-भर के लिये गयी ही, मैं भी उसी में मर रहा हूँ। मैं तो दिन-भर जाकर नौकरी करूँ, सैकड़ों कच्ची-पक्की सुनूं, और तू यहां पर बैठी-बैठी लोगों से इशकबाजी करे।" अब शहर में थोड़े दिन रहकर ही रामधारी की भाषा बदल गयी थी। वह एकाध बार सिनेमा भी देख आया था। वह कहता गया—"मैंने बार-बार मना किया कि तू इन शहरवालों से न बोला कर। ये लोग एक ही बदमाश होते हैं, पर नहीं जिससे देखो उससे हँसने लगती है। मालूम होता है एक खसम से दिल नहीं भरा।"

इस प्रकार वह कहता ही गया। अकसर वह किसी न किसी बहाने से जब गुस्से में आता था तो इस प्रकार अनाप-शनाप कहने लगता था। सुखिया यों ही शरीर से परेशान थी, घर का सारा काम करता था, यद्यपि घर बहुत छोटा था, फिर भी दो का खाना पकाना, चौका-बर्तन तो करना ही पड़ता था।

इसी ढंग से उनका जीवन चलने लगा। रामधारी कभी कभी यह भी सोचता था कि वह उधर मजदूरी करने जाय, और सीधा पिथौरा चल दे, पर कुछ सोचकर रह जाता था। अवश्य वह अब पहले के मुकाबले में भंग का सेवन अधिक करता था। काशीजी तो खैर भंग के सम्राट का ही शहर ठहरा, फिर वह ऐसा क्यों न करता।

दस

केहरसिंह को यह मालूम हो गया कि सेहरसिंह इस प्रकार गिरधारी से रुपये ले रहा है। दुनिया में और किसीको न मालूम हो, पर उसे तो मालूम था कि सुखिया के लिए वह खुद जिम्मेदार है। पर उसने अपने पिता से यह जो सुना कि रामधारी अपनी भतीजी को भगा ले गया है, तो उसने इस बात को जोरों के साथ चारों तरफ फैलाना शुरू किया। यह बात नहीं कि वह इस बात को न फैलाता, तो बात नहीं फैलती, पर उसने उसे खूब तेजी से फैलाया।

बात के फैलते ही सारी बिरादरी में एक खलबली-सी मच गयी। अरे बाप रे, चाचा होकर भतीजी को लेकर भाग गया। लोगों की धर्मबुद्धि एकाएक बहुत जोर मारने लगी। सब लोग बिरादरी के सरपंच के नाते सेहरसिंह के पास पहुँचे, पर सेहरसिंह तो रुपये डकार चुका था, कुछ तो निबाहना था ही, उसने लोगों से कहा कि जाँच करूँगा, प्रमाण नहीं मिल रहा है। इस प्रकार बिरादरी के क्रोध की पहली बौछार तो रुक गई।

केहरसिंह ने अपने ढंग से इस परिस्थिति से फायदा उठाने की ठानी। सुखिया तो गयी, केहरसिंह को इसका कोई गम नहीं था। उसकी आँख तो सुखिया के बाद की बहिन बिलसिया पर लगी हुई थी। यद्यपि बिलसिया अपनी बड़ी बहन से चार साल छोटी थी, पर उसका स्वास्थ्य इतना अच्छा था कि वह अपनी उम्र से कहीं बड़ी मालूम होती थी। केहरसिंह चाहता था कि बिलसिया भी उसके हाथ लगे।

एक दिन केहरसिंह ने यह सुना कि जहां पर सेहरसिंह बैठते हैं, वहां पर सेहरसिंह और गिरधारी में कुछ गर्मागर्मी और तकरार-सा हो रहा है। गिरधारी कह रहा था—"एक जोड़ी बैल तो बेच चुका, सब पूंजी मिलाकर साढ़े तीन सौ दे चुका... ।"

उसे बीच में टोकते हुए ही सेहरसिंह ने कहा—"तो दे चुके तो कौन मेरे साथ एहसान किया, तुम जानो और दारोगाजी जाने। ऐसा जानता कि तुम ऐसे लालची हो, तो मैं इस झगड़े में कभी नहीं पड़ता। कहा बिरादरी का मामला है, नहीं तो कौन हरामजादा इसमें पड़ता।

गिरधारी चीं-चीं करके बोला—"तो मुखिया, मैं यह कब कह रहा हूं कि रुपये नहीं दूँगा। फसल हो जाने दो, सब चुकता कर दूँगा। मैं तो सिर्फ इतना ही कह रहा हूँ कि मुझे कुछ बखत दो......"

सेहरसिंह बोला—"फिर वही बात ? सौ बार कहा कि मुझसे इससे कोई मतलब नहीं, दारोगाजी माँगते हैं तो मैं तुम से कहता हूँ, नहीं तो यहां क्या पड़ा है। चाहे दो या न दो।'

गिरधारी ने कहा—"कह तो रहा हूँ कि दूंगा। गाय थी सो मर गयी। दो गाय और हैं, कहो तो बेच दें, पर लड़के बिना दूध-घी के मर जायँगे।"

सेहरसिंह ने चिल्लाते हुए कहा—"लड़के जिलाकर क्या करोगे? नाक कट जायगी तो फिर चमारों में भी नहीं गिने जाओगे। साँच को आँच नहीं। बिरादरीवाले सब जान गये, अब दंड पड़ेगा तो मालूम होगा। बिरादरीवाले जोर मार रहे हैं, पर दारोगाजी का इकबाल है कि सब मजबूरन चुप हैं।" फिर एकाएक ऊपर की धरनी की तरफ हाथ फेंकते हुए बोला—"अब तुम खुद ही सब कर लो। तुम्हारे कारण बीस बार दौड़ चुका। पूजा-पाठ में बड़ी अड़चन पड़ती है। अब मेरी यह उम्र थोड़े ही है कि हाकिमों के पास दौड़ता फिरूं।"

दोनों में इसी प्रकार बातचीत होती रही। अन्त में सेहरसिंह ने दस दिन की मुहलत दी, और यह कहा कि इन दस दिनों में यदि वह सौ रुपये न दे सका, तो बिरादरीवाले यदि दंड माँगे तो वह बचा न सकेगा।

जब गिरधारी सेहरसिंह के घर से निकल कर चला, तो उसका चेहरा बहुत उतरा हुआ था। अपमान जो कुछ हो सकता था वह तो हो ही रहा था। गाँव के लोग खुलेआम यह कह रहे थे कि रामधारी अपनी भतीजी को लेकर भाग गया है, पर अब तो उसके सामने आर्थिक सर्वनाश भी था। उसे ये सौ रुपये देने ही थे। यदि न दे तो यह साफ था कि बिरादरीवाले फौरन उस पर टूट पड़ें, और सौ का हजार लेकर छोड़ें। एक जमाना था जब वह सेहरसिंह-ऐसे लोगों से आंख मिलाकर ही नहीं अकड़कर बात करता था, पर आज यह हालत थी कि सेहरसिंह उसे कुत्ते की तरह डाँटता था, और उसे गाय बनकर सब सुनना और सहना पड़ता था। अब उसके सामने प्रश्न सम्मान का नहीं था, अब तो जान बचाने का प्रश्न था।

वह इसी उधेड़-बुन में पड़ा था कि गायों को बेच दे या बीघा-दो बीघा जमीन बेच डाले, पर वह किसी नतीजे पर पहुंच

नहीं पा रहा था। किसान को ढोर भी जमीन की तरह प्यारा होता है। फिर ये गायें पिता के जमाने की गायों की अवशेष थीं। इन्हें बेचने की कल्पना से ही उसे बड़ा दर्द हो रहा था। जमीन भी बेचने को दिल नहीं चाहता था। वह इसी उधेड़-बुन में चला जा रहा था।

अभी सेहरसिंह के घर से निकलकर सौ कदम भी नहीं आया था कि किसीने पीछे से पुकारा—"चाचाजी, चाचाजी !"

गिरधारी ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह अपने विचारों में डूबा हुआ था। पर पुकारनेवाला आगे बढ़ आया, और बोला—"गिरधारी चाचा, गिरधारी चाचा !"

गिरधारी ने जो मुड़कर देखा तो हंसता हुआ केहरसिंह था। केहरसिंह जल्दी से आगे आता हुआ बोला—"चाचाजी जय रामजी की।"

गिरधारी ने यथायोग्य उत्तर दिया, पर उसके मन में बड़ी शंका हुई कि न मालूम सेहरसिंह ने उसे क्यों भेजा है। शायद सेहरसिंह ने उसे इसलिये भेजा हो कि वह गिरधारी से कह दे कि मुहलत नहीं मिलेगी, और आज ही रुपया चुकता करना पड़ेगा। जिस समय आदमी पर लगातार मुसीबत पड़ती है, उस समय पत्ता खटकने पर भी वह यही समझता है कि उस पर शायद कोई और मुसीबत आयी। गिरधारी यही समझकर ठिठककर ऐसे खड़ा हो गया मानो वह आत्मरक्षा के लिये तैयार है। सूखी हँसी हँसकर बोला—"कहो भैया क्या बात है ?"

केहरसिंह बिल्कुल पास आकर बोला—"कोई बात तो नहीं है।" फिर निर्बोध की तरह हँसते हुए बोला—"पिताजी से आपकी जो बातचीत हो रही थी उसे मैंने सुना.......।"

गिरधारी का चेहरा और भी दुःखी हो गया। तो उसका अपमान ही नहीं हुआ, बल्कि एक और व्यक्ति के सामने हुआ।

केहरसिंह कहता गया—"मैंने सुना कि सौ रुपये के लिये आपकी आबरू खतरे में है, बस मुझे बड़ा रंज हुआ। पिताजी तो खैर मजबूर हैं, पर मैं आपकी मदद कर सकता हूँ।" कहकर वह रुक गया।

गिरधारी यह तो नहीं समझा कि कैसे केहरसिंह उसकी मदद कर सकता है, पर उसे इतना तो मालूम हो गया कि कोई नयी मुसीबत नहीं है। फिर केहरसिंह के कोमल हँसमुख चेहरे को देखकर उसे न जाने क्यों कुछ भरोसा हुआ। आखिर लड़का ही है, बाप से कहकर कुछ करा ही दे तो क्या मुश्किल है। उसका मन फिर आशा से डोल उठा। 'शायद उसे ढोर या जमीन कुछ भी न बेचना पड़े। यदि सेहरसिंह चाहे तो क्या दारोगाजी सौ रुपयों का गम नहीं खा सकते। जरूर खा सकते हैं। जरूर खा सकते हैं।' उसने उत्फुल्ल होकर कहा—"कैसे मदद करोगे?"

उसने ललचाई हुई आँखों से केहरसिंह की तरफ देखा। ईश्वर जब कोई मदद देते हैं तो स्वयं हाथ निकालकर थोड़े ही देते हैं, वे तो किसी बहाने से किसीसे मदद दिलवाते हैं। शायद केहरसिंह ही वह आदमी हो जिसके जरिये से वे इस दीन और अनाथ की मदद करें। कल सन्ध्या-समय उसने जाकर हनुमान जी के मन्दिर में घंटों सिर रगड़ा था, रोया था, कहा था कि हे स्वामी! हनुमान भक्त की सुध लो। यह व्यर्थ थोड़े ही जा सकता है।'

केहरसिंह बोला—"चलिये बताता हूं।"

दोनों साथ साथ चलने लगे। वे इस समय गांव के बहुत अधिक बसे हुए हिस्से से जा रहे थे। लोग अपने-अपने मकानों में काम कर रहे थे। अभी दोपहर को देर थी। गायें यत्र-तत्र जुगाली कर रही थीं। बड़ा मीठा दृश्य था। गिरधारी यों तो

सीधा मूड़ किये चलता था, पर केहरसिंह के साथ चलने के कारण वह इधर-उधर हरेक दरवाजे को देखता हुआ चल रहा था। कभी वह केहरसिंह-ऐसों की परवाह नहीं करता था, पर आज उसका दिन बदल गया था, आज वह गाँववालों को यह दिखाना चाहता था कि वह आगे-आगे चल रहा है और केहर-सिंह उसके पीछे-पीछे चल रहा है। उसे बड़े आनन्द का अनुभव हो रहा था। उसने अकड़ में गर्दन सीधी कर ली, और रास्ते में जो भी मिलता गया, उससे आँख झुकाकर नहीं, बल्कि आँख सामने करके मिला।

जिस समय ये लोग गाँव के इस अंश से हटकर अपेक्षाकृत झीने बसे हुए अंश में चलने लगे, उस समय सामने से मुन्ना-सिंह आता हुआ दिखाई दिया। हमेशा की तरह उसका बाल तेलों से चुपड़ा हुआ था, मुंह में एक बीड़ी थी, फक-फक धुँआ उड़ाता हुआ अन्यमनस्क-सा चला जा रहा था। गिरधारी ने बहुत चाहा कि वह उसे देखे, पर वह अपनी ही धुन में मस्त ऐसे चला जा रहा था कि उसने उन लोगों की तरफ निगाह तक नहीं डाली। कम-से-कम यही मालूम हुआ।

गिरधारी को बड़ा क्रोध आया। इसी दुष्ट के कारण उस पर ये सारी आफतें आयी हैं। उसमें एक अदम्य इच्छा हुई कि मुन्नासिंह पर टूट पड़े, उसके मुँह से बीड़ी छीन ले, और उसे गिराकर उसकी छाती पर चढ़ बैठे। उसने बड़ी कोशिश से अपने को दमन किया, केहरसिंह से बोला—"एक मछली सारे तालाब को गन्दा करती है........"

केहरसिंह इसका कोई अर्थ नहीं समझ सका। अस्पष्ट रूप से उसे कुछ डर भी मालूम हुआ कि न मालूम यह खूसट क्या कह रहा है, फिर भी उसने कहा—"हाँ चाचा यह तो है ही। तुलसीदास ऐसा कह गये।"

गिरधारी ने कहा—"इस मुन्नासिंह को देखा, अकड़ से जमीन पर पैर नहीं पड़ते।"

मुन्नासिंह से केहरसिंह का कभी कोई खास वास्ता नहीं पड़ा था। यों तो खैर गाँव के नाते तथा एक जाति होने के नाते जान-पहचान थी ही, पर वह अपना काम करता था, और वह अपना काम। अब जो गिरधारी ने उसकी बुराई की, तो कुछ कहना जरूरी था, बोला—"सुनता हूँ कि बड़े मुकदमे-बाज है।........"

गिरधारी बोला– "सिर्फ मुकदमेबाज ही नहीं, बहुत कुछ बाज हैं।" गिरधारी यों तो बहुत कुछ कहना चाहता था, पर इसलिये जब्त कर गया कि कहीं रहस्य का पता न दे दे।

मानो रहस्य के पता लगने में कुछ कसर थी। झूठे सम्मान की आशा कैसी मरीचिका-सी होती है।

केहरसिंह बोला—"हाँ फिर मुकदमेबाजी से सब बातें आ ही जाती हैं। पिताजी मुझसे बहुत कहते हैं कि आँख मूँदूँगा तो कौन काम करेगा, इसलिये सब काम समझ लो, पर मैं मुकदमों के मारे किसी काम के पास नहीं फटकता। वहां तो हर बात पर एक मुकदमा होता है।" वह मुस्कराया जैसे उसने कोई बहुत अच्छी बात कही हो।

मुकदमें के नाम से गिरधारी का ध्यान दूसरी तरफ चला गया। फिर अब गिरधारी का घर भी पास आ चुका था। गिरधारी अब इस बात के लिये लालायित हो रहा था कि वह इस बात को जाने कि केहरसिंह कैसे उसकी मदद करना चाहता है।

दोनो मकान के अन्दर गये। गिरधारी आगे-आगे, और केहरसिंह पीछे-पीछे। केहरसिंह इस मकान के नक्शे को अच्छी तरह जानता था। वह मकान की उस तरफ ताक रहा था जिधर

बिलसिया के होने की सम्भावना थी, पर उसके नेत्र निराश हुए। उधर कोई दिखाई नहीं पड़ा। बात यह है कि जमुना की तबियत अच्छी नहीं थी, और बिलसिया ही घर का सब काम सँभाल रही थी। इस समय वह चौके में थी।

गिरधारी उसे मकान के एक किनारे ले गया। गिरधारी के पास जितनी जमीन वगैरह थी उसको देखते हुए उसका मकान उससे कहीं अच्छा था। बात यह है कि जोरावरसिंह ने इस मकान को बनवाया था, और अपने ढंग से उसकी कुछ उच्चाकांक्षायें थीं। फिर जिस जमाने में यह मकान बनाया गया था, उस जमाने में परिवार के पास बहुत अधिक जमीन थी।

गिरधारी ने एक खटिया डाल दी, और दोनों उसी पर बैठ गये। गिरधारी ने खटिया इस ढंग से रखी थी कि उसके आधे हिस्से पर तो धूप थी और आधे हिस्से में छांह। गिरधारी धूप वाले अंश में बैठा। केहरसिंह को पसीना आ रहा था। बैठते हुए केहरसिंह ने फिर एक बार मकान की चारों तरफ निगाह डाली, फिर उसे निराशा हुई तो बोला—"चाचा कोई घर में नहीं है क्या ?"

गिरधारी ने इस विषय में कोई विचार नहीं किया था। उसने यह मान लिया था कि सब लोग हैं, और अपना-अपना काम कर रहे हैं। एकाएक जो केहरसिंह ने यह प्रश्न पूछा तो उसने चारों तरफ देखते हुए कहा—"सब भीतर होंगे" गिरधारी ने यह नहीं बताया कि जमुना और बिलसिया के अतिरिक्त सभी बच्चे खेत में होंगे। कोई गाय चरा रहा होगा, तो कोई अन्य कोई काम करता होगा। केहरसिंह के चेहरे की तरफ देखते हुए उसने कहा—"क्यों क्या कुछ पानी-वानी लावें।"

केहरसिंह ने सहमते हुए कहा—"बहुत गर्मी लग गयी

देखिये कितना पसीना आ गया। पर जब कोई है नहीं तो रहने दीजिये।"

गिरधारी ने कहा—"नहीं, नहीं, है क्यों नहीं सब खेलने चले गये होंगे।" फिर उसने जोर से पुकारा—बिलासी! ओ बिलसिया!

कहीं से उत्तर आया"—हाँ" और करीब-करीब साथ ही साथ आंगन में एक नवयुवती आकर खड़ी हो गयी। फिर सामने केहरसिंह को देखकर कुछ हिचकती हुई बोली—"क्या है बाबूजी?"

गिरधारी ने कहा—"इनके लिये कुछ पानी और खांड वगैरह ले आ।"

केहरसिंह ने कहा—"नहीं नहीं खांड नहीं लाना। कोई मेहमान थोड़े ही हूँ, घर का आदमी हूँ, थोड़ा पानी ले आओ।"

बिलसिया चली गयी।. केहरसिंह ने उसे दूर से देखा था, पर आज जो उसने उसे पास से देखा, तो उसके मस्तिष्क में आग लग गयी। सुखिया से यह कहीं अच्छी थी। मुँह तथा चेहरे का ढांचा वही था, पर रंग बिल्कुल गोरा था। आँखें बड़ी बड़ी और अलसायी हुई थीं, मानो युग-युग से किसीकी प्रतीक्षा कर रही हैं। सीने पर उभार था। मैला-कुचैला कपड़ा सीने के उभार को छिपाने के बजाय उसे और स्पष्ट कर रहा था। कमर मोटी-सी थी, पकड़े तो हाथ धस जाय। आँखों में एक हिरनी का-सा भाव था। बिलसिया सुखिया की तरह थी और नहीं भी थी। उससे अच्छी, ताजी और मुलायम थी। जीवन के रस से लबरेज।

केहरसिंह भूल गया कि वह क्या करना चाहता है इस बात को जानने के लिये एक व्यक्ति लालायित होकर उसीके बगल में बैठा हुआ है, और वह व्यक्ति और कोई नहीं इस नवनीत

कोमल सुषमा का बाप है। वह अपने ही विचारों में बहने लगा। कैसे इसे प्राप्त किया जाय, यही एकमात्र चिन्ता थी। सुखिया को तो उसने बहुत आसानी से प्राप्त कर लिया था। एक दिन सुखिया को देखकर उसने हँस दिया था, दूसरे दिन उसके ऊपर पास से एक टहनी उठा कर मारी थी, फिर एकाध बार चारों तरफ देखकर उसे पकड़कर चूम लिया था। फिर तो वह खुद ही चाहने लगी थी। पर केहरसिंह को यह प्रतीत हुआ कि बिलसिया को पाना मुश्किल होगा। बिलसिया के चेहरे में कोई ऐसी बात थी जिसमें उसको डर हो रहा था कि बिलसिया शायद न मिले। इस बात को सोचकर उसके चेहरे पर उदासी छा गयी। पर उसे पाना तो है ही। किसी भी हालत में उसे चखना तो है ही।

इस बीच में बिलसिया एक लोटे को बहुत सुन्दर तरीके से चमचमाकर माँजकर पानी भरकर ले आयी थी। साथ में एक ताम्बे की तश्तरी में खांड भी ले आयी थी। बिलसिया को देखकर केहरसिंह निराशा से छुटकारा पाकर उठा। एकाएक जैसे उसका सब सन्देह, सब भय तथा सब शंकायें दूर हो गयीं। उसने धूप से सोने की तरह चमचमाते हुए लोटे को और उसके अन्दर रखे हुए निर्मल तथा पारदर्शी जल को देखा, और उसके मन में एक आनन्द की लहर भर गयी। उसने लपक कर लोटे को ले लिया और कुल्ली करने लगा, फिर मुँह धोकर पानी पीने के लिये चुल्लू बाँधकर तैयार हो गया।

उधर से गिरधारी ने उसको हटकते हुए कहा—"यह क्या? यह क्या? थोड़ा खांड खाओ, इतने दिन पर आये हो, ऐसे पानी न पीने दूँगा।"

साथ ही बिलसिया ने खांडवाली तश्तरी को चुपचाप आगे बढ़ा दिया। अब तो पिता-पुत्री दोनों की जिद के सामने केहर-

सिंह को झुकना पड़ा। उसने खांड की एक डली उठाकर मुँह में रखी, और अबकी बार चुल्लू से पानी पीने की कोशिश न कर लोटा मुँह से लगाकर गट-गट पानी पी गया। जब उसने पानी पी लिया, तब बिलसिया लोटा और तश्तरी लेकर वापस चली गयी। केहरसिंह ने उसे पीछे से देखा तो हूबहू सुखिया मालूम पड़ रही थी। एकाएक उसे सुखिया की याद आयी। वह कहाँ होगी? पता नहीं। उसने इस दुखकर विचार को जल्दी से अलग कर दिया।

अब गिरधारी और केहरसिंह दोनों बैठकर बातचीत करने लगे। केहरसिंह अपने बाप का ही बेटा था, बोला—"चाचाजी जब तक आपकी हालत अच्छी थी तब तक हम कभी नहीं आये। आते तो न जाने क्या समझते। अब जो आज मालूम हुआ कि आप पर मुसीबत पड़ी है तो सोचा है कि अब काम नहीं लगा तो कब काम आयेंगे। इसीलिये आपके पीछे-पीछे चला।" उसने इतना कहकर उड़ती हुई दृष्टि से एक बार उस शून्य स्थान को देख लिया जहाँ कुछ देर पहले बिलसिया खड़ी थी, हवा मानो उसके सौन्दर्य की गन्ध से महक रही थी। फिर केहरसिंह बोला—"सौ रुपये का सारा झगड़ा है सो मेरी यह प्रार्थना है कि आप मुझसे सौ रुपये ले लें।"

गिरधारी को मानो हाथ में स्वर्ग मिल गया, पर उसे एक डर लगा कि कहीं सेहरसिंह को इसका पता लग गया कि गिरधारी ने उसके लड़के से फुसलाकर सौ रुपये लिये हैं, तो बड़ा अनर्थ हो जायगा। गालियां जो मिलेंगी सो मिलेंगी ही, रुपये वापस देने पड़ेंगे, और लेने के देने पड़ जायेंगे।

उसने केहरसिंह को कहा—"तुम्हें इतने रुपये कहां से मिलेंगे, आखिर मुखिया से कहोगे ही, इससे हम सीधे-सीधे उनसे न कोशिश करें?"

केहरसिंह दुखी चेहरा बनाकर बोला—"वाह, आप तो यही समझते हैं कि पिताजी के रुपये दूंगा। आपको यह नहीं मालूम कि नाना की सब सम्पत्ति मुझे मिली है........"

"मालूम क्यों नहीं, पर इतने बड़े मामले में उनसे पूछना तो चाहिये ही" गिरधारी ने मन टोने के लिये पूछा।

केहरसिंह बोला—"यह कोई जरूरी बात नहीं है। अभी उस दिन फोनोगिलाम खरीदकर लाया तो उनसे थोड़े ही पूछ कर लाया। बल्कि लाया तो वे बहुत बिगड़े, पर यहाँ किसकी परवाह है? रुपया इसलिये थोड़े ही है कि बटोरकर धरा जाय। वह तो इसलिये है कि सुख भोगा जाय" कहकर फिर कुछ सोचते हुए बोला—"और मुसीबत में पड़े हुए लोगों की मदद के लिये है।"

"तो तुम उनसे नहीं बताओगे?" गिरधारी ने खुश होते हुए कहा, पर उसने प्रश्न को इस ढंग से पूछा मानो उसे इस पर बड़ी आपत्ति हो। उसने कुछ सोचकर कहा—"अच्छा, मुझे बहुत जरूरत है, अभी दे दो, फिर चुकता कर दूँगा।"

केहरसिंह दुखी होते हुए बोला—"चुकता करने की भली चलाई। इसके माने यह हुए कि आप मुझे अपना नहीं समझते। जैसे बिलसिया तैसे मैं। आप ले लीजिये तो अच्छे काम में लग जाय, नहीं तो यहां तो खर्च करना ही है, कुछ रिकार्ड खरीद लेंगे, कोई और चीज खरीद लेंगे। नाना पैसा इसलिये थोड़े ही छोड़ गये कि मैं उन्हें सन्दूक में बन्द रखूं?" कहकर उसने आखिरी बोली-सी बोलते हुए कहा—"ले लीजिये, अच्छा उधार ही समझिये, होगा तो दीजियेगा, नहीं तो नहीं दीजियेगा।"

गिरधारी अब अपनी हँसी छिपा न सका। उसका चेहरा गद्‌गद हो गया। बोला—"बेटा जीते रहो, तुम्हारी हर तरह से

बढ़ती हो। मैं उधार ले रहा हूँ, धीरे-धीरे चुकता करूँगा।"

यह तय हुआ कि सन्ध्या-समय केहरसिंह रुपये लेकर आयेगा। केहरसिंह ने यह भी मना कर दिया कि कहीं उसकी खबर सेहरसिंह को न लगे। गिरधारी यह तो चाहता था। वह समझता था कि लड़का सीधा है, दे रहा है, बाप को पता लग गया तो न मालूम क्या हो जायगा। सेहरसिंह तो एक कौड़ी-कौड़ी को दाँत से पकड़ता है, सौ रुपये तो उसके लिये सौ खजाने हैं।

घर वापस जाते समय केहरसिंह चाची से अर्थात् जमुना से मिलकर गया। वहां उसे फिर बिलसिया दिखाई पड़ी। देर तक बीमारी का हाल पूछकर वह रवाना हुआ। जाते समय गिरधारी ने केहरसिंह को मकान के बाहर बहुत दूर तक पहुंचा दिया। उसका मन आनन्द से पूर्ण था। चलो, न गाय बेचनी पड़ेगी, न जमीन। वह इस लड़के का पैसा मारना नहीं चाहता, नहीं, बिल्कुल नहीं, धीरे-धीरे चुकता करेगा।

केहरसिंह जिस समय मकान से बाहर निकल रहा था, उस समय एक जोड़ी मुलायम आंखें उसकी तरफ देख रही थीं, बहुत ही मुलायम। इन आंखों की मुलायमित को हृदय पर रखकर केहरसिंह खुशी-खुशी घर चला गया। कभी तो इन मुलायम आंखों को.......

ग्यारह

यद्यपि केहरसिंह रुपये लाने की प्रतिज्ञा-सी करके गया था, पर गिरधारी को यह पूरा विश्वास नहीं था कि वह रुपये लायेगा ही। ज्योंहीं केहरसिंह चला गया, त्योंहीं गिरधारी के मन में सन्देह उत्पन्न हुआ। वह इसी सन्देह में घुलने लगा, और उसे उस दिन खाना-पीना कुछ नहीं रुचा। जमुना ने बहुत पूछा कि खाना क्यों नहीं खाया, तो उसने कुछ नहीं बताया। जब उसने खाना नहीं खाया तो बिलसिया ने उसे खाँड का शरबत बनाके दिया, और वह वही पीकर रह गया।

जाड़े के दोपहर के बाद ही सन्ध्या हो जाती है। दोपहर और सन्ध्या का फासला बहुत कम होता है। गिरधारी केहर-सिंह की ऐसे प्रतीक्षा कर रहा था जैसे कोई अपनी प्रियतमा की भी नहीं करता। वह बार-बार धूप की ओर देखता, और कभी निराश होता, तो कभी नये सिरे से आशान्वित होकर बैठ जाता। जब करीब-करीब दिन छिप गया, तो गिरधारी निराश होकर आँगन में पागल की तरह टहलने लगा। वह कुछ

सोचकर बाहर निकला, और जल्दी-जल्दी केहरसिंह के मकान की तरफ जाने लगा। फिर सौ कदम के करीब जाकर लौट आया।

इसी प्रकार बैठकर, टहलकर जब वह बिल्कुल निराश हो चुका था, तब केहरसिंह आया। इस समय उसने बहुत बढ़िया कपड़े पहन लिये थे। पैर में फीतेदार जूता था, धोबी की धुली हुई महीन धोती थी, गुलाबी पट्टू का कोट था। सिर पर एक बैंगनी रंग का साफा था। पान खाये हुए था। पूरा छैला मालूम होता था। कुछ महीन-सी महक भी आ रही थी। शायद कोई तेल या इत्र था। गिरधारी उसे देखकर ऐसा खुश हुआ मानो स्वर्ग का कोई देवदूत आ गया हो। उसे आते हुए देखकर उसे जो खुशी हुई थी वह अवर्णनीय है। डूबते हुए का पैर अगर सूखी जमीन से लग जाय, और वह देखे कि वह सुरक्षित जमीन पर खड़ा है तो उसे जितनी खुशी होती है, उसे देखकर गिरधारी को उतनी खुशी हुई। बल्कि उससे सवा। आते ही केहरसिंह ने इधर-उधर आँख दौड़ाई। जब से उसने बिलसिया को देख लिया था, तब से उसे चैन ही नहीं पड़ती थी। उसी के दर्शन के लिये तैयारी करते करते इतनी देर हो गयी। सब कपड़े तो थे, पर ढंग का जूता नहीं था, इसलिए जूता लेने के लिए पांच कोस पर बाजार जाना पड़ा था। उसी में देर हो गयी।

गिरधारी को उसे देखकर तसल्ली तो हुई, पर वह डरा कि कहीं ऐसा न हो कि वह खाली हाथ आया हो।

केहरसिंह ने मानो उसके इस सन्देह को समझकर ही जेब से दस रुपयों के दस नोट निकाल कर दे दिए। गिरधारी ने जल्दी से हाथ बढ़ाकर इन नोटों को ले लिया। वह केहरसिंह पर इतना खुश हो गया कि वह यदि कोई ऋषि होता तो फौरन

उसे वरदान देने के लिये कहता। ये सौ रुपये केवल सौ रुपये नहीं थे, बल्कि एक तरह से उसकी मुक्ति का परवाना था। कम से कम गिरधारी इस समय यही समझ रहा था।

रुपये देकर केहरसिंह डटकर चारपाई पर बैठ गया। बोला—"पर एक बात है चाचा, कहीं जोश में आकर रुपये कल ही न दे दीजियेगा। जितनी मुहलत ली है, उसकी अवधि को खतम कर फिर रुपये दे दीजियेगा। नहीं तो पिताजी को शक हो जायगा कि आपके पास रुपये कैसे आये, और फिर शक हो गया तो जानते ही हैं, कुछ न कुछ अनर्थ हो जायगा।

गिरधारी को यह बात नहीं सूझी थी, वह तो अभी जाकर रुपए देने के लिये तैयार था। अच्छा खाता-पीता किसान था। अपने को छोटा जमींदार समझता था। इसलिये उधार रखने का अभ्यास नहीं था। कोई कर्ज अगर हो जाता था, तो चाहता था कि जल्दी से जल्दी उसे चुकता कर दे। इस विशेष क्षेत्र में ऐसा करने में क्या-क्या खतरे थे, इस बात को उसने गहराई के साथ नहीं सोचा था। केहरसिंह ने जो कुछ कहा उससे उसकी आंख खुल गयी। यह उसकी समझ में नहीं आया कि इसमें क्या खतरा था, पर खतरे का नाम सुनकर समझ गया कि जरूर कोई खतरा होगा। बोला—"नहीं, ऐसा कभी नहीं करूंगा", फिर हिसाब लगाकर बोला—"यह जो शुक्र आ रहा है, उसके अगले शुक्र को दूंगा। उससे पहले नहीं।"

"हां, और इस बीच में अगर पिताजी से भेंट भी हो जाय तो कहियेगा कि अभी रुपयों का बन्दोवस्त नहीं हुआ।"

गिरधारी को यह विश्वास हो गया कि केहरसिंह उसका असली हितैपी है। फिर कितना साफ दिमाग है। आखिर है तो मुखिया का ही बेटा। रामधारी के जाने के बाद से उसके हृदय

में जो स्थान खाली हो गया था, केहरसिंह को पाकर उसे ऐसा ज्ञात हुआ कि वह रिक्त स्थान अब भर रहा है। केहरसिंह पर उसे बड़ा भरोसा हुआ। अवश्य यह व्यक्ति सुख में दुख में अच्छी सलाह देगा।

दोनों बैठकर इधर-उधर की बातें करने लगे। केहरसिंह ने यह तो समझ लिया था कि उसने गिरधारी की मित्रता तथा विश्वास प्राप्त कर लिया है, पर वह इस बात को समझ नहीं पा रहा था कि आगे कैसे बढ़ा जाय क्योंकि गिरधारी की मित्रता तो एक साधनमात्र थी, असली ध्येय तो कुछ और था।

एकाएक केहरसिंह को एक बात सूझी। ऐसे ही मौकों पर उसे कोई बात सूझ जाती थी, जिससे उसका काम बनता था वह बोला—"चाचाजी आज मैं जो आपके साथ-साथ आपके यहां आया तो आपके दुश्मनों में बड़ी खलबली मच गयी। हमारी बिरादरी के सब लोग कई दिन से षड्यन्त्र कर रहे थे कि आपको बिरादरी से निकाल दिया जाय। आज वे बहुत घबराये हैं। वे समझ गये कि मैं आपकी मदद करूँगा। मेरी राय यह है कि इन लोगों को दिखाने के लिए मैं आपके यहाँ रोज घण्टा-दो घण्टा बैठा करूं।"

गिरधारी को तो मानो वरदान मिल गया। बोला—"यह तो मेरा भाग्य है कि तुम्हारे ऐसे की मित्रता पायी। यों तो मित्र बहुत थे, पर जब से विपदा पड़ी है, तब से सब कन्नी काट गये। तुम जब चाहे तब यहां आओ, और लोगों को दिखा-दिखाकर आओ। मैं न घर पर रहूं तो चाची से मिलो, उससे बोलो बतलाओ, लड़के और लड़कियों से बात करो।"

"हाँ, मैं तो यह भूल ही गया था। चाची के लिये मैं एक दवा भी ले आया हूँ।" कहकर उसने जेब से एक पुड़िया निकाली और उसे गिरधारी के हाथ में देते हुए बोला—

"ताक़त की दवा है, मैं ले आया हूं, उन्हें दीजियेगा ।"

गिरधारी ने पुड़िया को हाथ में लेकर खोला तो देखा कि बड़ी-बड़ी गोलियां हैं। देखकर उसकी आंखें खुशी से नाच उठीं। ओह, इन सारे झगड़ों के कारण वह जमुना के लिये कुछ भी नहीं कर सका था। वह चाहता तो था कि कुछ इलाज करें, पर यहां तो एक कौड़ी भी नहीं बची थी । दारोगाजी ने एक-एक पैसा दुह लिया था। यदि केहरसिंह उसके अपने लिये कोई चीज लाता तो उसे इतनी खुशी न होती जितनी कि जमुना के लिए इस दवा को देखकर खुशी हुई। दवा की पुड़िया को केहरसिंह के हाथ में लौटाते हुए बोला—"तुम खुद ही जाकर दे दो।"—उसकी आंखें स्नेह से आर्द्र हो रही थीं।

केहरसिंह यही तो चाहता था। बस वह सीधा जमुना जहां पड़ी थी वहीं पहुंचा, और दवा की पुड़िया निकाल कर उसे दिखलायी। सब बच्चे तथा बिलसिया भी वहीं पर थी। केहर-सिंह को सामने कुछ बैठने को दिखाई नहीं पड़ा तो वह जमुना की खटिया के सामने जमीन पर लड़कों में धम से बैठ गया। उसका ऐसा करना था कि एकदम शोर-सा मच गया। जमुना खुद चारपाई पर उठ बैठी। बिलसिया खटोली लेने के लिये बाहर दौड़ी। गिरधारी उसके साथ नहीं आया था। वह सँभाल कर रुपयों को रख रहा था। उसने भी जो दूर से शोर सुना तो वह आ गया।

उसने जो आकर केहरसिंह को पुआल पर बैठे हुए देखा तो उसने उसे पकड़कर जबर्दस्ती खड़ा किया। इतने में बिल-सिया खटोली लेकर आ गयी, और केहरसिंह उस पर बैठ गया।

इस प्रकार पहले ही दिन केहरसिंह ने घर-भर पर विजय प्राप्त कर ली। जमुना को यह पता नहीं था कि केहरसिंह ने गिरधारी को सौ रुपये दिये हैं, पर वह जो दवा ले आया था,

उसीको वह बहुत अधिक समझ रही थी। उसने भी उसका स्वागत किया। लड़कों को केहरसिंह के भड़कीले वस्त्र बहुत पसन्द आये। विलसिया ने कुछ कहा नहीं, पर वह भी केहर-सिंह के व्यवहार से मुग्ध हुई।

केहरसिंह मामूली अपर प्राइमरी तक कुछ पढ़ा था, पर वह अक्सर शहर में जाया करता था। इस कारण वह शहरी बातों से बहुत परिचित था। उसने तरह-तरह की बातें सुनाईं, जिनमें ऐश्वर्य की, मशीनों की, आनन्द की बातें थी। सुनते-सुनते इन गांववालों के कोने में पड़े रहनेवाले लोगों के मन के सामने एक अद्भुत जगत की तस्वीर बिछ गयी जो बहुत मोहक थी।

बात-बात में केहरसिंह ने अपने ग्रामोफोन की बात बतायी। उसने यहां तक कह डाला कि कल वह ग्रामोफोन यहां ले आयेगा, और यहीं बजाकर चाची को सुनायेगा। सब लोग इस पर बहुत खुश हुए। गिरधारी इसलिये खुश हुआ कि इससे गांव-बिरादरीवालों पर रोब पड़ेगा। अभी तक केहरसिंह का ग्रामोफोन कभी किसीके घर नहीं गया था। केहरसिंह जानता था कि गिरधारी के यहां लाकर बजाने में खतरा है, एक तो बाबूजी को मालूम होगा तो वे नाराज होंगे। दूसरा गांव के अन्य लोग नाराज होंगे। बात यह है कि और भी तो गांव के गण्य-मान्य थे, उनके यहां न बजाकर केवल गिरधारी के यहां बजाना बहुत झगड़े की बात हो जायगी। पर केहरसिंह बिल-सिया को देखकर हिताहित ज्ञानशून्य हो चुका था। विलसिया को प्राप्त करना ही था, चाहे जो कुछ हो जाय। केहरसिंह का बाप प्रभावशाली था, उसके पास रुपये थे। फिर जवानी थी, ऐसी हालत में वह अधिक आगे तक सोचता तो कैसे सोचता।

बारह

जमुना का रोग न बढ़ता था न घटता था। वह चारपाई पर पड़ी रहती और इधर-उधर ताकती रहती थी। बहुत कम बोलती थी। अजीब मनहूम रोग था। भीतर-भीतर वह सूखती चली जाती थी। उसकी हालत उस पौधे की तरह हुई थी जिसे पाला मार जाता है, ऊपर से पहले विशेष कोई हानि नहीं मालूम देती थी, पर भीतर से जीवनी शक्ति घटती जाती थी। पर इसका अर्थ यह नहीं कि वह बिल्कुल बेखबर थी। पहले-पहल उसने दो-चार दिन केहरसिंह की दवा खायी, फिर वह उसे भी नहीं खाती थी। गिरधारी ने दो-एक दिन समझाया, पर फिर भी वह नहीं मानी।

अब लड़के भी उसके पास कम बैठते थे। केहर भैया ने उन पर ऐसा जादू डाल दिया था कि वे उसीकी मुट्ठी में हो गये थे। केहरसिंह कहीं मिठाइयां लाता था तो कहीं खिलौने। बिलसिया के लिये वह साबुन, तेल, रूमाल इस तरह की चीजें लाया करता था। जमुना के लिये उसने कुछ लाना छोड़ दिया

था क्योंकि जमुना कुछ खाती-पीती नहीं थी। गिरधारी भी उसके उपहारों से नहीं बचा था, वह उसके लिये कहीं बढ़िया तम्बाखू, और कहीं इसी प्रकार की और कोई चीज ले आता था। गिरधारी ना-ना करता था, पर ले सब लेता था।

अभी एक सप्ताह भी नहीं हुआ था कि घर में केहरसिंह की धूम मच गयी थी। जमुना अपनी खटिया पर पड़े-पड़े सब बातों को देखती और सुनती थी, अर्थात् जहां तक उसे दिखाई तथा सुनाई पड़ता था, वहां तक देखती और सुनती थी। और उसके मन में एक असन्तोष का उदय होता था। उसे यह नापसन्द था कि एक बाहरी आदमी आकर उसके घर में राज्य करे। फिर रोज-बरोज ग्रामोफोन बजना, चीख-पुकार उसे पसन्द नहीं थी। काहे की खुशी थी? वह शान्त जीवन पसन्द करती थी।

जब से सुखिया चली गयी थी, तब से वह जीवन के सम्बन्ध में बहुत उदासीन हो गयी थी। सुखिया को वह बहुत प्यार करती थी। इसलिये उसने जो कुछ किया था उसे वह परम विश्वासघात समझती थी। जब सुखिया ने विश्वासघात किया, तो फिर किसका भरोसा था? फिर रामधारी क्यों नहीं लौटा इस पर भी उसे तरह-तरह की शंका थी। एक शंका तो यह थी कि रामधारी ने उससे छुटकारा पाने में सफल न होकर उसे कहीं जान से तो नहीं मार डाला? पर दूसरी शंका जो उसके मन में थी वह इससे भी भयंकर थी। कहीं लोग रामधारी के विषय में जो कुछ कहते है, उसमें कुछ सचाई तो नहीं थी। मुन्नासिंह को तो उसने दो ही चार दफे इधर झाँकते देखा है, कभी उससे सुखिया को बात भी नहीं करते देखा। कहीं राम-धारी......? इस सन्देह को वह मन के पास फटकने नहीं देती थी, पर यह सन्देह कभी-कभी उसके मन पर अपनी छाया डाल

ही जाता था। वह किसी प्रकार इसे रोक नहीं पाती थी। सुन्नासिंहवाली बात तो उसने पति से कई बार कह भी दी, पर इस सन्देह को उसने अपने मन तक ही सीमित रखा। कई बातें ऐसी होती हैं जो किसीसे कही नहीं जा सकतीं, यहां तक कि गिरधारी से भी नहीं। फिर गिरधारी उसका भाई ही था। अवश्य ही वह इस बात को सुनकर बहुत नाराज होता। गांव बिरादरीवालों को तो वह इस प्रकार लांछन लगाने के लिये सैकड़ों गालियां, अवश्य पीठ पीछे दिया करता था।

जमुना को सबसे बड़ा दुख यह था कि अब उसे गिरधारी पर भी पूरा भरोसा नहीं था। जब से सुखिया गयी, और रामधारी नहीं लौटा, तब से गिरधारी जैसे बिल्कुल दूसरी ही तरह का हो गया था। चेहरे पर बुढ़ापा झलकने लगा था, कभी किसीसे एक भी प्यार की बात नहीं कहता था। जब कभी इधर-आकर बैठता भी था, तब उसकी आंखों में एक दूर की, उड़ती हुई दृष्टि होती थी, जैसे दिमाग कहीं और ही है। कोई बात पूछता था तो उसका जवाब जब दिया जाता था, तो उसे सुनता नहीं था। और बीच ही में अन्यमनस्क हो जाता था।

सबसे बड़ी बात यह थी कि अब उसमें पहले का तेज बिल्कुल नहीं था। पहले वह इतना अकड़खां था कि उसे सँभालते-सँभालते आफत पड़ जाती थी, और अब तो बिल्कुल इसका उलटा था। अब तो वह हरेक की खुशामद करता था। जमुना यह समझती थी कि गिरधारी को धक्के-पर-धक्के लगे हैं, इसलिये उसका ऐसा हाल हुआ है, सुखिया ने धोखा दिया, उसे छोड़ना पड़ा, रामधारी गायब हो गया, साढ़े चार सौ का दण्ड लगा, बैल बिके, खेती-पाती ठीक से नहीं होती, इनमें से एक-एक धक्का बहुत बड़ा था, इसलिये जमुना मन ही मन असन्तुष्ट होते हुए भी गिरधारी को पहले से अधिक प्यार करती

थी। पर उसे अफसोस तो यह था कि गिरधारी को उसके प्यार की जरूरत नहीं थी। वह तो दिन भर और ही झमेलों में रहता था। नतीजा यह था कि जमुना धीरे-धीरे परिवार से दूर हटती चली जा रही थी। सबको अधिक-से-अधिक प्यार करती हुई भी वह सबसे अलग रहती थी।

यद्यपि वह सब कुछ देख तथा सुन नहीं पाती थी, तो भी कुछ बातें ऐसी हैं उसकी दृष्टि आकर्षित बिना किये नहीं रह सकीं। एक दिन उसने पति को कह ही डाला—"क्यों जी यह केहरसिंह यहां दिन-दिनभर क्यों डटा रहता है?"

गिरधारी इस प्रश्न के लिये तैयार नहीं था, बोला—"डटा रहता है तो क्या है? बेटों की तरह है। यों तो सभी दोस्त बनते थे, पर मौके पर सब खिसक गये। इसने हमारे लिये क्या-क्या किया है सो तुम क्या जानो।"

"क्या किया है?"

"जो किसी ने नहीं किया, वह इसने किया। सौ रुपयों के लिये मेरे बैल बिके जा रहे थे, पर इसने बिना माँगे सौ रुपये दिये। न कागद लिखवाया, न अँगूठा लगवाया, सूद न ब्याज, और सौ रुपये निकाल कर दे दिये।"

जमुना को यह बात मालूम नहीं थी। वह इतना ही जानती थी कि दारोगाजी को साढ़े चार सौ रुपये देने पड़ रहे हैं। उसे यह भी मालूम था कि इसके लिये जानवर बेचना पड़ा है। अब जो यह सुना, तो बोली—"अच्छा, मालूम नहीं था, फिर भी उसका बिलसिया के साथ क्या इतना मिलना-जुलना ठीक है?"

गिरधारी ने इस दृष्टि से चीजों को सोचा नहीं था। बोला—"तो इसमें हर्ज ही क्या है? कोई अवारा-उचक्का थोड़े ही है। गांव में सब लोग जानते और मानते हैं।" थोड़ा ठहरकर

बोला—"फिर यह भी सोचा है कि उसके यहां आने-जाने से कितना फायदा रहा है। पहले सभी ऊँगली उठाते थे, पर अब किसीकी मजाल है कि कुछ कहे। बिरादरीवालों ने बहुत सिर उठाया था, यहां तक कि सेहरसिंह भी झुक रहे थे, पर केहरसिंह अड़ गया, बोला—'अगर इस बेकसूर पर बिरादरी का दण्ड उठता है तो मुझे भी दण्ड दिया जाय।' अब इस पर सब लोग चुप हो गये। सेहरसिंह बिरादरी के सामने नरम पड़ गये थे, सो जब लड़के का यह रुख देखा तो बोले "प्रमाण नहीं है, बिना प्रमाण के दण्ड के हम खिलाफ है।"

जमुना को यह सब मालूम नहीं था। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ, बोली—"मामला यहां तक बढ़ गया था ?"

"हां, ये बिरादरीवाले पूरे कसाई हैं। दारोगाजी ने तो साढ़े चार सौ तक रखा, पर ये लोग तो हाड़ माँस सब खाकर तभी छुट्टी लेने वाले थे।"

जमुना इस पर क्या कहती, चुप हो गई पर उसने आज अपने छोटे लड़के से जो कुछ सुना था, उससे उसके कान खड़े हो गये थे। केहरसिंह आज सवेरे ही आया था। गिरधारी उस वक्त खेत पर चला गया था। छोटे लड़के और बिलसिया के अतिरिक्त बाकी सब खेत पर गये हुए थे। जमुना को लेटे-लेटे कुछ आहट मिली। ऐसा मालूम हुआ जैसे केहरसिंह आया है। केहरसिंह का यह नियम था कि जब वह आता तो पहले जमुना के पास आता था, फिर वहां दो-चार बातें करके तब वह लड़कों से बातें करता था, ग्रामोफोन बजाता या और कुछ करता था। यहां हाजिरी देकर तभी वह जाता था। फिर जाते समय भी कहकर जाता था। आज जमुना को केहरसिंह की आहट मालूम पड़ी, पर फिर भी जब वह नहीं आया तो जमुना ने समझा कि भ्रम था। वह करवट बदलकर लेट गयी।

थोड़ी देर में ही छोटा लड़का आया, तो जमुना ने योंही लड़के से पूछा—"केहर भैया आये ?"

लड़के ने कहा—"हाँ।"

जमुना ने पूछा—"तो कहाँ गये, यहाँ तो नहीं आये।"

इसके उत्तर में लड़के ने जो कुछ कहा उसका मतलब यह था कि केहर भैया आये, फिर वह जहाँ बिलसिया खाना पका रही थी वहाँ गये, और उसे दो पैसे देकर कहा कि दूकान से कुछ मिठाई लाकर खाये, वह दूकान में गया, पर दूकान बन्द थी इसलिये लौटकर यहीं आ गया।

जमुना ने इसके आगे नहीं पूछा। इसी पर जमुना को सन्देह हुआ था, पर पति का जो रुख देखा, तो उसे कुछ कहने का साहस नहीं हुआ। गिरधारी ने मानो उसको चुनौती देते हुए कहा—"मैंने तो इस लड़के में अच्छाई-ही-अच्छाइ पायी, तुमने कुछ बुराई देखी हो तो बताओ।"

जमुना मुंह फेर लेती हुई बोली—"नहीं मैंने तो कुछ भी नहीं देखा, यहीं पड़ी रहती हूं। मुझे क्या करना है, तुम्हारा जो जी चाहे सो करो। मैं नहीं जानती।" उसने मुंह ढाँप लिया।

गिरधारी को जमुना के इस रुख से क्रोध आ गया, नाराज होकर बोला—"सारी विपदा को मैं अकेला झेल रहा हूँ। रमधरिया था, सो न मालूम कहाँ जाकर मर गया। एक तरफ दारोगा पीस रहे हैं, तो दूसरी तरफ बिरादरीवाले जान के गाहक बने हुए हैं, ऐसी हालत में हनुमान स्वामी ने एक दोस्त भेज दिया, सो मैं उससे भी बैर कर लूँ, बस पूरा सत्यानाश हो जाय।"

गिरधारी का यह कहना तो बिल्कुल ठीक था कि केहरसिंह ने उसकी बहुत मदद की। केहरसिंह की मदद न होती तो

इसमें भी कोई शक नहीं कि बिरादरीवाले अब तक गिरधारी पर दण्ड डाल चुके होते।

जब इस पर जमुना कुछ नहीं बोली, तो गिरधारी वहां से पैर पटकता हुआ बाहर चला गया। फिर सामने बिलसिया को पाकर वह उबल पड़ा। बोला—"कलमुंहीं कहीं की, कुछ काम न धाम। इधर से उधर घुर-घुर करके घूमना, और सड़क की तरफ ताकते रहना। कभी जो मैंने तुझे किसी बाहरी आदमी से बात करते देख लिया तो हड्डी तोड़ डालूंगा।" फिर कुछ आवाज नीची करके बोला—"एक बहिन ने तो मुंह में कालिख लगवा दी, अभी तक उसी में पिस रहा हूं, और अब यह भी चली है मुंह काला करवाने।"

बिलसिया कुछ समझ नहीं पायी कि पिताजी क्यों बिगड़ रहे हैं। उसे यह डर हुआ कि कहीं कुछ खुल तो नहीं गया है। वह चुपचाप खड़ी रही।

उसे चुप खड़ी रहते देखकर गिरधारी को और भी क्रोध आया। उसने उसे कुप्पी की रोशनी में तीव्र आलोचना की दृष्टि से देखा, तो उसके बालों में एक छोटी-सी कंघी दिखाई पड़ी। बस गिरधारी उस पर टूट-सा पड़ा, और कंघी को निकालता हुआ बोला—"यह तुझको किसने दी? यह कहां से आयी?"

ऐसी बीसियों चीजें केहरसिंह ला चुका था, और गिरधारी के सामने ला चुका था। जिस खास कंघी का जिक्र था, वह भी गिरधारी के सामने लायी गयी थी। बिलसिया बोली—"इस कंघी को तो केहर भैया लाये थे।"

केहरसिंह का नाम सुनते ही गिरधारी कुछ नरम पड़ गया। पर फिर भी उसे गुस्सा चढ़ा हुआ था, उसने कंघी को दूर फेंकते हुए कहा—"मैं यह सब कुछ नहीं जानता। बस इतना कह देता हूं कि तुममें अगर मैंने किसी तरह का कुचाल देखा

तो जान से मारकर फाँसी जाऊँगा।"

इतना कहकर वह पैर पटकता हुआ मकान से बाहर जा रहा था कि दरवाजे पर ही केहरसिंह मिल गया। उसे देखकर उसे बड़ा भय हुआ कि कहीं इसने खड़े-खड़े सब बातें तो नहीं सुनीं। एक क्षण के लिये उसका हृदय धक-से हुआ। यदि इसने सुन लिया तो सारा बना-बनाया खेल बिगड़ जायगा। उसने केहरसिंह को सन्देह की दृष्टि से देखते हुए, पर ऊपर से हँसते हुए कहा—"तुम कब से खड़े हो? क्या दरवाजा बन्द था? बेटा भीतर क्यों नहीं गये?"

केहरसिंह बोला—"नहीं मैं तो खड़ा नहीं था, अभी तो आ रहा हूँ।"

गिरधारी को बड़ी तसल्ली हुई, और काम नहीं बिगड़ा जानकर उसे इतनी खुशी हुई कि वह गद्‌गद होकर बोला—"तुमने लड़के-लड़कियों पर क्या जादू डाल दिया कि सब खड़े-खड़े तुम्हारी बाट जोह रहे हैं।" फिर रास्ते से हटते हुए कहा—"जाओ बेटा भीतर जाओ।"

केहरसिंह भीतर जाने लगा तो एकाएक गिरधारी को याद आ गयी कि सामने ही आँगन में वह कंघी टूटी हुई हालत में पड़ी है। बस वह जल्दी से केहरसिंह के साथ हो लिया, और आँगन में जहां कंघी पड़ी थी, वहाँ जाकर उसे उठाकर बोला—"यह देखो तुम्हारी दी हुई कंघी टूट गयी है। इस पर बिलसिया बहुत डर रही थी कि केहर भैया क्या कहेंगे। मैंने कहा ठीक तो है, तुम चीजों को इतनी आसानी से तोड़ डालती हो, अब केहर तुम्हें कुछ नहीं लाकर देगा। यही तुम्हारी सजा है।"

केहरसिंह ने कहा—"अरे यह क्या बात है, टूट गयी तो टूट गया, फिर आ जायेगी। कौन दस-बीस रुपये का माल है। चार आने में तो आती है।"

गिरधारी अपनी चालाकी से बहुत खुश था, कृत्रिम क्रोध करते हुए बोला—"नहीं, नहीं केहर, तुम अब इसे कोई चीज न लाकर देना। यह रोज तोड़ेगी और तुम रोज लाओगे, यह नहीं हो सकता। इससे तो इसकी आदत बिगड़ जायगी।"

केहरसिंह ने इसके उत्तर में इतना ही कहा—"देखा जायगा," और वह सामने ही बिछी हुई खाट पर बैठ गया। सामने कहीं बिलसिया दिखाई नहीं पड़ रही थी। वह उसीको खोज रहा था। रोज बिलसिया फौरन आ जाती थी; आज नहीं आयी, इससे केहरसिंह को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह कुछ गम्भीर हो गया। उसकी अनुभूतिशील नाक ने यह समझ लिया कि कहीं कुछ दाल में काला है। बच्चे भी उससे आकर लिपटे नहीं जैसे वे रोज लिपटा करते थे। रोज के व्यवहार के साथ इस व्यवहार में इतना फर्क था कि गिरधारी को भी कुछ अजीब मालूम हुआ। उसे ऐसा मालूम पड़ा कि इस बात की भी व्याख्या करनी चाहिये। बोला—"आज इन लोगों की माँ की हालत बहुत खराब हो गयी थी, तभी सब लोग दुखी हैं।"

केहरसिंह ने व्यग्रता दिखलाते हुए कहा—"क्यों, क्या हो गया?"

"हो क्या गया? वही पुरानी बीमारी है। कभी-कभी सीने में दर्द उठता है।"

केहरसिंह उठकर जमुना की तरफ जाने लगा, तो गिरधारी डरा कि कहीं ऐसा न हो कि यह जमुना से पूछे कि तबियत कैसी खराब हुई थी, तो फिर झूठ खुल जाय, इसलिये उसने केहरसिंह को रोकते हुए कहा—"अभी बहुत देर बाद सोयी है, तुम वहां मत जाओ। उधर की कोठरी में जाकर अपना बाजा बजाओ। मैं जरा खेत देखने जाता हूं।"

केहरसिंह लौटकर खाट पर बैठते हुए बोला—"तो आज

बाजा भी न बजाऊँगा। कहीं बाजा बजाने से नींद न खुल जाय।"

गिरधारी खुशामद की सूखी हँसी हँसते हुए बोला—"हें हें हें हें, नहीं तुम्हारे बजाने से कोई नुकसान न होगा। अच्छा, न हो तो भीतर से किवाड़ भेड़ लेना।"

फिर भी केहरसिंह नहीं उठा, तो गिरधारी को यह डर हुआ कि हो न हो इसने बिलसिया क साथ बातचीत को सुन न लिया हो, इसलिये वह मानो उस बातचीत में कोई महत्व नहीं था इस बात को दिखाने के लिये चिल्ला-चिल्लाकर सब लड़कों का और बिलसिया का नाम लेकर पुकारने लगा, और जब सब लोग आ गये तो बोला—"जाओ सब लोग इनके साथ बाजा सुनो।"

केहरसिंह उठा और सब लोग बाजा सुनने चले गये। गिरधारी अपनी बुद्धिमता से बहुत खुश होकर बाहर चला गया कि लड़की को डाँटकर कर्तव्य भी बता दिया और साथ ही साथ किसी काम को बिगड़ने नहीं दिया। कंघी की बात को कैसे बदल दिया, फिर कैसे केहरसिंह को जमुना के पास जाते हुए रोक लिया। उसे बहुत आत्मप्रसाद का अनुभव हो रहा था।

वह खेतों की तरफ चला जा रहा था और पीछे से उसके घर से ग्रामोफोन की आवाज आ रही थी।

पिया मिलन को जा......ना
आ आ आ आ पिया मिलन को जाना

तेरह

आखिर सुखिया को लड़का हो गया।

किसीने इस लड़के का स्वागत नहीं किया। न सुखिया ने न रामधारी ने। सुखिया ने स्वयं ही सब काम कर लिया। न दायी आयी न नर्स। हाँ, बगल की कोठरी की पड़ोसिन ने कुछ मदद दे दी।

न मालूम क्यों रामधारी को इस लड़के के पैदा होने पर बड़ा रंज हुआ। जिस समय सिद्धार्थ के घर में राहुल पैदा हुआ था, उस समय उन्हें यह अनुभव हुआ था कि वे संसार में बँधे जा रहे हैं, दार्शनिक कारणों से नहीं पर अन्य कारणों से रामधारी की भी यही भावनायें हुईं, और सिद्धार्थ ने जैसा किया था रामधारी के मन में भी उसी प्रकार, बल्कि गृह-त्याग की उससे कहीं अधिक इच्छा हुई। सिद्धार्थ उस दिन यह समझते थे कि मुक्ति का मार्ग रुक गया, और रामधारी ने यह समझा कि पिथौरा का रास्ता रुक गया। उसमें जो कर्तव्यबुद्धि थी, उसने उसे यह बतलाया कि यदि सुखिया को छोड़कर

जाना ठीक नहीं था, तो सन्तान सहित मुखिया को छोड़ जाना और भी अनुचित था।

यथासमय हिजड़े आये, और बधाई गाकर इनाम लेकर गये। रामधारी ने बहुत जल्दी इनाम दे दिया क्योंकि उसे बड़ी शर्म मालूम हो रही थी। इसमें बधाई की क्या बात थी? पर इनसे कौन सिर खपाता। इसलिये उसने उनको जल्दी बिदा कर दिया। वे लोग जाते समय बाबू तुम्हारा लड़का जुग-जुग जिये कहकर आशीर्वाद देते गये। रामधारी सुनकर सन्न-से रह गया, उसे बहुत बुरा मालूम हुआ, पर इनसे क्या तर्क करना था।

केवल हिजड़े ही नहीं सभी पास-पड़ोस के लोग अब रामधारी को इस लड़के का पिता समझते थे। लोगों ने इस पर कुछ विशेष जोश नहीं दिखलाया क्योंकि काशीजी में ऐसी बातें बहुत सुनने में आया करती हैं। लोग यहाँ पर धर्म करने भी आते हैं, और अधर्म करने या उसे छिपाने भी आते हैं। रामधारी को अपने गाँव का ही ख्याल था इसलिये वह बहुत ज्यादा शर्मा रहा था, पर यहाँ इतने शर्माने की कोई जरूरत नहीं थी। यहाँ गाँव के मुकाबले में पास-पड़ोसियों में सम्बन्ध कम था, वे एक-दूसरे की भलाई भी कम करते थे, और बुराई भी कम करते थे।

रामधारी की तन्दुरुस्ती पहले के मुकाबले में खराब हो गयी। वह पहले से अधिक उदास भी रहने लगा। उसे ऐसा मालूम होने लगा कि जैसे वह किसी अत्यन्त निष्ठुर भाग्य के पंजों में जकड़ा हुआ है और चाहे भी तो वह इससे छुटकारा प्राप्त नहीं कर सकता। कभी-कभी उसमें इस वातावरण से किन्हीं दामों पर मुक्ति पाने की इच्छा प्रबल हो उठती थी, उसमें यह इच्छा अदम्य रूप से उठती थी कि वह सब कुछ छोड़कर

भाग जाय। अब वह बिल्कुल ऊब चुका था। जीवन से नहीं तो वर्त्तमान जीवन से तो वह भर पाया था।

उसे सबसे अधिक तकलीफ इस बात से होती थी कि सुखिया अपने बच्चे की बिल्कुल परवाह नहीं करती थी। बच्चा घंटों रोता रहता था, पर कभी-कभी सुखिया बिल्कुल उसकी सुध नहीं लेती थी। रामधारी मिल से थका-माँदा घर में आता था। भंग खाकर सो जाना ही उसकी एकमात्र विलासिता थी। इसी समय उसे जरा मालूम देता था कि जीवन में भी कोई तत्व है। और जब से यह शिशु पैदा हुआ था, तब से रोज रात को बच्चे का रोना लगा रहता था। यदि बच्चा रोता रहता और सुखिया उसे थपकियाँ देकर सुलाने की कोशिश करती, चाहे वह इस पर भी रोता, तो रामधारी के स्नायु पर बोझ न पड़ता। पर वह तो रोता रहता था, एक आदिम असहाय क्रंदन जिसमें केवल शिकायत-ही-शिकायत है, शायद अपने भाग्य के विरुद्ध शिकायत है। इसके रोते समय रामधारी को बहुत बुरा मालूम होता था।

रामधारी ने सुखिया तथा अन्य भतीजी और भतीजों को पैदा होते देखा। ये लोग भी रोते थे, पर इस रोने के साथ उनके रोने की कोई तुलना नहीं हो सकती थी। यदि वे रोते तो जमुना किस शीघ्रता के साथ उनके रोने को बन्द करने के लिये तैयार हो जाती। रामधारी की नींद यदि उचट भी जाती थी तो जमुना बच्चों के रोने को थपकियों से, प्यार से बन्द करने की चेष्टा कर रही है सुनकर वह फिर से सो जाता। जमुना के सम्बन्ध में उसके मन में एक अनिर्वचनीय श्रद्धा की उत्पत्ति होती थी। उसे अपनी भाभी पर बड़ा गर्व होता था।

और यहाँ तो बात ही दूसरी थी। माना कि यह शिशु लज्जाजनक परिस्थिति में उत्पन्न हुआ है, रामधारी उसे कभी

प्यार की दृष्टि से नहीं देख पाया, फिर भी निष्ठुरता की क्या जरूरत है ? आखिर वह शिशु ही है। और केवल रोना थोड़े ही था, सुखिया उस बच्चे को बहुत गंदी हालत में भी रखती थी। इतनी गंदी कि इन दिनों सुखिया के हाथ से खाना खाने में उसे कुछ हिचकिचाहट ही मालूम देती थी।

सुखिया स्वयं भी पहले से गंदी हालत में रहती थी। अब रामधारी को खाना वगैरह ठीक समय पर नहीं मिलता था। वह कुछ खाकर और कुछ लेकर जाता था, पर आजकल अक्सर इसमें बाधा होने लगी।

रामधारी आजकल पिथौरा की बात बहुत सोचा करता था। वह मजबूरी से मजदूर बना था, पर उसकी आत्मा एक किसान की आत्मा थी। मिट्टी की सोंधी गन्ध, गोबर, भूसी आदि की चित्ताकर्षक घरेलू गन्ध, दूर तक फैला हुआ क्षितिज, हर समय आँख के सामने पेड़ पत्ते हरी चीजें, इन्हीं के लिये उसका मन तरसता रहता था। उसे मिल की झाँय-झाँय तथा काम लेने वाले की लाल-पीली आँखें पसन्द नहीं थी। वह मजबूरी से मजदूर बना था, और यह मजबूरी आर्थिक मजबूरी नहीं थी। इस कारण उसका मन हमेशा उड़ता-सा रहता था, फिर सुखिया की यह गन्दगी, लापरवाही, बेवकूफी।

जब से लड़का पैदा हुआ था, तब से सुखिया बहुत दुखी रहती थी। न मालूम क्या सोचती रहती थी। उसे बच्चे से कोई प्यार नहीं था, फिर भी प्रकृति के तकाजे पर कुछ दूध पिला देती थी। वह न मालूम किस विचार में घुला करती थी। उसकी आँखों में एक दूर, सुदूर की दृष्टि थी, जैसे वह वर्त्तमान में है ही नहीं, जैसे वह इस समय में नहीं है। एक उड़ती हुई, भागती हुई दृष्टि उसकी आँखों में रहती थी।

सुखिया पास-पड़ोस की स्त्रियों से बातचीत कर लेती थी।

सौर में विशेषकर इन स्त्रियों ने उसे बड़ी मदद दी थी। पीठ पीछे ये निन्दा भी करती थीं, पर जिसके घर में जो भी अच्छी चीज थी उसने उसे लाकर सुखिया को दे दिया था। सुखिया ने कभी उनको कुछ नहीं दिया था, और वह देती भी तो शायद वे न लेतीं, क्योंकि वे उसे बहुत कुछ अछूत की तरह समझती थीं। यदि वह इन लोगों की बिरादरी तथा जान-पहचान की होती, तो वे अवश्य ही इसके साथ दुर्व्यवहार करतीं, पर उसे वे नहीं जानती थीं, इस कारण वे उससे घृणा नहीं करती थीं।

एक दिन एक पड़ोसिन ने उसे यह बताया कि दशाश्वमेध घाट पर जब सबेरे लोग नहाने गये तो उन्हें एक छोटा-सा बच्चा पड़ा हुआ मिला। जिसे वह बच्चा पहले-पहल मिला, वह कहीं का मठाधीश या महन्त था। बस उसने लड़के को उठा लिया, और शायद उसे पाले, और गद्दी भी दे जाय।

वह स्त्री इस पर बहुत आश्चर्य दिखाने लगी कि देखो तकदीर का कैसा खेल है। जिसने भी उस बच्चे को डाल दिया यही समझकर डाल दिया कि यह मर जायगा, पर उसकी तो तकदीर में महन्त होना लिखा था, वह कैसे मरता।

सुखिया ने पूछा—"क्या महन्त होना बहुत बड़ी बात है?"

"हाँ, क्यों नहीं? महन्तों के पास सैकड़ों हाथी, घोड़े, मकान, जमींदारी तथा रुपये होते हैं।"

सुखिया ने शायद उत्तर पर ध्यान नहीं दिया, बोली—"तो वह पड़ा हुआ लड़का महन्त होगा?"

वह औरत बोली – "सुनती तो ऐसी ही बात हूँ, तकदीर फिर जैसा करावे।"

सुखिया कुछ सोचती रही, फिर बोली—"उसकी माँ को रहम नहीं आया?"

"रहम क्यों नहीं आया होगा। पर लोकलाज की वजह से

बच्चे को अपने पास न रख सकी। कुछ गड़बड़ होगी।"

"अब क्या होगा?"

"काहे का क्या होगा?"

"माँ का क्या होगा?"

"होगा क्या? वह कहीं दूर दराज की होगी। अब वह घर लौट जायगी। कोई जानेगा भी नहीं कि उसे हमल रह गया था।"

"अच्छा! पर माँ बड़ी बेरहम है" कहकर वह अपने बच्चे की तरफ बढ़ी, और उसे गोद में रखकर चुमकारने लगी।

वह स्त्री बोली—"काशीजी में ऐसे सैकड़ों मर्तबा होता है। अक्सर सुनने में आता है कि फलानी जगह पर लड़का या लड़की पड़ी मिली। कई तो मरी भी मिलती हैं।"

सुखिया सिहर उठी, और स्तन निकालकर बच्चे को पिलाने लगी। वह स्त्री तो अपनी कहानी कहकर चली गयी, पर सुखिया बड़ी देर तक बच्चे को दुलारती चूमती रही। कभी उसने बच्चे को इतना प्यार नहीं किया था। वह बच्चे को कहने लगी—"मेरे मुन्ना, मेरे राजा, मैं कभी तुम्हें छोड़ नहीं सकती, चाहे जो कुछ हो जाय। तुम्हारी महंती से यही सागपात तुम्हारे लिये अच्छा है। मेरे मुन्ना, मेरे राजा, मेरे बच्चे इत्यादि।"

उस दिन से वह बच्चे का विशेष ख्याल रखने लगी। अब वह गदंगी नहीं थी, और न वह रात का रोना था। न मालूम कैसे और कहाँ से बच्चे के लिये एक कुर्त्ता भी खरीद कर आ गया, और वह उस कुर्त्ते में बहुत सुन्दर मालूम होने लगा।

रामधारी ने जो यह परिवर्तन देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह यह समझ नहीं पाया कि क्या बात है। आश्चर्य की बात यह है कि उसे इस परिवर्तन से भी कोई खुशी नहीं हुई। उसे बल्कि यही मालूम होने लगा कि उसका बन्धन और

मस्त हो गया। वह पहले से अधिक दुखी रहने लगा। बच्चे पर उसके भाव में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, पर सुखिया पर वह पहले से अधिक कुढ़ने लगा। उसे सुखिया की इस तरल मति में न मालूम क्यों बेचैनी मालूम होने लगी। अजीब लड़की है। कल तक तो इस बच्चे को बिल्कुल फतवार में डाल रखती थी, कल तक तो उसकी कोई कद्र ही नहीं थी, और अब जब देखो तब बच्चे के बनाव-सिंगार में लगी रहती है। रामधारी के विचार और भी गड़बड़ा गये। वह दुनिया को योंही नहीं समझ पाता था, अब उसके लिये दुनिया और भी रहस्यमय और अज्ञेय हो गयी। वह मानसिक अशान्ति में रहने लगा।

चौदह

रामधारी सही साँझ से ही सो जाता था। फिर तो वह सवेरे ही उठता था। इन दिनों चूंकि सुखिया का बच्चा नहीं रोता था, इसलिये उसकी नींद में कभी कोई बाधा नहीं पहुँचती थी। रामधारी स्वप्न में अक्सर पिथौरा पहुँच जाता था। वह पिथौरा, जहाँ वह पैदा हुआ, पला, और बड़ा हुआ। ये स्वप्न बड़े दुखदायी होते थे, क्योंकि स्वप्न जब तक रहता था तब तक तो बड़ी चैन रहती थी, पर ज्योंही स्वप्न टूट जाता था, और वह अपने को काशी की एक सस्ती कोठरी के सामने पड़ा हुआ पाता था, तो उसे बड़ा दुख होता था। बड़ी देर तक नींद उचटी हुई रहती थी।

आज भी रामधारी ने इसी प्रकार पिथौरा का स्वप्न देखा था। उसने यह देखा था कि गिरधारी बहुत दुबला हो गया है, जमुना उसके पास बैठी हुई है। जमुना का चेहरा भी मलिन है। कभी जमुना गाँव की श्रेष्ठ सुन्दरियों में थी, पर अब जैसे उस चेहरे पर किसी ने स्याही लगा दी थी। रामधारी ने जो भाई

और भौजाई को इस हालत में देखा, तो उसे बड़ा दुख हुआ। यही स्वप्न घूम-घूमकर बार-बार आता रहा। अन्त में रामधारी की नींद टूट गयी और वह इधर-उधर करवटें लेने लगा। एक के बाद एक पिथौरा के सारे दृश्य, घर का सारा हाल उसके सामने आने लगा। वह चुपचाप पड़ा-पड़ा इस बात की प्रतीक्षा करने लगा कि सवेरा हो जाय। नींद तो अब आने से रही। उसने यह सोचा कि कल कुछ पत्ती कम डाली होगी तभी इस प्रकार नींद उचट गयी।

लेटे-लेटे उसे यह मालूम हुआ कि पास ही में किसी के पैर की आहट आ रही है। हाँ इसमें कोई शक नहीं। उसने करवट बदली, पर मुंह पर का कम्बल खोलकर नहीं देखा। यदि पिथौरा में इस प्रकार पैर की आहट मिलती तो वह कुछ सावधान होता। पर यहाँ क्या धरा है? चोर आवे या डाकू आवे क्या आता जाता है। एक दफे गरमी का मौसम था। वह आँगन में चारपाई पर लेटा हुआ था। न मालूम क्यों उसकी नींद उचट गयी तो उसे मालूम हुआ कि कुछ पैरों की आहट है। पहले उसने समझा कि कोई गाय खुल गयी होगी, वही इधर-उधर मारी-मारी फिर रही है। वह चुप पड़ा रहा। पर थोड़ी देर बाद उसे ऐसा मालूम हुआ कि दो आदमी बहुत धीरे-धीरे आपस में बातें कर रहे हैं। उसने सोचा गिरधारी जमुना से बात कर रहा होगा, पर नहीं। बातचीत बिल्कुल उसके करीब हुई, और फिर पैर की आहट मालूम हुई। रामधारी ने आँखें खोल दी तो देखा कि पास ही दो-तीन आदमी खड़े हैं। वह समझ गया कि ये डाकू हैं। अकेला वह क्या करता। चुप पड़ा रहा ये डाकू नहीं चोर थे। ये लोग जाकर एक कोठरी में घुसे, जिसमें चक्की लगी हुई थी। इसी चक्की के नीचे धन गड़ा है, चोरों को यही पता था। ज्योंही ये चोर उस कोठरी में घुसे, राम-

धारी धीरे-धीरे उठा, और उसने फौरन जाकर बाहर से किवाड़ बन्द कर दिया। और बहुत जोर से हल्ला मचाया। गाँववाले दौड़ पड़े और चोर पकड़े गये। उस समय उन पर जो मार पड़ी वह अवर्णनीय है। जो ही आता गया वही इन पर एक लात या घूंसा या धौल जमाता गया। चोर पास ही के गाँव के थे। कुछ लोगों ने उन्हें पहचान भी लिया। मारने के बाद वे जब करीब-करीब बेदम कर दिये गये तो उन्हें एक पेड़ से बाँध कर रखा गया।

सवेरे सेहरसिंह और अन्य गाँव के लोग आये। सेहर-सिंह उस समय करीब-करीब जवान था। मजाक करने में एक नम्बर था। बोला—"अबे रमधरिया, तैंने इन्हें पकड़ क्यों लिया, इन्हें चक्की पीसने का शौक था सो चक्की की कोठरी में गये थे" फिर चोरों की तरफ देखते हुए कहा—"अच्छा इस नादान ने जो कुछ किया सो किया, अब मैं तुम्हें ऐसी जगह भिजवाता हूँ, जहाँ दो-चार साल चक्की ही पीसते रहो।

इस पर बड़ा कहकहा हुआ था। गाँव-भर के लड़के और नौजवान वहाँ जमे थे, उन लोगों ने इस वार्त्तालाप को रट लिया, और सब एक-दूसरे से यही कहने लगे—"अबे रमधरिया तैंने इन्हें पकड़ क्यों लिया..., इत्यादि।"

एक क्षण के अन्दर यह सारा दृश्य रामधारी की आँखों के सामने नाच गया। पर यहाँ चोर की क्या जरूरत थी। यहाँ तो न कोई रकम है, और न कोई गल्ला है। सुखिया को भेजते समय गिरधारी ने यह कहकर उसके जो थोड़े-बहुत चाँदी के जेवर थे ले लिये थे कि परदेश में जेवर अच्छा नहीं होता। बस कानों में चाँदी के कर्णफूल रहने दिये थे, और हाथ में एक पतली चूड़ी छूटी थी। यही यहाँ का सारा जेवर था, इसे लेने के लिये चोर क्यों आने लगे।

फिर रामधारी तो बिल्कुल दरवाजे के सामने लेटा था। दरवाजा भी भीतर से बन्द होगा। ऐसी हालत में चोर आकर क्या झख मारते? रामधारी करवट बदलकर सोने लगा, पर नींद नहीं आयी। दो मिनट बाद फिर उसे वही आहट मालूम पड़ी। रामधारी ने परवाह नहीं की। चोर आवें भी तो उसकी बला से। उसे तो उठा नहीं ले जायेंगे? और ले जावें भी तो कौन चिन्ता है।

वह सोने की कोशिश करने लगा। इतने में उसे ऐसा आभास-सा हुआ कि कोई उसे लांघ रहा है और साथ ही दरवाजा खुलने की बहुत बारीक आवाज हुई, बस रामधारी ने बिना सोचे ही कम्बल फेंक दिया और खड़ा होकर लपका। उसने यह काम इतनी फुर्ती से किया कि लांघनेवाला अभी भीतर पैर रख भी नहीं पाया था कि उसकी पकड़ में आ गया। रामधारी ने वज्रकठिन हाथों से उसे पकड़ लिया, और स्वाभाविक रूप से चोर-चोर चिल्लाने ही वाला था कि जिसको उसने पकड़ा था, उसने कहा—"चाचा चिल्लाइये मत।"

अरे यह सुखिया थी। यह इतनी रात को कहाँ गयी थी? रामधारी को एक साथ आश्चर्य, भय तथा क्रोध आया। अच्छा यह बात है। वह तो भंग की गोली चढ़ाकर सो जाता है, और यह चुड़ैल रात को न मालूम कहाँ-कहाँ घूमा करती है। वह तो इस पर दया करके सब-कुछ छोड़ करके पड़ा हुआ है, और यह गुलछर्रे उड़ाती फिरती है। उसके पैर के नीचे से जमीन खिसक गयी। अरे इसीके लिये वह पिथौरा त्यागकर पड़ा हुआ है? इसी राक्षसी के लिये?

उसने उसे छोड़ दिया, पता नहीं ऐसा उसने घृणा के कारण किया या और किसी कारण से। अवश्य घृणा के कारण ही किया होगा। नहीं तो उसका जी चाहता था कि उसका

गला घोंट दे। कलमुँही कहीं की, खानदान का सर्वनाश किया अब यहाँ उसका सर्वनाश कर रही है। यदि उसे इस प्रकार रात-बिरात में घूमना है और गुलछर्रे उड़ाना है, तो उसे रोकता कौन है? वह मजे में ऐसा कर सकती है। पर उसे तो छुट्टी दे देती। सो नहीं ऊपर से बड़ा सती साध्वी बनी है; चाचा को दिखलाती है कि वह बड़ी अच्छी है. एक दफे पैर चूक गया था। पता नहीं कब से जाती है, और किसके पास जाती है।

रामधारी की इच्छा हो रही थी कि जैसे जमुना और गिरधारी ने मिलकर सुखिया को मारा था, उसी तरह वह भी उसे मारे, पर वह कुछ समझ कर रुक गया।

सुखिया भीतर चली गयी। रामधारी अंधेरे में बाहर खड़ा रह गया। एक क्षण तक वह हक्का-बक्का हो गया। उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे कोई उसे बाँधकर मार रहा है। वह कुछ देर तो किंकर्त्तव्यविमूढ़ वहीं खड़ा रहा। अन्धकार मानो उसका उपहास कर रहा था। वह दरवाजे को धमाके से खोलते हुए भीतर घुसा। फिर दरवाजे को भीतर से बन्द कर लिया, और बोला—"तू कहाँ गयी थी?"

सुखिया कहीं पास ही थी। पर उसने कोई उत्तर नहीं दिया। रामधारी का गुस्सा और भी बढ़ गया। पर उधर दियासलाई के बक्स खोलने की आवाज हुई, और फौरन कुप्पी जल उठी।

रामधारी ने सुखिया को जो देखा, तो वह बिल्कुल पीली दिखलाई पड़ी। जैसे उसके चेहरे में खून का एक कतरा भी नहीं था। जैसे वह एक चलता-फिरता मुर्दा हो। रामधारी ने जो उसकी तरफ देखा तो उसे क्रोध के बजाय डर मालूम होने लगा। कहीं यह गिर तो नहीं पड़ेगी? देखने से तो ऐसा ही मालूम होता था कि अभी गिरना ही चाहती है। पैर लड़खड़ा रहे थे,

शायद काँप रहे थे, चेहरे पर कोई भाव नहीं था। वह बिल्कुल अभिव्यक्तिहीन हो रहा था।

सुखिया जमीन पर बैठ गयी। पर कुछ बोली नहीं। सिर्फ चाचा की तरफ एक बार देखकर रह गयी।

प्रथम आश्चर्य के बाद रामधारी ने समझा कि यह सब ढोंग है। अभी घूमकर आ रही है, पर बन रही है जिससे कि नतीजा न भुगतना पड़े। उसने पहले से अधिक रुखाई के साथ पूछा—"बनती क्यों है ? बताती क्यों नहीं कि कहाँ गयी थी ?" और उत्तर बिना सुने ही कहता गया—"कलमुंही कहीं की, शर्म नहीं आती, इतनी रात को किस खसम के पास गयी थी। तू रोज जाती होगी।"

फिर भी सुखिया कुछ नहीं बोली। पर उसके चेहरे पर एक आत्मप्रसाद की भावना झलक गयी। जैसे वह कोई अपराधी न हो बल्कि कोई अच्छा काम करके लौटी हो। बोली—"चाचा जी...." आगे कुछ बोल नहीं पायी। और उसने इशारे से उस स्थान की ओर दिखला दिया जहाँ बच्चा रहा करता था।

अरे, यह तो सूना था। बच्चा कहाँ गया ? रामधारी ने अपने चारों तरफ देख डाला, सुखिया की गोद की तरफ देखा, पर कहीं बच्चा नहीं था। रामधारी की कुछ समझ में ही नहीं आया कि क्या मामला है। उसका क्रोध जा चुका था। अब उसके चेहरे पर एक आतंक-सा छा गया था। बच्चा कहाँ जा सकता है, यह उसकी कल्पना के बाहर था। आश्चर्य पर आश्चर्य। सम्भल कर बोला—"बच्चा कहाँ गया ?"

इसके उत्तर में सुखिया ने जो कुछ कहा, उसका सारांश यह था कि वह महन्त होगा। यह कहकर सुखिया इस प्रकार हँसी जिससे रामधारी को यह शक हुआ कि कहीं उसका दिमाग तो नहीं फिर गया है।

उसने सुखिया को ध्यान से देखते हुए कहा—"महन्त होगा क्या ?" सचमुच उसे यह बात बिल्कुल बेहूदी मालूम हो रही थी, बोला—"वह है कहाँ ?"

इसके उत्तर में सुखिया बिना कुछ झिझके बोली—"मैं उसे छोड़ आयी।"

"कहाँ छोड़ आयी ? किसके पास छोड़ आयी ?" रामधारी ने कौतुहल के साथ पूछा।

"मैं उसे गंगा किनारे छोड़ आयी। अब वह गंगाजी का लड़का हो गया" कहकर सुखिया ने इधर-उधर देखा, फिर बिल्कुल अप्रत्याशित रूप से सिसकने लगी।

रामधारी इतना तो समझ गया कि सुखिया लड़के को कहीं छोड़ आयी है, पर महन्त होने से इससे क्या सम्बन्ध है इसे वह बिल्कुल समझ न सका। महन्त क्या है यह भी वह न समझा।

रामधारी ने कहा—"सच बतलाओ कि क्या मामला है। मेरी कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"

तब सुखिया ने उसे यह समझा दिया कि उसने अपने लड़के को गंगा किनारे कपड़े ओढ़ाकर छोड़ दिया है। उसने यह भी बताया कि उसने ऐसा यह समझ कर किया है कि कोई उस लड़के को रख लेगा: और इस प्रकार वह भी बच जायगी और लड़का भी। बोली—"अब हम लोग पिथौरा चल दें।"

रामधारी अब समझ गया कि किस उद्देश्य से क्या किया गया है। उसने हाँ, ना कुछ नहीं कहा, और वह बाहर निकल गया।

अब करीब-करीब सवेरा हो चुका था। पूर्व दिशा में कुछ-कुछ उजेला हो चला था। रामधारी फिर जाकर लेट गया। असल में वह अपने से बातचीत करना चाहता था। भीतर

कुप्पी जलने लगी। उसने बाहर से किवाड़ भेड़ दिया, और घण्टे में दो सौ मील की रफ्तार से सोचने लगा। वह इसी लड़के के लिये रुका हुआ था। वह समझता था कि इस लड़के के प्रति उसका एक कर्त्तव्य है। पर जब वही नहीं रहा तो वह अब सुखिया का साथ कहाँ तक रगड़े। सुखिया पर उसे इस कारण बहुत क्रोध आ रहा था कि उसने यह सब कर डाला, और उसे एक बार भी नहीं पूछा। इतना बड़ा काम किया पर उसे एक बार यह भी नहीं कहा कि चाचा ऐसा करने जा रही हूँ। फिर वह उसके लिये त्याग क्यों करे। क्यों करे? क्यों? क्यों? क्यों?

इस प्रकार की बहुत-सी बातें उसके दिमाग में घूमने लगीं। सुखिया तो जब भी तबियत होती है अपने मन से काम करती है। वह केवल इसलिये है कि उसे कमाकर खिलावे। रहा सुखिया को पिथौरा ले जाना। सो यह नहीं हो सकता। भैया तो शायद यों भी नाराज हो कि इतने दिनों तक कहाँ पड़ा रहा। अब यदि उन्होंने देखा कि साथ में सुखिया भी आयी है तब तो वे बहुत ही नाराज होंगे। ऐसे विचार करते-करते सवेरा हो गया पर वह किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सका।

उधर सुखिया बराबर रोती जाती थी। पता नहीं उसे क्या हो गया था। वह बीच-बीच में न मालूम किससे जैसे बातें-सी कर रही थी—"मेरे मुन्ना, मेरे राजा, मेरे लाल।"

रामधारी इन बातों को सुन रहा था, और सुखिया के सिसकने की आवाज उसके कानों में आ रही थी, पर इन बातों से उसमें दया का उद्रेक नहीं हो रहा था, बल्कि घृणा का उद्रेक हो रहा था। सुखिया के विरुद्ध जो फर्दजुर्म रामधारी के मन में था अब उसमें एक और जुर्म जुड़ गया था, वह था अपने असहाय बच्चे को छोड़ देना। मजे की बात यह है कि गिर-

धारी, जमुना और वह इसी काम को करने के लिये षड्यन्त्र कर चुके थे, और इसी के लिये वह काशीजी आया था, पर वही आज सुखिया को दोषी समझ रहा था। भीतर सुखिया सिसकती रही, और बाहर रामधारी को जरा भी रहम नहीं आया। जब अच्छी तरह सवेरा हो गया, तो वह उठकर मिल के रास्ते पर चला।

पन्द्रह

पिथौरा में रामधारी वापस आ गया सुनकर गाँव-भर में जो भयंकर तहलका मचा, वह अकल्पनीय है। दस-बीस गाँव में लोग किसी ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में नहीं जानते थे जिसने अपनी भतीजी को भगाया हो। लोग उसे देखने के लिये उत्सुक होकर जैसे जिससे बना उसे देखने आये। रामधारी अब गाँव का एक मामूली किसान-मात्र नहीं था, वह अब एक कुख्यात व्यक्ति था जिसे सभी देखना चाहते थे। इस बीच में वह दर्शनीय हो चुका था। वही रामधारी, जो गाँव का सबसे मामूली व्यक्ति था।

बिरादरीवालों में फिर एक बार सनसनी हो गयी। समाज का दण्ड फिर उठ गया कि रामधारी पर वार करे। लोग सेहरसिंह के पास पहुँचे। सेहरसिंह ने जो यह खबर सुनी तो उसमें बहुत इच्छा हुई कि वह जाकर रामधारी को देखे, पर वह गाँव का बुजुर्ग था। इच्छा होते हुए भी वह ऐसा कैसे कर सकता था।

उसने बिरादरीवालों से कहा—"इतना घबड़ाने की क्या जरूरत है। पहले पता तो लग जाय कि गिरधारी ऐसे पापी भाई को अपने घर पर स्थान भी देता है कि नहीं। यदि नहीं देता है तो फिर तो कोई बात ही नहीं। यदि देता है तो फिर यह सवाल उठ सकता है कि गिरधारी को बिरादरी से खारिज किया जाय या नहीं।"

एक ने कहा—"अगर गिरधारी आश्रय न दे तो गिरधारी को कोई सजा नहीं मिलेगी। पर रामधारी को भी तो कुछ दंड मिलना चाहिए।"

सेहरसिंह व्यवहारिक आदमी था, बोला—"सो क्यों नहीं। इतने बड़े पाप के लिये उसे दंड तो जरूर दिया जायगा। पर प्रश्न तो यह है कि दंड तब दिया जाय जब हम रामधारी को अपनी बिरादरी में समझते हों। जब हम उसको अपनी बिरादरी में समझते ही नहीं, तो फिर दंड और प्रायश्चित्त कैसा? किरस्टान के लिये प्रायश्चित्त क्या?"

बिरादरीवालों में से एक ने कहा—"अजी किरस्टानों में भी इतना अनाचार नहीं होता। उनमें मौसेरी-चचेरी बहिन से शादी होजाती है, पर उनमें भी कोई चाचा भतीजी को लेकर नहीं भागता।"

"हाँ हाँ उनमें कुछ धर्म है तभी तो राज कर रहे हैं, नहीं तो राज कैसे करते? ऐसे कोई हँसी-खेल थोड़े ही है।"

सेहरसिंह ने यह पूछा—"वह लड़की कहाँ गयी? उसका कुछ पता है।"

"कुछ भी पता नहीं।" लोग दौड़कर सेहरसिंह को खबर देने आये थे। अभी उन्होंने यह सब कुछ नहीं सुना था कि रामधारी का क्या कहना है।

मेहरसिंह ने थोड़ी देर और बातचीत करके लोगों से यही कहा—"पहले सब बात देख ली जाय, तो फिर कुछ सोचा जायगा।"

लोग क्या करते, वे इससे अधिक परोपकार करना चाहते थे, निराश होकर चले गये।

रामधारी आकर भाई के पैरों से लिपट गया। गिरधारी तो पहले उसे देखकर आश्चर्यचकित हो गया। पर जल्दी ही उसने भाई को गले से लगा लिया।

वह रामधारी को आँगन अलग ले जाकर सब हाल पूछने लगा। रामधारी ने जैसा-जैसा बीता था सब बता दिया। अन्त में उसने यह भी बताया कि जब सुखिया ने अपने बच्चे को त्याग दिया, तो उसे बड़ा क्रोध आया, और तब वह चला आया। इससे बहुत पहले ही उसे आना चाहिये था।

गिरधारी ने सुनकर कहा—"ठीक किया चले आये", पर उसके मन में कुछ सन्देह हो रहा था कि गाँव के बिरादरीवाले न मालूम क्या कहें। भाई के आने पर जो खुशी होनी चाहिये थी, इसलिये वह हो नहीं सकी। वह जानता था कि गाँववाले रामधारी के सम्बन्ध में इन तीन-चार महीनों में क्या-क्या कहा करते थे। इस कारण उसे बहुत शक था कि क्या प्रतिक्रिया रहे।

दोनों भाई मिलकर जमुना के पास गये। वहाँ फिर रामधारी ने सारा किस्सा बयान किया। जिस जगह पर रामधारी ने यह कहा कि वह लौटते-लौटते इस कारण नहीं लौट सका कि उसने देखा कि सुखिया को असहाय छोड़ जाना उसे गुंडों के हाथ में छोड़ जाना है, वहाँ जमुना की आँखें बहुत चमक उठीं। जमुना को जैसे अपने देवर पर बड़ा गर्व हुआ। पर जब रामधारी ने अन्तिम बात बतायी और यह कहा कि मिल में

एक घंटा काम करने के बाद उसने सीधा स्टेशन का रास्ता लिया, तो उसने ऐसी मुद्रा बनायी जैसे उसे बड़ी निराशा हुई हो। जमुना बोली—"तो उसे साथ में क्यों नहीं ले आये ?"

रामधारी इस प्रश्न के लिये बिल्कुल तैयार नहीं था। वह स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था कि जमुना उससे ऐसा प्रश्न कर सकती है। वह बिल्कुल हक्का-बक्का रह गया। उसने कहा—"किसे ? किसे नहीं ले आये ?"

"सुखिया को और किसे ?" जमुना ने बिल्कुल स्पष्ट लहजे में कहा।

रामधारी की फिर भी समझ में नहीं आया। बोला—"उसे कैसे लाता ? उसे छोड़ने के लिये ही तो गया था।"

जमुना कुछ खीझकर बोली—"सो तो ठीक है, पर जब बच्चा हो गया, और बच्चा डाल दिया गया और उसकी तन्दुरुस्ती भी ठीक हो गयी, तो उसे लाने में क्या हर्ज था ?"

रामधारी ने आश्चर्य के साथ कहा—"पर पाप तो रहा।"

जमुना ने अधैर्य के साथ कहा—"यहाँ पाप को कौन पूछता है। मैं भी तीन-चार महीने पहले तुम्हारी ही तरह समझती थी, पर अब तो देख रही हूँ कि पाप से कुछ नहीं आता-जाता। बस इतनी ताकत हो कि पाप छिपाले या खुल भी जाय तो लोगों को कुछ कहने की हिम्मत न पड़े, तो कोई बात नहीं।"

जमुना इस बीच में एक साधारण धर्मभीरु किसान स्त्री से इस तरह की दार्शनिक हो गयी थी। रामधारी ने उसकी तरफ ध्यान से देखा। जैसे यह कोई दूसरी ही स्त्री थी। गिरधारी न मालूम क्या सोचकर खटोला पर बैठे-बैठे उँगली से फर्श पर कुछ रेखायें बनाने लगा। जमुना कहती गयी—"देवर यह बड़ी कठिन दुनिया है। गाँववाले तुम्हें क्या कह रहे हैं, यह अभी तुम्हें पता लगेगा।"

रामधारी के मन में एक आतंक समा गया। उसे एकाएक यह ख्याल आया कि कहीं काशीजी में लोग जो कुछ कहा करते थे, वैसा ही यहाँ न कहते हों। पर ऐसा कैसे हो सकता है? यहाँ तो सब लोग उसे लड़कपन से जानते हैं, फिर ऐसा कैसे कहेंगे। कभी नहीं, ऐसा वे कभी नहीं कह सकते।

गिरधारी को अब तक यह नहीं सूझा था कि सुखिया को अब ले आने में कोई डर नहीं था। डर तो रंगे-हाथों पकड़े जाने में है। नहीं तो बिरादरी में कौनसा ऐसा पाप है जो नहीं हो रहा है। जो लोग बिरादरी के पंच और गण्य-मान्य बने हुए हैं, वे ही क्या किसीसे कम पापी हैं। सेहरसिंह नम्बरी धूर्त्त और पापी है। अपनी जवानी में न मालूम कितने घाटों का पानी पी चुका है, पर इसके लिये उसे कौन पूछता है?

फिर अगर सुखिया आ जाती तब तो वह सेहरसिंह से यह भी कह सकता था कि रुपये लौटाओ। पर नहीं, वह तो खुद ही सेहरसिंह से कह चुका था कि सुखिया को हमल रह गया था। नहीं वह रास्ता बंद है, पर वह सेहरसिंह से ऐसा कह चुका है इसका प्रमाण क्या है? प्रमाण यह है कि सेहरसिंह ऐसा कहेगा। पर एक आदमी के कहने से क्या होता है सुखिया का वापस आना ही अच्छा रहता। गिरधारी ने इन बातों को सोचकर रामधारी से कहा—"जब सब बखेड़ा निपट गया तो सुखिया को ले क्यों नहीं आये?"

"पर भैया तुमने तो उसे छोड़ आने के लिये कहा था।"

"जब कहा था तो कहा था। सो छोड़कर भी तुम कहाँ आये? उसी वक्त चले आते? तुम्हारे न आने से मेरे ऊपर साढ़े चार सौ का दंड पड़ा" कहकर उसने इसका ब्योरा बताया। बोला—"यह तो दारोगाजी का दंड रहा, अब बिरा-

दरीवालों की तरफ से जो दंड पड़ जाय सो अलग है। उसे ले आते तो फिर हम सबको देख लेते।"

रामधारी की यह समझ में नहीं आ रहा था कि उसने गलती कैसे की है। फिर भी जब भाई-भौजाई दोनों ने एक ही बात कही, और इन्हीं दोनों के मत को मूल्य वह देता था, तो वह कुछ अस्पष्ट रूप से ऐसा समझने लगा कि कहीं गलती जरूर हुई है। उसने कहा—"तो इसमें मुश्किल क्या है ? मैं फिर से जाता हूँ, और उसे ले आता हूँ। वह तो खुद ही आने को कह रही थी, बल्कि आने के लिये ही उसने लड़के को त्याग दिया था।"

गिरधारी इस पर किसी राय पर पहुँचने में असमर्थ होकर जमुना की तरफ देखने लगा। जमुना कुछ नहीं बोली। उसके चेहरे पर आशा और निराशा का द्वन्द मचा हुआ था, पर निराशा की ही विजय हो रही थी। वह पलकहीन नेत्रों से छत की तरफ देखती रही।

गिरधारी ने रामधारी से कहा—"जाओ काम-धाम करो, फिर सब देखा जायगा।"

सोलह

जिस दिन रामधारी गांव पहुँचा, उसी दिन उसने देख लिया कि जिस पिथौरा को वह छोड़ गया था, अब वह पिथौरा नहीं है। उस पर सब लोगों की दृष्टि बदली हुई है। न तो भाई ही वह है, न भौजाई वह है, भतीजे-भतीजी सब बदल चुके हैं। रामधारी घर से थोड़ी फुर्सत मिलते ही अपने खेत की तरफ चला। हतोत्साह होने के यथेष्ट कारण होते हुए भी उसका मन उत्साह से भरा हुआ था। आने के बाद सुखिया को न लाने के कारण उसने भाई तथा भौजाई से जो डाँट सुनी थी, उसके कारण उसके मन पर जो बोझ-सा पड़ा था, वह खेत की तरफ बढ़ते ही दूर हो गया था। पर उसने जो प्रत्येक व्यक्ति को अपनी तरफ अजीब दृष्टि से ताकते हुए तथा ऊँगली उठाते हुए देखा तो उसके जोश पर भी ठंडा पानी पड़ गया। किसीने जैसे उसके मुंह पर कसकर तमाचे मार दिये। वह सहमा हुआ खेत की तरफ गया, और वहां से जल्दी-जल्दी लौट आया। खेत की खुली हवा भी उसे प्रसन्न न कर सकी। उसे ऐसा अनु-

भव हुआ जैसे कोई आंधी चारों तरफ जमा हो रही है। उसकी दबी हुई गर्जन-ध्वनि उसे जैसे सुनाई पड़ रही थी।

रामधारी ने घर में लौटकर देखा तो वहां केहरसिंह जमा हुआ था। उसे इस पर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसने पहले इसे इस घर में कभी आते नहीं देखा था। एकाएक वह घर में ऐसा घनिष्ठ कैसे हो गया, यह उसकी समझ में नहीं आया। इन महीनों में सभी बातें बदल चुकी थीं। उससे केहरसिंह से कभी कोई साबका नहीं पड़ा था, पर मेहरसिंह को वह घृणा की दृष्टि से देखता था। इसी नाते केहरसिंह भी उस के लिये घृणा का पात्र था। उसे केहरसिंह का आना-जाना जैसे अजीब सा मालूम हुआ।

केहरसिंह बहुत चलता हुआ था। उसने ज्योंही देखा कि रामधारी लौट आया है त्योंही वह रामधारी से दोस्ती करने के लिये आगे बढ़ा। वह रामधारी चाचा, रामधारी चाचा करके बात करने लगा। जान-बूझकर उसने उससे यह नहीं पूछा कि इतने दिन कहां थे। सुखिया का क्या हुआ, इस बात को जानने के लिये वह मन-ही-मन उत्सुक था, पर यह केवल उत्सुकता मात्र थी, इसके लिये वह बेजा कौतूहल दिखाने के लिये तैयार नहीं था। सुखिया उसके लिये भूतकाल का एक प्रतीकमात्र थी, वर्तमान काल का प्रतीक तो बिलसिया थी। केहरसिंह ने सहजात बुद्धि से यह समझ लिया था कि किसी-न-किसी प्रकार से रामधारी की मित्रता प्राप्त करनी ही है, नहीं तो अब इस घर में उसकी दाल नहीं गलेगी।

वह रामधारी की दृष्टि से ही समझ गया कि वह उसे अविश्वास की दृष्टि से देख रहा है। यह अविश्वास किसी विशेष प्रकार का नहीं था, बल्कि यह एक साधारण अविश्वास था। जैसे कुत्ता एक नये आदमी को देखकर अविश्वास की दृष्टि से देखता

है, भले ही वह चोर न हो साहू हो, रामधारी उसी प्रकार से केहरसिंह को जब देखो तब आंखों से तोल रहा था। अभी रामधारी घर के काम में व्यस्त था, इसलिये केहरसिंह ने उसके प्रति एक मित्रतापूर्ण रुख मात्र दिखलाया। रामधारी घर की सफाई वगैरह करने लगा।

सब काम कर रामधारी जमुना के पास पहुंचा। उसने इधर-उधर की बातों के बाद यह पूछा—"केहरसिंह कबसे आने लगा?"

जमुना ने इसके उत्तर में इतना ही कहा—"मैं नहीं जानती" फिर कुछ सोचकर बोली—"अपने भैया से पूछो।"

रामधारी ने बिना किसी भूमिका के कह डाला—"हमें तो केहर कुछ अच्छा नहीं जंचता।"

जमुना जैसे कुछ सोचने लगी, फिर बोली—"अच्छा क्यों नहीं है। तुम्हारे भैया को ऐसे मौके पर सौ रुपये दिये, जब अगर रुपये न मिलते तो बैल की गोई भी बिक जाती।"

रामधारी ने कहा—"अच्छा!" पर उसे विश्वास करने का जी नहीं चाहता था। ऐसा आदमी सौ रुपये दे सकता है, इस पर उसे बहुत आश्चर्य हुआ। बोला—"पर भैया ने तो कहा कि सेहरसिंह ने साढ़े चार सौ रुपये लिये।"

जमुना बोली—"हां, बाप ने साढ़े चार सौ लिये, पर इसमें से सौ बेटा ने दिया" वह एक कड़वी हँसी हँसकर रह गयी।

रामधारी इस बात को ठीक-ठीक नहीं समझ सका। जमुना शायद समझाने के लिये बोली—"सिर्फ सौ रुपये ही नहीं दिये, रोज घर-भर के लिये नयी-नयी चीजें लाता रहता है।

रामधारी ने ऐसा मुंह बनाया जैसे उसे कोई ऐसी बात कही जा रही हो, जो उसके दो और दो चार में फिट नहीं हो रही। वह वहां से उठकर चला गया। उसने यह समझ लिया

कि वह समझ पाये या न समझ पाये केहरसिंह परिवार का मित्र है, और यदि वह उसे चाह नहीं सकता, तो कम-से-कम उसे बराकर चले।

तदनुसार वह उसे बराकर चलने की कोशिश करने लगा। पर केहरसिंह तो तुला हुआ था, उसने सन्ध्या के पहले ही रामधारी को पकड़ लिया और कहा कि आज चाचा के आने की खुशी में बढ़िया बूटी छनना चाहिये। वह पहले ही से बादाम, पिस्ता और तमाम मसाले और भंग ले आया था। दूधिया भंग का विचार हुआ। दूध तो खैर घर में ही मिल जाता। अभी तक गिरधारी के पास गायें थीं, और वे दूध भी देती थीं।

रामधारी काशी जाने के पहले भंग की सूखी गोली कभी-कभी चढ़ा लेता था, पर काशीजी में उसने पंडों को दूधिया भंग छानते देखा था, और उसके मन में अब यह धारणा हो गयी थी कि भंग छानने का यही सबसे अच्छा और रईसी तरीका है। केहरसिंह के निमंत्रण को उसने स्वीकार कर लिया।

दोनों मिलकर भंग छानने की तैयारी में लग गए। एक बादाम फोड़ने लगा तो दूसरा पिस्ता छीलने लगा। इस प्रकार काम आगे बढ़ने लगा। केहरसिंह ने बिलसिया को बुला लिया और वह छोटी इलायचियों को छीलकर चली गयी। बारी बारी से दोनों सिल पर गये। केहरसिंह ने कहा—"मजा तो तब है चाचा कि इतना पीसा जाय कि लोढ़े से सिल उठ आवे। हां नहीं तो ?"

रामधारी यह दिखाना चाहता था कि वह इन सब बातों से वाकिफ है, उसने सिल पर लोढ़ा चलाते हुए कहा—"यह तो है ही, बबुवा पांडे ऐसा ही कहते थे।"

केहरसिंह ने पूछा—"बबुआ पांड़े कौन ?"

रामधारी ने झूठ बोलते हुए कहा—"गयाजी के बहुत भारी पंडा हैं" गिरधारी की सलाह से रामधारी ने लोगों से यह कहा था कि वह गया में पिंड देने गया था और वहीं बीमार पड़ गया इसलिये इतनी देर हुई। असल में बबुवा उसीकी मिल का एक कुली था जिसने उसे यह बताया था कि बनारस में भंग की दूकानें कहां-कहां हैं।

केहरसिंह बोला—"हां पंडे लोग तो भंग छानते ही हैं। वह कला उन्हीं में रह गई, और लोग क्या जानें ?"

रामधारी ने उसे सुधारते हुए कहा—"दो ही तरह के लोग तो भंग छानते हैं, एक धर्मात्मा लोग और दूसरे गुण्डे।"

दोनों इस मन्तव्य पर अकारण हँस पड़े। गिरधारी भी फुर्सत पाकर, आकर पास ही एक खटोली पर बैठ गया, और उनसे बातें मिलाने लगा। तीनों की खूब घुटने लगी। यों तो घर में केहरसिंह के कारण हमेशा धमाचौकड़ी मची रहती थी, पर आज गिरधारी को बहुत आनन्द आ रहा था। भंग को विधिवत् छानते-घोटते संध्या हो गयी, यहां तक कि कुप्पी जलाकर काम चालू रखना पड़ा। जिस तरह से तैयारी हो रही थी, उससे जमुना के अलावा सभी यह उम्मीद लगाये हुए थे कि उनको भी कुछ प्रसाद मिलेगा। सभी सिल-लोढ़े के इर्द-गिर्द खुले या छिपे रूप में मँडरा रहे थे।

जब भंग बिल्कुल तैयार हो गया और अब लोटों में परोसा ही जाने वाला था, तो इतने में एक किसान ने आकर गिरधारी को यह खबर दी कि सेहरसिंह उसे अभी बुला रहे हैं। फौरन सबके माथे ठनक गये। आनन्द की महफिल में निराशा छा गयी। कहां ? इसके पहले तो कभी सेहरसिंह ने इस तरह गिरधारी को याद नहीं किया था। यह क्या बात है।

उस आदमी से गिरधारी कुछ कह नहीं पा रहा था। वह सबका मुंह देख रहा था, और सब उसका मुंह देख रहे थे। केहरसिंह उस समय एक लोटे में विधिवत भंग को कपड़े से छान रहा था। उसने ही पहले बात की, उस किसान से बोला—"तुम जाओ, अभी चाचा शरबत पीकर जायेंगे।"

वह आदमी चला गया। सभी समझ गये कि यह एकाएक बुलावा क्यों है। केहरसिंह को तो मालूम था कि जब से सबेरे रामधारी पहुंचा, तबसे बिरादरीवाले किस प्रकार कोलाहल मचाये हुए थे। गिरधारी को कुछ मालूम नहीं था, पर वह ऐसी ही किसी बात की शंका कर रहा था। रामधारी ने जो कुछ सुना था, उससे उसे भी खटका था।

केहरसिंह ने सबको भांग परोस दिया। सबने चुप्पी में उसे पी लिया। पीसते, छानते और घोटते समय जो आनन्द आया था, उसका सौवां आनन्द पीने में नहीं आया। उस किसान ने आकर सब गुड़-गोबर कर दिया। केहरसिंह ने बच्चों को भी थोड़ा-थोड़ा चखा दिया और बिलसिया को भी एक लोटे में भंग पहुंचा दिया।

जब तक सब लोग भंग पी नहीं चुके तब तक किसी ने इस बुलावे पर कुछ नहीं कहा। मानो वे यह डर रहे हों कि जो कुछ रहा सहा आनन्द बचा था, वह भी कहीं काफ़ूर न हो जाय। पर जब सब लोग पी-पा चुके, और बंट चुका, तब गिरधारी उठा और केहरसिंह को बोला—"तो भैया जाता हूँ।"

कहकर उठ खड़ा हो गया। केहरसिंह ने ढाढस बंधाते हुए कहा—"जाइये न, डर काहे का? जबसे रामधारी चाचा आये हैं तब से बिरादरी वालों में बड़ी चम-चख मची हुई है। बहुत से लोग बाबूजी के पास पहुंचे, उसीके सिलसिले में मैं समझता हूँ कि आप बुलाये गये होंगे।"

गिरधारी घबराकर बोला—"मुझे तो खेत में जाना था"—फिर सोचकर करीब-करीब रुआंसा होकर बोला—"तो क्या होगा ?"—वह फिर खटोली पर बैठ गया।

केहरसिंह ने कहा—"होगा क्या ? होगा कुछ भी नहीं। आप अपने सत्य पर डटे रहिए, फिर कोई कुछ नहीं कर सकता।"

"हाँ मैं तो यह कहता हूं कि रामधारी पितरों का पिण्ड देने के लिये गयाजी गया था, और सुखिया ननिहाल में है।"

केहरसिंह जानता था कि ये बातें झूठी हैं, पर उसने कहा—"सांच को आंच नहीं, आप कहते जाइये तो देखूंगा कि कौन क्या बिगाड़ लेता है। मेरा भी नाम केहर है।" उसने मूछ पर हाथ फेरा।

केहरसिंह के इस कथन से गिरधारी को बहुत ढाढ़स बंधा। उसके जो औसान ढीले पड़ रहे थे, सो उसमें फिर हिम्मत आ गयी। वह जाने के लिये तैयार हो गया, फिर भी अन्त में आकर उसका धैर्य फिर उखड़ने लगा। बोला—"लेकिन मुझे काम से खेत में जो जाना है।"

केहरसिंह बोला—"सो कुछ परवाह नहीं, रामधारी चाचा चले जायेंगे और आप घबड़ा क्यों रहे हैं, बिरादरीवाले नाहर थोड़े ही हैं जो खा जायेंगे। आप अपनी बात कहिये, उन्हें अपनी बात कहने दीजिये। फिर मैं तो हूं ही, सब दुष्टों को देख लूंगा। मैं बिगड़ खड़ा हो जाऊं तो सब साले भागते ही दिखाई देंगे।"

गिरधारी ने गदगद होते हुए कहा—"हाँ बेटा तुम्हारा ही तो भरोसा है। नहीं तो यहां तो अबतक सत्यानाश हो जाता।

गिरधारी भीतर जाकर एक चादर ओढ़कर चला गया। रामधारी भी कुछ देर में खेत में चला गया। फिर तो घर में

केहरसिंह का राज्य हो गया और उसने यह समझकर कि पता नहीं कब तक यह मौका रहे अपने राज्य का बखूबी उपयोग किया। सब भंग तो पिये ही हुए थे।

जमुना अन्धेरे में अपने बिस्तरे पर लेटी-लेटी एक पत्थर के पहरेदार की तरह सब बातें सुनती रही। कैसे भंग घोटना शुरू हुआ, कैसे गिरधारी आकर उसमें शामिल हो गया। कैसे बात-बात पर कहकहेबाजी होने लगी, कैसे रंग में भंग करता हुआ वह किसान आया, कैसे केहरसिंह ने गिरधारी का धीरज बंधाया, कैसे पहले गिरधारी और थोड़ी देर बाद रामधारी बाहर चले गये। फिर........। हा हा हा हा। बच्चे खा-पीकर सो गये। केहरसिंह और बिलसिया में कानाफूसी से बातें होने लगीं। फिर पता नहीं वे किधर गये। पर पास ही कहीं गये होंगे क्योंकि थोड़ी देर में एक खाट नियमित रूप से हिलने लगी। काफी देर तक हिली। हिलती, बन्द हो जाती, फिर हिलती। जमुना ने उस तरफ से अपना मन हटा लेना चाहा। कौन उसकी बात सुनेगा? फिर इस समय तो केहरसिंह नाराज हो जाय तो सारा परिवार डूब जाय। कहीं किसीकी हड्डी का भी पता न लगे। बिरादरी के मगरमच्छ उन्हें खाने के लिए मुंह बाये हुए खड़े हैं। एक-एक को खा जायेंगे। वह आगे सोच न सकी। चारों तरफ सन्नाटा और अंधेरा था। कहीं कोई नहीं बोल रहा था। फिर एकाएक जैसे रात की गोद में चिड़ियों की चहचहाहट मालूम होती है, उसी तरह केहरसिंह और बिलसिया बातें कर रहे थे। अब की बार कानाफूसी नहीं थी। चिल्ला-चिल्लाकर बातें कर रहे थे। ऐसी ही मामूली बात। कोई पकड़ में आनेवाली बात नहीं।

इसके बाद थोड़ी देर में केहरसिंह चला गया। उसके जाते समय एक चूमने की-सी आवाज हुई। फिर सन्नाटा। नहीं थोड़ी

देर में पास ही कहीं से बिलसिया के सो जाने की आवाज मालूम हो रही थी। जमुना तो हरेक बच्चे के रग-रग को पहचानती थी। सोती है, हा हा हा हा। सुखिया भी कहीं सोती होगी। वाह! थोड़ी देर में गिरधारी आया, और बिलसिया को सोती हुई देखकर बोला—"इतनी जल्दी सो गयी पगली।"

हां, वह पगली थी। सारी दुनिया पगली है। गिरधारी पगला नहीं है? जरूर है, नहीं तो आंखें होते हुए भी क्यों नहीं देखता? पर नहीं, वह तो कैसे देखे? देखे तो भी मारा जाय, न देखे तो भी मारा जाय। क्या करे? गिरधारी अकेला क्या करे? वह भी तो ऐसे समय बीमार पड़ गयी। पर अच्छी होकर क्या करेगी? आंख से तो सब देखा न जायगा। इससे तो अच्छा है कि..........।

रामधारी भी आ गया फिर सब लोग खाने बैठे। आपस में बातें करते जाते थे। पर जमुना को इसमें दिलचस्पी नहीं थी। वह पड़ी-पड़ी सोच रही थी। उसके बाहर भी अन्धकार था और भीतर भी। क्या उसने जो कुछ सुना, पति से वह बतावे? पर क्या होगा? केहरसिंह को तो छोड़ा नहीं जा सकता। गिरधारी छोड़ नहीं सकता। इससे तो अच्छा है कि वह चुप रहे। जैसे कुछ जानती ही नहीं।

सत्रह

केहरसिंह अगले दिन सवेरे ही गिरधारी के घर पहुँचा। उसे तो एक बहाना चाहिए था। वश चलता तो रात को भी वहीं पर सोता। पर समाज के कुछ ऐसे अनुशासन तथा मजबूरियां हैं, जिन्हें केहरसिंह-ऐसे प्रभावशाली और धनी बाप के बेटे को भी मानना पड़ता था।

केहरसिंह ने गिरधारी से रात का हाल पूछा, बोला—"मैं बड़ी देर तक आपका इन्तजार करता रहा, पर नींद ज्यादा लगने लगी तो चला गया। अब सवेरे उठते ही चला आ रहा हूँ।" दांतवन दिखाकर बोला—"अभी दांतवन भी पूरा नहीं किया। यहीं कुछ नाश्ता कर लूँगा।"

गिरधारी गद्गद होकर बोला—"हाँ बेटा मेरे बड़े धन्य-भाग्य हैं। तुम्हारी ही तो जरूरत थी।"

"मैं भी इसीलिये आया कि पहले मालूम तो कर लूं मामला कहां तक आगे बढ़ा है, फिर जैसा होगा वैसा करूँगा।"

रामधारी ने लोटे में पानी भरकर केहरसिंह के पास रख

दिया। केहरसिंह एक खटोली पर बैठे-बैठे दांतवन करने लगा। केहरसिंह ने रामधारी को देखा, और बिना कहे वह जो पानी ले आया था, उसे भी देखा, और वह समझ गया कि वह रामधारी पर विजय प्राप्त कर चुका है। इस बात पर मन-ही-मन वह अपने को अभिनन्दित किये बगैर नहीं रह सका। रामधारी को कल देखकर उसे यह जो शंका हुई थी कि यह आदमी उसके मार्ग में रोड़ा बनेगा, अब वह दूर हो चुका था। ऐसे ही समय बिरादरीवालों ने बम-चख मचा दी, इसीसे उसका भला हो गया। केहरसिंह परिस्थितियों की ढाल से बहुत खुश था, पर उसने चेहरा मातमी बना रखा था।

गिरधारी ने जो कुछ बताया उसका सारांश यह था कि बिरादरीवाले इस बात पर आपत्ति कर रहे थे कि उसने रामधारी को आश्रय क्यों दिया। केहरसिंह ने इस पर पूछा—"इस पर आपने क्या कहा ?"

"मैंने इस पर यह कहा कि रामधारी में कोई ऐसी बात नहीं देखी, जिससे मैं उसे त्याग दूं। मैंने यह भी कहा कि जैसा आप कह रहे हैं, वैसा अगर होता तो मैं रामधारी को जान से मार डालता भले ही फाँसी हो जाती। पर बिरादरीवाले अपनी ही टेक पर अड़े हुए हैं। वे कहते हैं कि सुखिया कहां गयी। मैंने कहा कि हमें दस दिन का टेम दिया जाय, हम सुखिया को बुलवा लेते हैं......"

सुखिया को वापस बुलाने की बात सुनकर केहरसिंह बीच ही में बोल उठा—"नहीं, नहीं सुखिया को बुलाने की क्या जरूरत है। मैं सब देख लूंगा।" केहरसिंह इस समय सुखिया के वापस आ जाने की बात से डरता था। यदि सुखिया आ गयी तो फिर बिलसिया के साथ गुलछर्रा असम्भव हो जायेगा। रामधारी-ऐसे बैल आदमी को तो उसने ढंग पर लगा लिया,

पर सुखिया की आंखों में किसी प्रकार धूल झोंकना सम्भव न होगा। उसने कहा—"बिरादरीवाले साले ऐसे हरामी के पिल्ले हैं कि अपने आगे किसीको गिनते ही नहीं। यदि सुखिया ननिहाल गयी है" फिर सुधारकर बोला—क्योंकि वह जानता था कि सुखिया और कहीं भी गयी हो ननिहाल नहीं गयी है "यदि सुखिया कहीं गयी है, तो उनके बाप का क्या है?"

गिरधारी बोला—"हाँ, नहीं तो ऐसा अंधेर मचा है कि जान आफत में पड़ी है। कुछ करते-धरते बनता ही नहीं है। तुमसे सलाह लेनी थी। फिर रामधारी को अगर सुखिया को लाने के लिये भेजता हूँ तो यहां उसके लिये रुपये भी तो नहीं हैं। तुम्हींसे तो कर्ज भी लेना पड़ेगा।......"

केहरसिंह ने बीच में बोलते हुए कहा—"नहीं चाचा इस तरह दबने से काम नहीं चलेगा। ये बिरादरीवाले एक ही कांइया हैं, जो इनसे जितना दबता है, उसे ये उतना ही दबाते हैं। और जबर्दस्त के सामने सिर झुकाते हैं........।"

गिरधारी बोला—"पर बेटा मामला बहुत संगीन हो गया है। मुखिया ने हम से अलग में कहा कि वे किसी प्रकार पंचायत को रोक नहीं पाये। आज बिरादरी के गरामान्यों की बैठक तुम्हारे घर पर होगी।"

"हां तो क्या कर लेंगे। मैं भी तो वहां पर हूँगा। एक-एक साले को देख लूंगा।"

गिरधारी को अब केहरसिंह पर उतना विश्वास नहीं रह गया था। उसका साहस सराहनीय है, माना कि वह अभिमन्यु की तरह लड़ेगा, पर सप्तरथी के आगे उसकी कहां तक चलेगी। फिर भी वह केहरसिंह का बहुत कृतज्ञ था क्योंकि उसे तो एकमात्र यही दिखाई पड़ता था जो उसका साथ देगा। जोरावरसिंह के वक्त में बीसियों ने उनका नमक खाया था, ये बीसियों की

मुसीबत में साथी थे, सच तो यह है कि इसी के लिये वे बिगड़ गये, पर इस समय सारे गाँव में एक केहरसिंह के अलावा कोई उसका साथी नहीं था।

गिरधारी बोला—"सुनता हूँ कि मुन्नासिंह ने सबसे अधिक जोर बांधा है।"

केहरसिंह बोला—"कौन वही न? जो हमेशा काकुल में तेल लगाये रहता है। उसे आपसे क्या बैर है?"

गिरधारी हिचकिचाया फिर बोला—"पता नहीं काहे का बैर है। मैंने तो जान या अनजान में उसकी कभी कोई बुराई नहीं की है। रहा उसे सब लोग जो कहते हैं, मैं भी वही कहता हूँ।"

"हाँ, तो इसमें डर क्या है? साला कर क्या लेगा? मुझे मालूम नहीं था नहीं तो अभी तक ठीक करवा देता। ऐसे दुष्टों को तो महावीर स्वामी की कृपा से मिनटों में ठीक करता हूँ।"

गिरधारी ने कहा—"तो अब पंचायत में देखा जायगा। यहां तो एक बात है, जब रामधारी ने कोई कसूर नहीं किया तो मैं उसे क्यों त्यागूं?"

रामधारी अब तक खड़े-खड़े सब बातें सुन रहा था। उसे इन सब बातों पर बड़ा आश्चर्य हो रहा था। कितनी उमंगों को लेकर वह अपनी जन्मभूमि में आया था, और यहां उस पर एक अत्यन्त कुत्सित दोष लगाया जा रहा था। काशीजी में लोग यही दोष लगाते थे, सो और बात थी। वहां उसे कोई जानता नहीं था, पर यहां तो सब लोग उसको बचपन से देखते आ रहे हैं। किसीने कभी उसमें कोई कुचाल देखी हो तो बतावे। पर यहां तो अजीब हालत थी। उसे आश्रय देने के लिये गिरधारी पर समाज का दण्ड पड़ रहा था। और आश्रय भी क्या, वह भी तो इसी घर का है। नाहक लोग गिरधारी को परेशान करना

चाहते हैं, और कुछ नहीं। वह बीच में बोल उठा—"भैया, अगर सारा झगड़ा मुझे ही लेकर है, तो लो मैं पिथौरा छोड़कर चला जाता हूँ। मैं यह देख नहीं सकता कि मेरे कारण घर की बरबादी हो। मेरा क्या है? जहाँ सात-आठ घंटे काम करूँगा, वहीं रोटी खा लूंगा। न कोई जोरू है न जाता। भैया मुझे जाने दो। मैं फिर चला जाऊँ। मुझसे पाक होकर बिरादरी फले फूले। दूर भी रहूँगा तो बिरादरी को आशीर्वाद देता रहूँगा।"

ये बातें गिरधारी से कही गयी थीं, पर केहरसिंह ने बीच में बोलकर जवाब देते हुए कहा—"नहीं चाचा, तुम जाओगे, तब तो और भी साबित हो जायगा कि जैसा लोग तुम्हारे बारे में कहते हैं वह सच ही था।"

गिरधारी ने भी कहा—"हां तुम्हारा जाना कैसे हो सकता है? तुम किसी के दबैल थोड़े ही हो? फिर जैसा केहर कह रहे हैं उसको भी तो सोचो।"

रामधारी की आंखें आर्द्र हो आयी थीं। बोला—"नहीं, एक के गये से अगर कुल-भर की भलाई हो जाय तो इसमें हर्ज क्या है?"

अबकी बार गिरधारी कुछ बिगड़-सा गया, बोला—"बात नहीं समझते हो जी, बीच में बात करते हो। यहां एक के गये से दो के गये से बात थोड़े ही है। तुम बताओ कि तुमने अपनी भतीजी को भगाया?"

रामधारी ने बिजली की तरह शीघ्रता से कहा—"नहीं, नहीं, नहीं, नहीं।"

गिरधारी ने डपटते हुए कहा—"तो फिर तुम क्यों जाना चाहते हो? तुम जाओगे तो हमारी नाक और कट जायगी। फिर तो कुछ कहते ही नहीं बनेगा।"

केहरसिंह बोला—"हां यही बात है। हमें पहले यह देख

लेना चाहिये कि किसी कदम के उठाने से क्या फायदा और क्या नुकसान होगा। इसके बगैर जो भी काम उठाया जायगा, वह गलत होगा। रामधारी चाचा तो बिरादरी की बात मानकर चले जायेंगे और बिरादरी वाले यह समझेंगे कि पापी था इसलिये भाग गया।"

अतएव यह तय हुआ कि रामधारी जहां का तहां रहेगा, और अपना काम करेगा। गिरधारी ने रामधारी को खेत पर भेज दिया और वह खुद केहरसिंह के साथ बैठकर घन्टों यह सलाह करने लगा कि आज जब बिरादरी की बैठ होगी, तो कैसे क्या होगा। गिरधारी को अपने ऊपर बिल्कुल विश्वास नहीं था। इस लिये वह केहरसिंह के सम्पूर्ण अधीन हो गया। जैसा केहरसिंह बताने लगा, वैसा ही वह सोचने लगा।

संध्या समय बिरादरी वालों की बैठक हुई। इसमें गिरधारी पर यह दोष लगाया गया कि उसने अपने भाई को यह जानकर भी आश्रय दिया कि उसने बड़ा भारी पाप किया है। गिरधारी ने इस बात से बिल्कुल इनकार किया। उसने तमाम देवी देवताओं की कसम खाकर यह कहा कि यह बात बिल्कुल झूठी है। केहरसिंह इसके पहले कभी बिरादरी के जलसे में नहीं आया था। पर आज वह आया था, और बड़े ठाट बनाकर आया था। ज्योंही गिरधारी पर अभियोग लगाया गया और गिरधारी ने इससे इनकार किया, तो केहरसिंह ने आगे बढ़कर पूछा—"उजागरसिंह ने यह जो जुर्म गिरधारी पर लगाया है, इसका कोई सबूत भी है। ऐसे तो कोई भी किसी को कुछ भी कह सकता है।"

उजागरसिंह ने कहा—"मैंने अपनी क्षुद्र बुद्धि के अनुसार जो कुछ जाना उसे कहा। गिरधारीसिंह ने उससे इनकार किया, अब पंचों का काम यह है कि वे दूध का दूध और पानी का

पानी कर दें" उजागरसिंह का मतलब यह था कि वोट से सत्य का निर्णय हो।

उजागरसिंह गांव के वृद्धों में था। कभी जोरावरसिंह से उसकी चल चुकी थी और उसे नीचा देखना पड़ा था। बोला—"पंचो, तुमसे कोई बात छिपी हुई नहीं है, हम तो तुम्हारे ऊपर फैसला छोड़ते हैं।"

केहरसिंह इस बात को पहले ही ताड़ चुका था कि सभी पंच गिरधारी के या तो विपक्ष में हैं,या तो वे तटस्थ हैं। आखिर वह अपने बाप का बेटा था। उसने यह समझ लिया कि यदि पंचों की राय से सत्य का निर्णय हुआ तब तो रामधा दोषी ठहरेगा और गिरधारी को दण्ड मिलेगा। इसलिए उसने फिर से अपनी बात कही—"क्या सच है और क्या झूठ है इसे पंच लोग दिये हुए सबूत ही से जान सकते हैं। पंच लोग ईमानदार होते हैं, पर वे सर्वज्ञ तो नहीं होते, इसलिए सबूत की जरूरत है। उजागरसिंह सबूत दें, तब इस पर पंच विचार करेंगे कि सबूत सही है या गलत। दोष लगाने के साथ कुछ सबूत भी दिया जाय।"

केहरसिंह की इन बातों पर कुहराम मच गया। उजागरसिंह अपने को सेहरसिंह से कोई विशेष कम नहीं समझता था फिर उसको सब से बड़ी सुविधा यह थी कि वह उम्र में सबसे अधिक था। उसने यों तो किसी पर सीधे-सीधे क्रोध नहीं किया, पर बोला—ऐसी अजीब बात तो कभी नहीं सुनी गयी। हमारे जमाने में तो पंच ही सब बातों का फैसला करते थे। पंचों से बढ़कर सबूत कौन है? पंच खुद जानते हैं कि इस मामले में क्या सच्चाई है और क्या झूठ है।"

सेहरसिंह सरपंच तो था, पर बैठे-बैठे तमाशा देख रहा था। सेहरसिंह की उन्नति में सबसे बड़ी बात यह थी कि वह

जब देखता था कि कोई हिस्सा हार रहा है, तो वह उसे फौरन त्याग देता था। किसी प्रकार के कट्टरपन से वह परिचालित नहीं होता था। यदि गिरधारी के विरुद्ध फैसला होता, तो उसे कोई दुख न होता, और यदि उसके पक्ष में फैसला होता तो भी उसे कोई विशेष आनन्द न होता। उजागर या गिरधारी उसके निकट दो मुहरे मात्र थे जिनसे वह अपना काम बना सकता था या बिगाड़ सकता था। वह पहले ही से तय करके आया था कि हमेशा की तरह इस मामले में निष्पक्ष रहेगा, अर्थात् जो दल जीतता हुआ दिखायी पड़ेगा, उसका साथ देगा, पर जब उसने देखा कि केहरसिंह गिरधारी का पक्ष ले रहा है, पक्ष ही नहीं ले रहा है, उसके लिये लड़ रहा है, तो अपनी राय बदलनी पड़ी। अब उसके सामने अपनी मर्यादा का प्रश्न था। वह जानता था कि यदि केहरसिंह की भद्द हुई तो उसकी भी भद्द होगी। इसलिये उसने बीच में पड़ते हुए कहा—"यहां जो सवाल है वह बहुत बड़ा सवाल है। यदि समाज का दण्ड न हो, तो सभी दुष्कर्म करने लगें। समाज का दण्ड है। तभी धर्म है। यदि धर्म नहीं है, तो हम भी नहीं हैं। धर्म ही हमको धारण कर रहा है। यदि हमने इसको छोड़ दिया तो हमारे पास कुछ भी नहीं रहा। जिस समाज से धर्म उठ गया वह समाज खतम हो गया।"—कहकर उसने गम्भीर चेहरा बनाते हुए कहा—"और यह जो चाचा होकर भतीजी को लेकर भागना, इससे तो बड़ा पाप कुछ है ही नहीं क्योंकि चाचा पिता के स्थान पर होता है। जैसे अपनी बेटी के साथ बुरा काम किया, वैसे ही अपनी भतीजी के साथ किया।........."

सेहरसिंह इसी तरह धार्मिक दृष्टि से इस पाप का बखान करने लगा। ज्यों-ज्यों गिरधारी तथा केहरसिंह उसकी बात सुनते जाते थे, त्यों-त्यों उनका चेहरा सूखता जाता था। गिर-

धारी यह सोच रहा था कि साढ़े चार सौ में से कुछ नहीं तो डेढ़ सौ इसने जरूर खाये हैं, पर फिर भी यह दुष्ट इस समय उसे डुबाने पर लगा हुआ है। उसे अपनी परिस्थिति की भयानकता की याद कर रोमांच हो रहा था। केहरसिंह यह सोच रहा था कि बाबूजी को शायद यह मालूम है कि उसके साथ बिलसिया का ताल्लुक है, बाबूजी शायद उसे इस बात से बचाने के लिये ऐसा कह रहे हैं। इस बात को सोचकर उसे कुछ खुशी नहीं हुई, बल्कि क्रोध ही हुआ। उसके मन में सेहरसिंह के सम्बन्ध में कुछ ऐसी बातें आईं जो पितृभक्ति के विरुद्ध पड़ती थीं।

उधर सेहरसिंह का व्याख्यान सुनकर बिरादरीवालों की बाछें खिल रही थीं। सब लोग यह अनुभव कर रहे थे कि सेहरसिंह की सरपंची में धर्म सुरक्षित है। उजागरसिंह अपने जोश को सँभाल न पाकर मूछें टेने लगे थे।

सेहरसिंह बिल्कुल स्थिर होकर कहता जा रहा था—"ऐसा पाप जिस घर में होता है, उसे फूँक डालना चाहिये। वह घर एक कोढ़ीखाना की तरह है जिससे समाज रोगग्रस्त होता है। गिरधारीसिंह ने अगर जान-बूझकर ऐसे जुर्म को होने दिया, तो मैं तो यही कहूँगा कि गिरधारी का सिर मुड़ाकर गदहे पर बैठाकर गाँव से बाहर निकाल देना चाहिये। इसमें कोई शक नहीं कि गिरधारी ने भ्रातृ-प्रेम दिखलाया है, पर साथ ही संतान के प्रति जो कर्तव्य है उसका पालन नहीं किया। इसलिये वह दोषी है।"

सेहरसिंह ठहर गया और ध्यान से सबके चेहरों की तरफ देखने लगा। सब लोग खुलकर सेहरसिंह की तारीफ कर रहे थे। गिरधारी का मुंह इतना-सा हो गया था। उसने केहर की तरफ देखा। वह चुप। गिरधारी समझ रहा था कि बाप के

आगे केहरसिंह कुछ न कह पायगा। केहरसिंह ने सिर नीचा कर लिया था। और चुप था। वह भी अपने बाप की तरह बहुत व्यवहारिक जीव था। जब उसने समझ लिया कि अब इस मामले में कोई बचत नहीं है, तो वह चुप रहने ही में भलाई समझने लगा। दुखी तो वह था, पर वह मजबूर था।

उजागरसिंह मूछों पर से हाथ उतार कर बोले—"तो सर-पंच ही बतावें कि गिरधारीसिंह को क्या दण्ड दिया जाय ?"

सेहरसिंह बोले—"ठीक है। अच्छा गिरधारीसिंह यह बताओ कि तुमने रामधारी को आश्रय दिया ?"

गिरधारी कुछ उत्तर नहीं दे सका। वह इतना घबड़ाया हुआ था कि उससे कुछ कहते नहीं बना। वह अजीब तरीके से अकड़ कर रह गया।

सेहरसिंह ने गिरधारी से फिर पूछा—"गिरधारीसिंह तुम शायद मेरी बात नहीं समझे ? क्या रामधारी आकर तुम्हारे घर पर टिका है ?

"हाँ" गिरधारी ने ऐसे कहा जैसे वह कोई दोष स्वीकार कर रहा हो। उसने आंखें नीची कर लीं।

सेहरसिंह का चेहरा खिल उठा, मानो जिस बात को वह साबत करना चाहता था, उस बात को साबित कर चुका। ताली पीटकर बोला—"तो यह तो साबित हो गया कि गिर-धारी ने रामधारी को अपने घर पर टिकाया, और शायद उसके साथ खाना भी खाया।"

केहरसिंह से अब रुका नहीं गया। एकाएक अजीब तरीके से बोल उठा—"मैंने भी रामधारीसिंह के साथ खाया।"

सेहरसिंह के माथे पर बल आ गये, पर केवल एक मुहूर्त्त के लिये, अपने पुत्र से बोला—"न्याय सबके लिये बराबर है। यदि तुमने खाया तो तुम भी दोषी हो, तुमको भी सजा मिलेगी।"

सेहरसिंह की चौपाल में एक अत्यन्त नाटकीय परिस्थिति की उत्पत्ति हुई। जो लोग इस नाटक के असली सूत्रधार थे, वे भी एक क्षण के लिये यह समझने लगे कि वे दर्शकमात्र हैं, और असली अभिनेता, बल्कि एकमात्र अभिनेता सेहरसिंह है। सेहरसिंह ने ऐसा चेहरा बनाया जैसे उसकी आंखों से चिनगारी निकलने ही जा रही थीं। बोला—"तुमको भी सजा मिलेगी। पर यह बताओ कि तुमने उसके साथ क्या खाया ?"

केहरसिंह यों तो बड़ा रोबीला था, पर परिस्थिति के कारण पसीना-पसीना हो रहा था, फिर भी स्वाभाविक अकड़ से बोला—"उसके साथ भंग पिया।"

एकाएक सेहरसिंह का वह तमतमाता हुआ चेहरा कोमल पड़ गया। वह मुसकराने लगा, बोला—"और तो कुछ नहीं।"

"नहीं, एक लोटा भांग पिया।"

सेहरसिंह ने पंचों की तरफ देखकर हँसते हुए कहा—"तो इसमें कोई दोष नहीं है। हमारे ऋषियों ने चिलम और ऐसी ही कई चीजों में छूत नहीं रखा। नशे की चीज में छूत नहीं लगती।"

सभास्थल में कहकहा मच गया। लोग मन-ही-मन सेहरसिंह को और उसके न्याय को सराहने लगे। गिरधारी ने समझ लिया कि अब तो कयामत आ ही रही है। वह अकड़कर बैठ गया। जब तकआदमी को कुछ आशा रहती है तब तक डर रहता है, पर जब बिलकुल निराशा हो जाती है तो निर्भयता आ जाती है। निराशा के साहस से बली होकर गिरधारी सबके चेहरों की तरफ देख रहा था। अब उसे किसी का डर नहीं था। जब ओखली ही में सर हो गया तो धमाके से क्या डरना था।

लोगों के चेहरों पर की हँसी अभी ज्यों की त्यों बनी थी कि सेहरसिंह ने कहा—"यह तो साबित हो गया कि गिरधारी

दोषी है, अब मामला यहीं पर खतम नहीं होता। गिरधारी का मामला रामधारी से मिला हुआ है। अगर रामधारी निर्दोष ठहर जाय तो गिरधारी भी निर्दोष ठहरे। गिरधारी का तो जुर्म साबित हो चुका है क्योंकि गिरधारी स्वयं इकबाल कर रहा है कि उसने रामधारी को ठहराया, अब इस बात को साबित करना है कि रामधारी ने जुर्म किया।"

लोग एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे कि मुखिया क्या कह रहे हैं। मुखिया ने अपने वक्तव्य को स्पष्ट करते हुए कहा—"क्या कोई बता सकता है कि रामधारी इकबाल कर रहा है?"

मुन्नासिंह ने उजागरसिंह के कान में कुछ धीरे-धीरे कहा। उजागरसिंह ने बीच में बोलते हुए कहा—"ऐसे जुर्मों में कोई इकबाल थोड़े ही करता है, यह तो पंचों का काम है कि वे तय करें कि रामधारी ने यह जुर्म किया या नहीं।"

सेहरसिंह ने हँसते हुए कहा—"खैर पंच तो सभी कुछ कर सकते हैं। पंच चाहें तो बेकसूर को भी सजा दे सकते हैं, पर लोग जुर्म इकबाल भी करते हैं। आखिर गिरधारीसिंह ने इकबाल किया ही।"

उजागरसिंह फिर भी बीच में कुछ बोलने के लिये तैयार हो गया, पर सरनामसिंह नाम का एक दूसरा बूढ़ा जो अब तक चुप बैठा था, बोला—"अरे तुम्हीं हर वक्त बोलोगे, कुछ मुखिया को भी कहने दो।"

लोग उजागरसिंह की बातों को नापसन्द कर रहे थे। जब मुखिया खुद ही न्याय की बात कह रहे थे, तो इन्हें बेर-बेर बीच में पटर-पटर करके बोलने की क्या जरूरत है। सेहरसिंह ने इस बदले हुए वातावरण को ताड़ लिया, और अपनी चढ़ाई को कायम रखते हुए कहा—"खैर यह तो मालूम हो गया कि रामधारी इकबाल नहीं कर रहा है। अब मैं पंचों के नाम से

गिरधारीसिंह को पूछता हूँ कि वह सच-सच बतावे कि रामधारी ने यह जुर्म किया या नहीं।"

गिरधारी ने निर्भीक होकर कहा—"ऊपर परमेश्वर गवाह है मैंने रामधारी में यह तो खैर क्या, कभी किसी तरह की कोई कुचाल नहीं देखी।"

सेहरसिंह ने अब सबको सम्बोधित करते हुए कहा—"कोई भी इस बात को कह सकता है कि रामधारी के साथ उसकी भतीजी का ताल्लुक था?"—कहकर सेहरसिंह ने बहुत रुखाई के साथ पहले उजागरसिंह और फिर सबके मुंह की ओर देखा।

जब किसीने उसके उत्तर में हाँ नहीं कहा, तब सेहरसिंह बोला—"तो इससे तो न्याय की बात यही मालूम होती है कि पंच इस बात की जिम्मेदारी ओढ़ने को तैयार नहीं है कि रामधारी ने कोई अपराध किया।"

सब लोग इस पर भी चुप रहे। गिरधारी फिर साँस लेने लगा था। केहरसिंह अपने पिता की ओर प्रशंसापूर्ण दृष्टि से देख रहा था। क्या कमाल कर दिया कि सब चुप रह गये, किसीके मुंह से कुछ बात नहीं निकली।

संक्षेप में यह नतीजा रहा कि गिरधारी या रामधारी किसी पर कोई जुर्म नहीं रहा। सब लोग अपने-अपने घर चले गये। केवल केहरसिंह रह गया। भीतर घर में जाकर केहरसिंह ने सचमुच भक्तिभाव से कहा—"बाबूजी आपने सचमुच दूध का दूध और पानी का पानी कर दिया।"

सेहरसिंह हँसा, और बोला—"बेटा दूध का दूध और पानी का पानी कर देना बहुत मुश्किल है, पर इससे भी मुश्किल यह है कि दूध का पानी और पानी का दूध कर दिया जाय। बुद्धिमान लोग ऐसा ही करते हैं।"

"तो क्या आप समझते हैं रामधारी ने सचमुच वह बुरा काम किया ?"

सेहरसिंह बोला—"नहीं, बेटा मैं यह नहीं समझता, पर मैं यह समझता हूँ कि रामधारी धोखा देकर अपनी भतीजी को कहीं छोड़ आया है। तुम्हारे कारण मैंने भतीजी वाले प्रश्न को उठने ही नहीं दिया। यदि तुम गिरधारी के विरुद्ध होते तो मुझे यही प्रश्न उठाना पड़ता। बेटा यही राजनीति है।"

केहरसिंह ने शायद पूरी बात को ध्यान से नहीं सुना। सेहरसिंह ने उसका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा—"बुद्धिमान व्यक्ति सब बातों को अपने मतलब में लगा लेते हैं। यदि तुम उस तरह अकड़ते नहीं, और रामधारी को बचाने के लिये यह नहीं कहते कि तुमने उसके साथ खाना खाया है तो मैं इतनी आसानी से बिरादरी को अपने साथ न ले जा पाता।"

केहरसिंह समझ गया, पर उसे गिरधारी के यहाँ जाने में देर हो रही थी, इस कारण वह जल्दी से चला गया।

अठारह

पंचायत में विजय के कारण गिरधारीसिंह के मकान पर दो-तीन दिन तक बड़ी चहल-पहल रही। अवश्य इस चहल-पहल में भाग लेने वालों में केहरसिंह का हिस्सा मुख्य था। गिरधारी इस बात को अच्छी तरह समझ गया था कि केहर-सिंह के कारण ही सेहरसिंह ने उतना बड़ा ढकोसला खड़ा किया था, इसलिये उसकी आँखों में केहरसिंह का मूल्य बहुत बढ़ गया था। रामधारी का सहजात अविश्वास भी इस प्रदर्शन के सामने खतम हो गया था। वह भी अब केहरसिंह से भैया-भैया करके बात करने लगा था। यदि केहरसिंह से इस समय भी कोई खुश नहीं था, तो वह थी जमुना, पर वह किसी गिनती में नहीं थी। गिरधारी भी यह समझने लगा था कि शरीर खराब होने के साथ-साथ उसका दिमाग भी कुछ खराब हो गया है।

बिरादरीवालों की इस प्रकार हार हो जाने पर भी वे चुप नहीं बैठे थे। भीतर-भीतर कानाफूसी तो चलती ही रहती थी।

अब यह कहा-सुनी होने लगी कि सुखिया हरगिज ननिहाल नहीं गयी है, कोई आदमी जाकर इस बात की तसदीक कर आवे। कौन बड़ा भारी दूर है, सवेरे जावे तो शाम तक वापस आ सकता है।

केहरसिंह ने इस बात को सुना, और उसने इस विषय पर गम्भीरता के साथ सोचा। उसे यह मालूम नहीं था कि सुखिया कहाँ पर है और किस हालत में है, पर उसे इतना निश्चय हो गया था कि सुखिया जीवित है, और रामधारी और गिरधारी जरूरत पड़ने पर उसे बुला सकते हैं। कभी सुखिया उसकी आँखों का तारा थी, कभी वह उस पर जान देता था, पर अब वह इस बात से डरता था कि कहीं वह वापस न आ जाय। उसने जिस सुखद नीड़ की रचना कर रखी थी, वह सुखिया के आने से टूट जाता था। किसी भी दामों पर सुखिया को वापसी को रोकना था। साथ ही चीजों को इस प्रकार चलाना था कि गिरधारीसिंह को समाज से निकाल न दिया जाय। क्योंकि यदि गिरधारी को समाज निकाला दे दिया गया तो फिर उसके लिये भी उसके घर आना-जाना असम्भव हो जायेगा।

इन बातों को दृष्टि में रखकर एक दिन गिरधारी और रामधारी से यह प्रस्ताव रखा कि वह गिरधारी के घर में बिरादरी-वालों को दावत देगा।

इस पर गिरधारी ने सन्देह दिखाते हुए कहा—"क्या वे आयेंगे?"

केहरसिंह ने कहा—"आयेंगे क्यों नहीं? मैं खुद जो दावत देने जाऊँगा। किसकी मजाल है जो न आवे। चाचा आप इसकी चिंता न करें।"

गिरधारी को इस नौजवान की बातें बहुत पसन्द इसलिये

थीं कि उसका उद्देश्य हमेशा गिरधारी को मदद करने का होता था। पर आखिर कम उम्र के कारण कुछ बचपन भी बातों से टपकता था। गिरधारी ने कहा—"भैया चाहे जो जाय मैं तो समझता हूँ कि मुन्नासिंह उजागरसिंह ऐसे लोग नहीं आयेंगे।"

केहरसिंह ने कहा—"तो यहाँ उजागर ऐसे बूढ़ों को बुलाने ही कौन जाता है? मैं तो लोगों को भांग की दावत दूंगा, और उजागरसिंह के बजाय उसके लड़के ताजसिंह को बुलाऊँगा। उजागरसिंह तो खैर आज नहीं कल आँख मूदेंगे, ताजसिंह बेटा कैसे नहीं आते यह मैं देख लूंगा। आखिर उसे इसी गाँव में रहना है। और ताजसिंह आया तो उजागरसिंह का मुंह बन्द हो जायगा।"

गिरधारी को फिर भी बहुत से सन्देह थे, बोला—"और मुन्नासिंह? मुन्नासिंह तो नहीं आयेगा, न मालूम क्या बात है यह आदमी हमेशा मेरे खिलाफ जाता है। मेरा तो यह ख्याल है कि अगर इसने न भड़काया होता तो पंचायत की नौबत ही नही आती।"

केहरसिंह ने कहा—"बुलाऊँगा तो उसे भी, पर आवे या न आवे। एक के न आने से क्या आता-जाता है। मैं बाद को बेटा को देख लूंगा।"

गिरधारी बोला—"खैर दावत जब करना ही है, तो भांग की दावत क्यों की जाय। तुम तो उस दिन मुखिया की बात सुन ही चुके कि भांग में कोई छूत नहीं है।"

केहरसिंह ने हँसकर कहा—"तभी तो भांग की दावत कर रहा हूँ। भांग के नाम से लोगों को बुलाऊँगा, और चाट की तरह पर पकौड़ी और तरह-तरह की चीजें खिलाऊँगा। भांग भी दो तरह की बनेगी, एक नमकीन और एक मीठी। पहले नमकीन परोसूँगा। सालों को इसी बहाने नमक खिला दूँगा" कह-

कर वह हंसा जैसे बड़ी भारी चालाकी करने जा रहा हो।

गिरधारी फिर भी हिचक रहा था। केहरसिंह समझ गया कि गिरधारी खर्चे से हिचक रहा है। सचमुच उसके पास फूटी कौड़ी भी नहीं थी। किसी तरह गुजारा हो रहा था। केहरसिंह ने कहा—"सारा खर्चा मैं करूंगा, बस आप सिर्फ दूध का प्रबन्ध करें।"

गिरधारी बहुत खुश हुआ, पर शिष्टाचार के नाते बोला—"भैया तुम हमारे लिये कहाँ तक तबाह होगे। तुम तो न मालूम कितना फूंक चुके। रहने दो मैं ही कर्जा लूंगा।"

केहरसिंह ने अंत तक गिरधारी को राजी कर लिया और बड़े जोर से भंग की दावत की तैयारी होने लगी। किसी भी बूढ़े को दावत नहीं दी गयी थी, पर चुन-चुन कर सभी अच्छे किसानों अर्थात छोटे जमींदारों के घर के नौजवानों को दावत दी गयी। मुन्नसिंह को भी दी गयी।

गाँव में अच्छी चहल-पहल थी। सेहरसिंह के कानों में भी खबर पहुँची, तो उसने अपने बेटे को अकेले बुलाकर पूछा कि क्या किस्सा है। तब केहरसिंह ने यह बतलाया कि इस दावत का उद्देश्य यह है कि गिरधारी के विरुद्ध बिरादरीवालों का मुंह हमेशा के लिये बन्द हो जाय। सेहरसिंह ने कहा—"तुम्हें यह विश्वास है कि सब लोग आयेंगे?"

"केहरसिंह ने कहा—हाँ जो लोग बुलाये गये हैं, वे करीब-करीब सभी आयेंगे ऐसा मेरा विश्वास है।"

"तुम्हें मालूम है कि मुन्नासिंह लोगों को भड़का रहा है कि इस दावत में मत जाओ। वह तुम्हारे बाबत यह कह रहा है कि तुम गिरधारी की दूसरी लड़की से शादी करना चाहते हो, इसलिये यह सब ढकोसला है।"—सेहरसिंह ने लड़के से यह नहीं बताया कि उसे इस सम्बन्ध में पूरा तथ्य मालूम है।

कुछ झिझकते हुए सेहरसिंह ने पूछा—"यह कहाँ तक सच है? सेहरसिंह को सचमुच यह डर था कि कहीं केहरसिंह बेवकूफी में आकर बिलसिया से शादी की न सोचे, उसके लिये तो वह बहुत अच्छी शादी तय कर रहा था। बिलसिया से शादी न करे, और चाहे जो कुछ करे।

केहरसिंह ने कहा—"कौन सी बात? यह शादी वाली बात।"

"बिलकुल झूठी है।"

सेहरसिंह आश्वस्त होता हुआ बोला—"जवानी में सभी कुछ न कुछ ऊँचे-नीचे पर पैर रख देते हैं, पर शादी और बात है।" बुद्धिमान पिता का बुद्धिमान पुत्र को इशारा था।

केहरसिंह ने सिर नीचा करते हुए कहा—"बाबूजी ऐसी कोई बात नहीं है।"

सेहरसिंह ने मानो अपने पुत्र पर आँखों से आशीर्वाद बरसाते हुए कहा—"बस यही चाहिये। और मैं कुछ नहीं कहता। बुद्धिमान आदमी भौंरे की तरह होते हैं, सब शहद पीकर अलग हो जाते हैं।"

केहरसिंह को यह दर्शनशास्त्र समझाने की आवश्यकता नहीं थी। उसने तो पैदाइशी इस दर्शनशास्त्र को प्राप्त कर लिया था। बोला—"आपसे बिना पूछे कोई भी काम नहीं होगा।"

सेहरसिंह गदगद हो गया और बोला—"जब गिरधारी इतना खर्चा कर रहा है तो उससे कहो कि दावत के दिन एक रंडी बुलाकर नाच भी करवा दे, फिर देखो कैसे लोग नहीं आते।"

केहरसिंह समझ गया कि उद्देश्य सिद्धि के लिये यह विचार बहुत अच्छा है।

सेहरसिंह ने और कहा—"लड्डन को बुलवा लेना, ऐसा नाचती है कि कमाल है।"

केहरसिंह ने हँसते हुए कहा—"बाबू जी आप तो तीस साल पहले की बात कर रहे हैं, अब तो लड्डन बिल्कुल बूढ़ी हो गयी होगी।"

केहरसिंह चला गया, जाते समय कह गया कि अच्छी से अच्छी रंडी बुलायी जायगी।

तदनुसार तैयारियों में एक बात यह भी जुड़ गयी। मुन्नासिंह का प्रचार कुछ-कुछ सफल हो चला था, पर लोगों ने यह जो सुना कि मिम्मो जान आ रही है और भंग के बाद उसका नाच होगा, तो लोगों ने मुन्नासिंह की बातों को बिल्कुल नहीं सुना। सेहरसिंह को यदि यह मालूम होता कि इस नाच का खर्च प्रकारान्तर से उसी की जेब से जायेगा, तो हरगिज यह सलाह न देता, पर उसे क्या मालूम था।

यथा समय भांग की दावत हुई। भांग के साथ किसी प्रकार चाट खाने का रिवाज नहीं है, पर जब लोग एक-एक लोटा चढ़ा चुके, और उनके सामने पकौड़ी-कचौड़ी ये सब आ गयी तो उन्होंने उनसे इनकार नहीं किया। मुन्नासिंह नहीं आया था। और सब आये थे। गिरधारी बहुत खुश था। यद्यपि जमुना उठ नहीं सकती थी, पर वह सब कुछ सुन रही थी, और उसके मन में अजीब भावनायें उठ रही थीं। इन दिनों उसका जैसे तृतीय नेत्र खुल गया था। इसी को बिरादरी और समाज कहते हैं, कितना इसमें ढोंग है, ढोल के अन्दर पोल। वह लेटी-लेटी सब बातों को सुनती रही और उसका मन घृणा से पूर्ण होता रहा। हाय, सुखिया बेचारी ने ऐसा क्या अपराध किया था कि वह घर गाँव से दूर न मालूम कहाँ पड़ी हुई है। पता नहीं अब तक जिंदा है या मर गयी है। पिथौरा

आने के लिये उसने बच्चे को छोड़ दिया पर वह पिथौरा नहीं आ सकी। पिथौरा में उसके लिये स्थान नहीं है। हा हा हा हा, भंगेड़ियों की बातें सुनती थी और हँस देती थी। एक कड़वी झुलसी हुई झुलसा देने वाली हँसी।

भांग के बाद मिस्सोजान का नाच शुरू हुआ। नाच में बिरादरी के बाहर के पचासों आदमी जमा थे। नाच सबके लिये खुला था। मुखिया भी दो मिनट के लिये आकर एक कहरवा सुनकर चले गये। गांव के दूसरे लोगों ने जो अब तक झेंप रहे थे कि आवें या न आवें जब यह सुना कि मुखिया आये थे, तो वे भी आये, और कुछ तो जम गये।

गिरधारी को यह देखकर बड़ा ताज्जुब हुआ कि दूर में मुन्नासिंह भी नाच देख रहा है। भंग की दावत में न आने के कारण उसे उस पर बहुत क्रोध आया था। अब जो उसे नाच में बैठा हुआ देखा तो उसका क्रोध और भी बढ़ गया। उसके अन्दर एक ऐसी इच्छा हुई कि लपककर उस तरफ जाय और मारते-मारते उसे महफिल से निकाल दे। भंग भवानी की कृपा से उसे किसी प्रकार की भविष्य चिंता नहीं थी। उसने रामधारी को चुपके से यह बात दिखलायी। रामधारी ने एक लोटा नमकीन और कई लोटे मीठी भांग चढ़ायी थी, वह बिल्कुल इस लोक में नहीं था। यद्यपि वह नाच में बैठा हुआ था, पर उसका मन इससे बहुत ऊंची सतह पर पहुंच गया था, जहां न विवेक का दंशन था, न बिरादरी का भय था, न झूठी बदनामी थी, और न गिरधारी था, न केहरसिंह, यहां तक कि मिस्सोजान भी नहीं थी।

उसने जो एकाएक यह सुना कि मुन्नासिंह आया हुआ है तो वह समझा कि भैया यह कह रहे हैं कि भाग जाओ, पर वह तो आदमियों से घिरा हुआ था इसलिये जहां का तहां

जमा हुआ बैठा रहा। गिरधारी समझ गया कि रामधारी से बात करना बेकार है, तब वह केहरसिंह के पास गया। केहरसिंह ने मुन्नासिंह को नहीं देखा था। उसने कहा—"अच्छा! बड़ा शौकीन है।"

गिरधारी ने चुपके से कहा—"कहो तो साले को सब के सामने पनहा लगाते-लगाते निकाल दूं। पचास लगाऊं और एक गिनूं।"

केहरसिंह ने कुछ सोचते हुए कहा—"ऊंहूं—फिर कहा—"ऐसा ठीक न होगा।"

फिर वह बोला—"आप बैठिये, मैं ठीक करता हूं।" कहकर वह गिरधारी को बैठाकर सीधा उधर चला गया जिधर मुन्नासिंह बैठा था।

उस समय सिम्मो बाई बहुत तेजी से गा रही थीं—

वगैर यार के सब गुल हैं खार आंखों में,
खटक रही है चमन की बहार आंखों में।...

सारी महफिल का खून सिम्मोबाई के पायल के साथ उठता बैठता, गिरता, फिर उठता था। सब लोग एक प्राण, एक मन एक विचार हो रहे थे। सब यही समझ रहे थे कि सिम्मोबाई के यार से मतलब उसीसे है। तबलची और सारंगिया कमाल कर रहे थे। सिम्मोबाई की आवाज के साथ ये यंत्र ऐसे चल रहे थे जैसे वे उसी के कंठ के अंग मात्र हों। एक अजीब समाँ बँध गया था।

ऐसे समय में केहरसिंह ने मुन्नासिंह को जाकर पीछे से एक मृदु धक्का दिया, और कहा—"अरे आप यहां बैठे हैं" और उसे साथ में ले आकर महफिल के सामने की कतार में बैठा दिया। इतने आदमियों के सामने इस प्रकार इज्जत किये जाने पर मुन्नासिंह बहुत खुश हुआ, और अकड़कर सिर ऊँचा करके

बैठा। बहुत दूर से भी लोग देखते तो उसके तेल से बसे हुए बालों को देख लेते। पर लोगों का ध्यान तो इस समय मिस्सोजान पर था। वह कह रही थी—

मेरी लहद पै सरे शाम आप क्यों आये ?
तमाम रात फिरेगी मजार आंखों में।

केहरसिंह मुन्नासिंह को बैठाकर चला गया, और एक बढ़िया गिलास में नमकीन भंग रखकर मुन्नासिंह के पास पहुंचा और उसे मुन्नासिंह को दिया। मुन्नासिंह को यह हिम्मत नहीं हुई कि सबके सामने केहरसिंह के दिये हुए गिलास को लौटा दे। इसलिये वह उसे पी गया। नमकीन भांग पीने से उसका मुंह बिगड़ गया। उसने मुंह बनाया तो न मालूम कहां से केहर सिंह ने एक छोटी सी तश्तरी में उसके सामने पकौड़ियां रख दीं, और खुद भी वहीं बैठ गया। उसका मतलब यह था कि यदि किसी कारण से मुन्नासिंह इससे इनकार करे, तो वह खुद पकौड़िया खाने लगेगा। पर मुन्नासिंह ने इन्कार नहीं किया।

इस प्रकार सब तरह से दावत और महफिल सफल रही। सचमुच इनका यह असर हुआ कि अब इनके बाद से कोई गिरधारी या रामधारी को कुछ नहीं कहता था।

उन्नीस

रामधारी पहले की तरह दिन भर काम करता, और शाम को आकर या तो घर ही में सो जाता, या जरूरत पड़ती तो खेत में चला जाता। वह अपनी बदनामी से इतना डर गया था कि अब वह बिलसिया से भी बातें नहीं करता था। केहरसिंह उसे ऊपर से चाचा चाचा कहता था पर वह मन ही मन समझ चुका था कि इस एक मजूर से अधिक महत्व देना बेकार है।

कुर्मी लोग इधर नाम के किसान थे, असल में वे छोटे-छोटे जमींदार थे। हरेक के पास दो-चार मजूर रहते थे। गिरधारी के पास नहीं था इसका कारण रामधारी का होना था, जो तीन मजूरों के बराबर काम करता था। इसके अतिरिक्त गिरधारी स्वभाव से कुछ कृपण भी था। यों तो पीठ पीछे लोग सुखिया के गायब होने पर कुछ न कुछ कहा ही करते थे, पर लोगों को अब यह विश्वास हो गया था कि रामधारी में कोई कुचाल नहीं है। बिरादरीवाले रामधारी की सरलता पर हँसते हैं कि यह अच्छा मुफ्त का मजूर मिला है।

वे नाक चढ़ाकर ताना देते हुए कहते हैं—"देखा इस गिरधरिया को, अभी तक अपने भाई की शादी नहीं की। इस मारे नहीं करता कि कहीं इसे अकल नहीं आ जाय। जब देखो तब यही दिखाता है कि छोटे भाई का ब्याह इसलिये नहीं कर पाता कि रुपये नहीं हैं, पर मौका पड़ता है तो रुपये निकाल ही आते हैं। रंडी नचाई, महफिल जमाई, इतने में तो दो बार रमधरिया की शादी होती।"

एक बार रामधारी के इन हितैषियों ने साहसपूर्वक रामधारी से यह बात कह दी। वास्तव में जब से पंचायतवाले मामले में उनको नीचा देखना पड़ा था तब से वे यह कोशिश कर रहे थे, कि दोनों भाइयों में बिगाड़ पैदा किया जाय तो काम बने। उनकी कोशिश यह थी कि बटवारा हो जाय। इन छोटे जमींदारों को मजूरों को सताने और आपस में लड़ाने के अलावा काम ही क्या था।

रमधरिया, तेरी उमर इतनी हो गयी, आखिर तेरी शादी कब होगी? क्या तू हमेशा भाई और भौजाई की गुलामी ही करता रहेगा?—इत्याकार बातें उसे सुनने को मिलती थीं।

ऐसी बातें सुनकर रामधारी ठिठक कर खड़ा हो जाता। उसके सरल सुन्दर चेहरे पर बल पड़ जाते। सचमुच ही वह गांववालों की इन बातों को समझ नहीं पाता था। पहली बात तो यह थी कि उसे अपने ब्याह की कोई फिक्र नहीं थी। वह कोई दार्शनिक नहीं था, पर अपने ढंग से उसने विवाहितों को जैसा देखा था, विशेषकर गिरधारी को जैसा देखा था, उससे उसमें विवाह के प्रति कोई विशेष आग्रह नहीं था। दूसरी बात यह भी थी कि वह समझता था कि यदि ब्याह होना ही है तो गिरधारी से बढ़कर इस बात की फिक्र किसको हो सकती है। इसलिये उसको इन लोगों की बातों पर बड़ा आश्चर्य होता।

पर ये निठल्ले जमींदार भी तुल चुके थे। वे इस मामले में कुछ इधर या उधर कर डालना चाहते थे।

एक दिन खेत में उसे अकेले पाकर एक गांव वाले ने कहा—"अजीब भोला आदमी है। तू ब्याह करके गृहस्थी करेगा कि हमेशा भौजाई की गुलामी करेगा? तेरी उमर में तो जोरावर सिंह कई लड़कों के बाप हो चुके थे।"

यह गांव वाला और कोई नहीं था, हमारा पूर्व परिचित उजागरसिंह था। जब रामधारी इस प्रकार घेर लिया गया तो उसने कहा—"कौन मैं ब्याह के बगैर मरे जा रहा हूं? और अगर ब्याह होना ही है तो भैया ब्याह करायेंगे।" वह और भी कुछ कहने जा रहा था, पर चुप हो गया। बात यह है कि वह डरता था कि कहीं वह ऐसी बात न कह डाले जिससे ख्वाम-ख्वाह दुश्मनी पैदा हो।

जब उजागरसिंह ने देखा कि उसकी सलाह का कोई असर रामधारी पर नहीं हुआ, तब उसे बड़ा क्रोध आया। उसने क्रोध के आवेश में कहा—"बड़े आये हैं लछमन भाई? देखूंगा कि यह कब तक निभता है। यह कलजुग है, कलजुग! जिस जमाने में वे बातें निभती थीं; वे लद गये।"

रामधारी ने उजागरसिंह की पूरी बात नहीं सुनी। मर्यादा के विचार के कारण उसने कुछ कहा नहीं, चुपचाप वहाँ से चला गया।

सन्ध्या समय रामधारी ने गिरधारी को यह बताया कि इस तरह उजागरसिंह ने यह कहा था। गिरधारी ने सब बातों को सुनकर कहा—"मैंने तुमसे बार-बार कह दिया कि उजागरसिंह से बात न किया करो। पिताजी से उसका बैर था, अब वह चाहता है कि किसी तरह हम लोगों पर उस बैर को निकाले। वह चाहता है कि हम लोगों का सत्यानाश हो जाय और वह

खड़ा-खड़ा तमाशा देखे।''—थोड़ी देर तक रुककर अपने लहजे को बदलते हुए बोला—''बेहया कहीं का! जिस बात को हम मना करेंगे, उसीको करेगा। दुनिया बड़ी पेंचदार है, उसे नहीं समझेगा। बस हर वक्त अपनी ही जोते जायगा। कह दिया था कि बनारस से फौरन लौट आना, पर नहीं आया। नतीजा यह हुआ कि साढ़े चार सौ का दण्ड पड़ा, और कच्ची पक्की जो सुनी सो अलग। एक से एक दुख देने वाले हैं। लड़की थी तो वैसी निकली, भाई हैं सो बुद्धू हैं, कुछ समझते-सुनते ही नहीं।''—और उसने आग्नेय नेत्रों से छोटे भाई की तरफ देखा।

रामधारी जब इस प्रकार दुतकारा गया तो उसे बड़ा क्षोभ हुआ। जहाँ गायें बँधती थीं, वहीं जाकर अन्धेरे में बैठ गया। उसकी यह समझ में नहीं आ रहा था कि किस जगह पर उससे गलती हुई। उसकी उमर इतनी हुई, पर उसने भाई की इच्छा के विरुद्ध कभी कोई काम नहीं किया। भाई के ही लिये उसने इतने दूर का सफर किया, नहीं तो उसे क्या गरज पड़ी थी। इतनी उम्र हुई पर वह भाई की इच्छा के विरुद्ध कभी नहीं गया। एक बार भी जिस काम को मना कर दिया जाता था, वह उस काम को कभी नहीं करता था। उसे मालूम था कि उजागरसिंह दुष्ट आदमी है, पर जब खेत में बिल्कुल सामने आ गया तो खड़ा होना ही पड़ा। अब यह तो नहीं हो सकता था कि वह पुकारता और वह भागता चला जाता। हजार बुरा हो, पर है तो उम्र में बड़ा। गाँव के बुजुर्गों में उसकी गिनती थी। जब वह बात करने लगा तब वह सुनने लगा। फिर लौटकर उसने कोई बात छिपाई तो नहीं, एक-एक बात भैया को बता दी। फिर इतने क्रोध की क्या जरूरत थी? 'दूर हट, बेहया' उनका यह कहना कहाँ तक वाजिब था।

पशुगृह के पास अन्धेरे में बैठकर जितना ही इस विषय पर विचार करने लगा, उतना ही उसका हृदय वेदना से व्यथित होने लगा। उसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि इस विराट-जगत में वह अकेला है, बिल्कुल अकेला। हाय वह बनारस ही में क्यों न रह गया? पिथौरा में क्यों आया? यहाँ उसका कौन है? उस समय तक चाँद नहीं निकला था। तारों की टिमटिमाती रोशनी उसके हृदय की मानो चुटकी लेकर उसकी मनोवेदना को बढ़ा रही थी। उसे रोने की इच्छा हो रही थी।

तभी सहसा उसने सुना कि कोई उसका नाम लेकर पुकार रहा है।

रमधरिया! रमधरिया!!

हां, यह भैया हैं। उसे खाने के लिये पुकार रहे हैं। एक क्षण में ही उसका सारा दुःख सूर्योदय से अन्धकार की तरह काफूर हो गया। उसका हृदय स्नेह से भर गया। उसने भर्राई हुई आवाज में जवाब दिया—"हाँ भैया।"

"आओ, इधर आओ"—गिरधारी ने कहा।

रामधारी को इस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि वह भैया के लिये प्राणों का बलिदान कर सकता है। अब यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि इतनी देर तक उसे काहे का दुख था। वह जल्दी से उठकर भाई के पास गया, फिर दोनों भाई एक साथ हाथ पैर धोकर नंगे बदन चौके में खाने के लिये गये।

कभी जमुना चौके पर मध्याह्न-सूर्य की तरह तपती थी, पर अब बिलसिया का ही इन्तजाम रहता था। घटनाचक्र ने यहाँ से जमुना को हटाया था, और सुखिया को लाँघ कर बिलसिया चौके की मालकिन बन गयी थी। अब पहले का ठाट नहीं था, पर किसी तरह क्यों अच्छी तरह काम चल रहा था। किसी के जाने से काम थोड़े ही रुकता है, नहीं रुकता। रामधारी को

जमुना से सूना चौका कुछ खटकता था। पर गिरधारी जैसे आदी हो गया था।

खाते-खाते गिरधारी ने कहा—"कुछ सुना तुमने ?"

"क्यों क्या हुआ ?" कौतूहल के साथ रामधारी ने पूछा, पर उसे साथ ही कुछ खटका लगा कि कहीं बिरादरीवालों ने कोई नया बखेड़ा तो खड़ा नहीं किया।

सचमुच ही रामधारी ने कुछ नहीं सुना था। सुनने का उसे मौका ही कहाँ मिला था ? वह तो दिन-भर खेत पर था। खेत में उजागरसिंह से जो कुछ सुना था वह तो उसने बता ही दिया था। इस बीच में और कौन-सी बात हो गयी इसका उसे कुछ पता नहीं था। उसने देखा कि गिरधारी का चेहरा गम्भीर है, बस उसका चेहरा भी गम्भीर हो गया।

"मुन्नासिंह को तो जानते हो न ?" गिरधारी ने कौर दबाते हुए कहा।

"वही मुन्नासिंह न जो दावत में नहीं आया था, पर नाच में आया था।"

"हाँ हाँ वही" गिरधारी रोटी चबाने लगा।

रामधारी ने आश्चर्य के साथ पूछा—"क्या उसने कोई नया बखेड़ा खड़ा किया ? वह तो नमक खा गया था न ?"

गिरधारी को नमकवाली बात पर हँसी आयी। बोला—"अरे आजकल यह सब कौन पूछता है।" फिर वह चुप हो गया।

रामधारी इतना तो समझ गया कि मामला गम्भीर है। और कोई ऐसी बात हुई है जो नहीं होनी चाहिये थी। एक क्षण में ही एक अज्ञात भय उसके रक्त के कण-कण में फैल गया। दिन-भर खेत में काम करने के कारण उसे जिस जोर की भूख लगी थी वह कुछ तो भाई के अकारण क्रोध से नष्ट

हो गयी थी, और अब इस अज्ञात भय से बिल्कुल ही नष्ट हो गयी। एक डरावना भविष्य जैसे उसकी आँखों के सामने नाच गया।

गिरधारी ने एक के बाद एक तीन-चार कौर खाये। बिना कुछ कहे वह खाता जाता था, पर यह स्पष्ट था कि यह केवल यांत्रिक क्रिया थी। उसका मन कहीं और ही था।

गिरधारी ने एकाएक कहा—"मुन्नासिंह कहता है कि उसके और हमारे खेत के बीच में जो आम का पेड़ है, वह उसीकी जमीन में है" फिर कुछ रुककर एक और कौर दबाते हुए बोला—"कहता है कि पटवारी के कागज में ऐसा ही लिखा है।"

"वाह ऐसा कैसे हो सकता है? पेड़ तो हमारा है। गाँव में ऐसा कौन आदमी है जो इस बात को नहीं जानता कि यह पेड़ हमारा है।" तैश में रामधारी ने कहा, पर वह इससे भी किसी भयंकर बात की आशंका करता था, इसलिये यांत्रिक रूप से कौर तोड़कर खाने लगा।

बिलसिया अब तक चुप रहती थी। न मालूम क्या बात है वह इन दिनों अधिक नहीं बोलती थी। उसे शायद कुछ आगे बढ़ जाने के बाद यह भय हुआ था कि वह अपनी बड़ी बहन के मार्ग में ही बढ़ रही है, और उसका भी नतीजा शायद वही हो जो सुखिया का हुआ है। पर वह इतना आगे बढ़ चुकी थी कि पीछे लौटना सम्भव नहीं था। फिर भी उसके विचारों का उसके मन पर प्रभाव तो पड़ता ही था। वह अधिक नहीं बोलती थी। एक भाग्यवाद से परिचालित होकर चुप रहती थी जैसे बकरा बूचड़खाने में आ जाने के बाद भी प्रशान्त दृष्टि से जुगाली करता रहता है, उसी तरह।

पर इन बातों को सुनकर उससे भी चुप नहीं रहा गया,

बोली – "वाह, कोई अन्धेर है कि कोई दूसरे के चीज पर इस तरह दावा करे।"

रामधारी का चेहरा पहले से गम्भीर हो चुका था। स्त्रियों का क्रोध हमेशा पुरुषों के क्रोध को बढ़ाता ही है। रामधारी ने क्रोध में कहा—"मुन्ना की ऐसी की तैसी। क्या हमने माँ का दूध नहीं पिया जो वह इस तरह की बातें करता है ?"

गिरधारी अपने भाई तथा लड़की के उत्साह में हिस्सा न ले सका। घटनाओं की रगड़ घिस ने उसे बहुत अधिक सावधान बना दिया था। उसे अपने ऊपर अब उतना विश्वास नहीं था, उसे अनुभव हो गया था कि वह घटनाओं के हाथों में बहुत कुछ कठपुतला मात्र है। फिर वह आज सन्ध्या समय पटवारी से नक्शे की बात पूछने गया था। पटवारी ने नक्शा तो नहीं दिखाया था, पर यह कह दिया था कि कागजत में पेड़ मुन्नासिंह का दिखाया गया है। केवल यही नहीं उसने यह भी बताया था कि मुन्नासिंह और उसके खेत के बीच में जो मेड़ है, वह मुन्ना के खेत की ही हद में है।

गिरधारी ने इस पर पटवारी से पूछा था—"कितने सालों से यह पेड़ और मेड़ मुन्नासिंह की करके दिखलाई जा रही है।"

"इसकी मानी ?" पटवारी ने तेवर चढ़ा लिया था।

तब गिरधारी ने पटवारी से कहा था—"मुझे पूछना यह है कि कितने सालों से इस पेड़ को तथा मेड़ को कागजात में मुन्नालाल की मिलकियत करके दिखलाया जा रहा है ?"

इस पर पटवारी ने तैश में आकर कहा था—"हमेशा से"

गिरधारी ने इस पर गरम होते हुए कहा था—"हमेशा से तो नहीं, क्योंकि यह पेड़ और मेड़ हमारी है, इसे सभी पुराने किसान जानते हैं।"

इस बात को सुनकर पटवारी और भी गरम पड़ गया था, बोला था—"अच्छी बात है। अगर ऐसा ही है तो जाकर मुकदमा दायर करा दो। अदालत में जो असलियत है वह सामने आ जायगी।"

इसके बाद गिरधारी क्या कहता? वह समझ गया था कि मामला क्या था। स्पष्ट था कि मुन्नासिंह ने रुपये देकर पटवारी से कागजात में जालसाजी करा ली थी। पटवारी के घर से गिरधारी लौटा ही था कि रामधारी ने जाकर उजागरसिंह वाली बात कह दी थी। तभी तो वह बिना कारण उस पर बुरी तरह बरस पड़ा था। गिरधारी जिस समय अपने सम्बन्ध में यह समझ रहा था कि सब तरह के खतरे से दूर है, सुखिया गयी सो गयी, क्या बाल-बच्चे मर नहीं जाते? पर इस समय कोई खतरा नहीं था, इसी समय इस हरामजादे मुन्ना ने उस पर वज्र-सा डाल दिया था। फिर वही दौड़-धूप करो। फिर वही खुशामदें करो। उसे बड़ा क्रोध आ रहा था। और इसी मुन्नासिंह ने तब की बार उसका सत्यानाश किया, और अब की बार फिर पीछे पड़ा है।

गिरधारी ने अभी तक इन बातों को गुप्त रखा था, उसे आशा थी कि मुन्ना चाहे जो कुछ दावा करे पर पटवारी के कागज में सब ठीक होगा। आज जब उसने पता लगा लिया कि वहाँ तक मामला बिगड़ा हुआ है तभी उसने रामधारी के सामने यह बात रखी थी। रामधारी चाहे जो कुछ भी समझे, गिरधारी इस बात को समझता था कि यदि पटवारी ने झूठे कागज बनाये हैं तो उसकी तरह के आदमी के लिये कितनी दिक्कत होगी। इसी कारण वह अपने भाई तथा लड़की के उत्साह में भाग न ले सका। वह जानता था कि मामला बहुत आगे बढ़ चुका है, और चीजों को बदलना बहुत मुश्किल है।

वह अपने ही विचारों में मग्न यांत्रिक रूप से रोटी खाता गया। वह जानता था कि बिल्कुल निरक्षर होने पर भी मुन्नासिंह का बाप करतारसिंह कैसा बेढब मुकदमेबाज था। अब तक वह मुन्नासिंह की कीर्ति सुना करता था, पर अब मालूम हुआ कि कितना पहुँचा हुआ है। ऐसे लोग मर क्यों नहीं जाते? वे तो समाज को दुख देने के लिये ही जीते हैं।

गिरधारी ने कहा—"मालूम होता है कि उस दुष्ट ने सारे कागजात में जालसाजी करवा ली है। तभी तो मूछों पर ताव देकर कहता फिरता है कि यह पेड़ तथा मेड़ उसकी है। इसके अलावा सारा गाँव शायद उसीकी-सी कहे। बात यह है कि लोग उससे डरते हैं। न मालूम कब किस पर मुकदमा दायर करवा दे। मजूरों से दोस्ती रखता है। न मालूम किससे मिलकर कब क्या दावा करवा दे।

बिलसिया को भी जोश आ गया था, बोली—"केहर भैया इसमें कुछ नहीं कर सकते?"

गिरधारी ने इस बात को सुनकर भी नहीं सुना। इधर उसे केहर पर कुछ शक हो गया था, उसने कुछ नहीं कहा। पर मन में उसे विश्वास था कि केहर भी इसमें कुछ नहीं कर सकता। जब कागजात बिगाड़ दिये गये तो केहर क्या करेगा।

रामधारी न गिरधारी की बात सुन रहा था, और न उसे इसमें केहर के कुछ करने की बात दिखाई पड़ती थी। वह यह समझता था कि बचपन से वह इस पेड़ को अपना समझता आ रहा है और इतना ही यथेष्ट है। उसने बचपन से इसके फल खाये। कभी लकड़ी कम पड़ गयी तो और पेड़ों के साथ इसकी भी एकाध डाल काट ली। फिर यह पेड़ दूसरों का कैसे हो गया? उसने उत्साह के साथ कहा—वाह! लड़कपन से देख रहा हूँ कि यह पेड़ हम लोगों का है। हमने इसके फल खाये! हमने

इसकी लकड़ी काटी फिर यह पेड़ पटवारी के कागज के बदौलत दूसरे का कैसे हो सकता है ? पटवारी के हाथ में कलम है, जो चाहे सो लिख सकता है, पर यह पेड़ तो हमारा है, कोई इसकी एक पत्ती भी छूवेगा तो हम उसका सिर फोड़ देंगे। न फोड़ दूं तो कुर्मी से पैदा नहीं।

गिरधारी ने अपने भाई के उत्साह से तमतमाते चेहरे की ओर देखा। उसने सोचा रामधारी को तो अभी यह मालूम ही नहीं कि मुन्नासिंह ने मुखिया को बिगाड़ा है। आम के पेड़ की बात तो खैर बड़ी है ही, पर इससे कहीं बड़ी बात यह है। उसे बड़ा क्रोध आया कि इसी ने उसका सर्वनाश किया, न मालूम किस-किसकी खुशामद करायी। उसकी आंखों से आग निकलने लगी।

खाना खतम हो चुका था। गिरधारी उठ गया। रामधारी भी उठ गया। दोनों में से किसी ने उस दिन अच्छी तरह खाना नहीं खाया। पर बिलसिया जैसे रोज अपनी मां का अनुसरण करती हुई पिता से तथा चाचा से कहती थी यह खाओ, और एक रोटी परोसूं, आज वैसा नहीं बोली। आज वह भी उत्तेजित थी। शायद उसने उस उत्तेजना के कारण यह देखा ही नहीं कि बाप और चाचा अच्छी तरह बिना खाये ही उठ गये।

गिरधारी खाने के बाद जमुना के पास गया तो जमुना सजग थी। वह सब सुन चुकी थी, बोली—"यह मुन्नासिंह को हो क्या गया है ? हम लोगों पर क्यों खार खाये है ? क्या यह हम लोगों का सत्यानाश कर तभी मानेगा ?"

गिरधारी बोला—"तुम सब सुन रही थीं ? मैं तो समझा था कि तुम सो गयी हो।" फिर उसने कुछ सोच कर कहा—"तुम अच्छी होती तो मुझे कुछ चिन्ता न होती……। इसी से डरता हूं।"

जमुना को जैसे किसी भयंकर विपत्ति का पूर्वाभास हुआ। बोली—"तुम क्यों डरते हो? डरने की क्या बात है? एक पेड़ रहा न रहा, क्या आता जाता है?"

गिरधारी जैसे अब अपने को रोक न सका, बोला—"देखो इस पाजी को।" फिर कुछ स्वर नीचा कर बोला—"लड़की को बिगाड़ा, अब मेरे सत्यानाश पर तुला है, ऐसे आदमी के तो खून से नहाना चाहिये।"

जमुना ने इस पर कुछ नहीं कहा। वह सोचती रही किस किसके खून से नहाया जाय। यह दुनिया अजीब है। मन्नासिंह के साथ उसे कोई सहानुभूति नहीं थी, पर यहां तो सभी मुन्नासिंह दिखाई देते हैं। कोई किसी रूप में कोई किसी रूप में; वह चुप होकर लेट गयी। उसे उस रात को बिल्कुल नींद नहीं आयी। और एकाध दफे झपकी आयी भी तो डरावने स्वप्न दिखलाई दिये। उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे कोई भयानक विपत्ति अब आना ही चाहती है। पर उसने मन में सोचा कि अब और क्या विपत्ति आयेगी। एक लड़की वैसी निकली एक ऐसी निकली। आगे और क्या होगा।

बीस

दस दिन बाद।

ग्रीष्मऋतु का सूर्य आकाश की सबसे ऊंची चोटी पर बैठकर समस्त सृष्टि पर मानो अग्नि की वर्षा कर रहा था। चारों तरफ तरल लपटें एक-दूसरे को आलिंगन करती हुई दौड़ रही थीं। गांव में जैसे कोई रह नहीं गया था। खेत सांय-सांय कर रहे थे। दूर-दूर तक सन्नाटा था। आदमियों की तो क्या जानवर भी कहीं न कहीं छाया का आश्रय लिये हुए थे। पेड़ों के पैर नहीं थे, इसलिये वे खड़े-खड़े सूर्य के इस अत्याचार को सह रहे थे। यदि उनके पैर होते तो वे अवश्य ही किसी हिमगिरि की छाया में जाकर विश्राम की गोद में अपने को डालकर स्वप्नशील हो जाते। लू मानो सूर्य के इस अग्निराग के साथ सामंजस्य रहकर हहराकर अट्टहास कर रही थी। उसका वह तांडव नृत्य....

रामधारी झोंपड़े के अन्दर एक ऊंची जगह पर बैठकर सन की रस्सी बंट रहा था। उसे जरा-जरा नींद आ रही थी। पर

आज बैलों के लिये एक बड़ी रस्सी की जरूरत थी, इसलिये कुछ ऊंघते रहने पर भी वह रस्सी बंटता चला जा रहा था। चरखी से घर्र-घर्र आवाज हो रही थी।

रामधारी रस्सी बंटते-बंटते कुछ ऊंघने लगा था, उसकी चरखी भी कुछ देर तक चलकर ठिठक कर खड़ी हो गयी, मानो वह भी इस भयंकर दोपहरी में काम करना नहीं चाहती थी। रामधारी का मुंह जरा-सा खुल गया था। ऐसी हालत में किसी समय गिरधारी आकर उसके सामने खड़ा हो गया, इसका उसे पता भी नहीं चला।

इच्छा न होते हुए भी गिरधारी ने अन्तिम उपाय के रूप में केहरसिंह से कल मुन्नासिंह वाले दावे का जिक्र किया था। केहरसिंह फौरन मुस्तैदी के साथ इस काम में लगा था, पर शाम तक दौड़-धूप करने के बाद उसने यह कहा था—"चाचा कुछ नहीं हो सकता, कागजात में बहुत पुरानी जालसाजी मालूम होती है। शायद मुन्नासिंह का बाप ही ऐसा कर गया हो।"

उसके उत्तर में गिरधारी ने कहा था—"तो? तो क्या होगा?"

केहरसिंह इस पर कोई उत्तर नहीं दे सका था। कहा था कि यही हो सकता है कि हम ठहरे रहें, और मौका पाकर उससे ऐसा बदला लें कि वह भी याद करे। "बदला? ओह, इस दुष्ट ने क्या-क्या बदमाशियां कीं, इसका बदला कैसे लिया जाय? सुखिया इसी के लिये नष्ट हुई, जमुना तभी से बीमार है, मान गया, मर्यादा गयी, धन गया, अब यह नौबत आयी कि किसी के सामने मुंह उठाकर बात करने की हिम्मत नहीं पड़ती।"

"रमधरिया" गिरधारी ने एकाएक पुकारा। सुनसान दोपहर में उसकी आवाज एक विपत्ति में फँसे हुए की चीख की तरह सुनाई पड़ी।

रामधारी इस तरह चौंक पड़ा मानो वह कोई अपराध करते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया हो। उसने चौंककर कहा—क्या ?" उसके हाथ से चरखी छूट गयी। वह उसे उठाने लगा।

रामधारी डर रहा था कि गिरधारी उसे डांटेगा इसलिये वह चरखी हाथ में लेकर अजीब तरीके से खड़ा हो गया। न तो वह चरखी चलाना ही उचित समझ रहा था, और न उसे जमीन पर छोड़ देना ही ठीक समझता था।

गिरधारी ने उसे डांटा नहीं। केवल बोला—"चलो।"

रामधारी चरखी छोड़कर खड़ा हो गया उसे आश्चर्य हो रहा था कि इस भरी दुपहरी में गिरधारी उसे कहाँ ले जाना चाहता है। इस समय उनके किसी भी खेत में न तो कोई फसल खड़ी थी, और न कोई और ही काम हो रहा था कि उसे देखने की आवश्यकता होती। दूसरा कोई काम भी तो ऐसा नहीं याद आता था जो उस समय एकाएक पड़ सकता हो।

गिरधारी ने कहा "मैं सिन्दूरी आम तोड़ने जा रहा हूं। तुम पीछे से टोकरी लेकर आ जाओ" यह कहकर उसने रामधारी की प्रतीक्षा नहीं की, और जल्दी से लाठी हाथ में लेकर बाग की तरफ निकल गया।

रामधारी असमंजस में पड़ गया था। जा तो खैर वह रहा ही था, पर उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि सिन्दूरी आम तोड़ने की ऐसी क्या जल्दी पड़ी है। हमेशा आम तोड़ने के लिये तो रामधारी ही जाया करता था, गिरधारी कभी नहीं जाता था। आज ऐसी क्या जरूरत पड़ी कि भैया खुद जा रहे हैं और आम तोड़ने के लिए लाठी की क्या जरूरत थी। भैया जब रात-बिरात बाहर कहीं जाते हैं, हाथ में एक लाठी जरूर ले लेते हैं, पर दिन में तो उनके हाथ में लाठी कभी नहीं दिखाई दी।

उसे अकस्मात स्मरण हो आया कि कई दिन से गिरधारी ठीक इसी समय रहस्यजनक रूप से न मालूम कहाँ निकल जाता है, और थोड़ी देर बाद लौटकर चौपाल में गम्भीर होकर बैठ जाता है। गिरधारी को तम्बाकू इतना प्रिय है पर इन दिनों वह तम्बाकू तभी पीता है, जब उसे कोई चिलम चढ़ाकर देता है या कोई मिलनेवाला आ जाता है। गिरधारी इन दिनों दिन-भर न मालूम किस उधेड़-बुन में पड़ा हुआ दिखाई देता है। रामधारी यही समझता था कि जमुना की बीमारी से परेशान है।

रामधारी ने जल्दी से अपनी गजी की फतूही पहन ली, और बिलसिया से टोकरी लेकर सिन्दूरिया आम के पेड़ की दिशा में रवाना हो गया। दृष्टि जहाँ तक जाती थी गिरधारी का कहीं पता नहीं था। रामधारी ने मकान से निकलते समय कुछ सोच-कर लोहे की मूठ वाली मिर्जापुरी लाठी ले ली थी। रामधारी का खेत ऐसी जगह पर था कि वहाँ जाने के लिए गांव के कुछ हिस्से के बीच से होकर जाना पड़ता था।

रामधारी लपका हुआ चला जा रहा था। रास्ते में उजागरसिंह से भेंट हो गयी। उसके साथ और एक किसान था। गांव का ही कोई मजूर था पर रामधारी उसे जानता नहीं था।

उजागरसिंह ने जो रामधारी को इस तरह जल्दी में जाते हुए देखा तो उसने पूछा "इस दुपहरी में कहाँ चल दिये।"

टोकरी की तरफ इशारा करते हुए रामधारी ने कुछ नाराजगी के साथ कहा "आम तोड़ने।"

"इस कड़ी धूप में आम तोड़ने। ऐसी क्या जरूरत पड़ गयी?" फिर कुछ सोचते हुए उजागरसिंह ने कहा "अच्छा याद आ गया। कल हाट का दिन है, इसलिये शायद कल की तैयारी है।" कहकर उजागरसिंह मुस्कराया। वह जानता था

कि अच्छे किसान हाट में आम बेचने नहीं जाया करते। इसीलिये जान-बूझकर चोट पहुंचाने के लिये उसने ऐसी बात कही थी।

रामधारी ने मुंह बिचका लिया। बोला "नहीं। आम क्यों बेचने लगा? हम लोग आम कभी नहीं बेचते।" कहकर वह आगे बढ़ा।

"आम बेचना नहीं है तो इतनी जल्दी काहे की है?" उजागरसिंह ने रामधारी को सिर से पैर तक देखा। फिर बोला "दिन ढलने पर भी तो जा सकते थे?" फिर दुष्टता-भरी हँसी हँसते हुए उजागरसिंह ने कहा "अच्छा, तो भौजाई को एकाएक आम खाने की सूझी होगी? तभी तो भागे जा रहे हो। अब समझ में आ गया।" उजागरसिंह फिर पोपले मुंह से मुस्कराया।

रामधारी को क्रोध आ गया। बोला "भौजाई को क्यों घसीटते हो? वह तो बेचारी मर रही है। मैं इतना मीन-मेख नहीं जानता। भैया ने हुक्म दिया इसलिए जा रहा हूं" इतना कहकर रामधारी ने केवल उजागरसिंह को चिढ़ाने के लिये कहा "भैया हुक्म दे तो जान भी दे सकता हूं। यह तो कुछ भी नहीं है।"

इस कथन से मनोवांछित फल हुआ। उजागरसिंह के कान की नसें जैसे एक क्षण के लिये लाल हो गयीं। उसने आग्नेय नेत्रों से रामधारी के मुंह की ओर देखा, पर कुछ बोला नहीं क्योंकि उसे डर था कि रामधारी कहीं उसका अपमान कर बैठे। रामधारी के हाथ में जो लाठी थी उसने उसे विशेष रूप से इस आत्मनियंत्रण के लिये बाध्य किया।

रामधारी जाने लगा।

जब रामधारी कुछ दूर जा चुका तो उजागरसिंह ने पीछे से

रोकते हुए कहा "रमधरिया, रमधरिया! यह लाठी लेकर तू कहां जा रहा है ?"

न मालूम क्यों रामधारी को यह प्रश्न बिल्कुल पसन्द नहीं आया। वह सिहर उठा। मानो वह इसी प्रश्न से बचना चाहता था और इस दुष्ट उजागरसिंह ने इसी बात को पूछ दिया। रामधारी ने मुंह बिचका लिया, और तैश से बोल उठा "दादा, लाठी कोई बन्दूक थोड़े ही है कि इसके लिये तुमसे लाइसेन्स लेना पड़ेगा।"

उजागरसिंह ने अपने इस अपमान को भी हजम कर लिया। अब उसके दिमाग में एक सन्देह पैदा हो चुका था। उसने पूछा "गिरधारी कहाँ है ?"

रामधारी का हृदय न मालूम क्यों धक से हो गया। न मालूम क्यों उसने इसी में भलाई समझी कि इस समय सत्य न बोला जाय। उसने कहा "भैया सो रहे हैं, और क्या करें ? वह क्या किसीके बाप के नौकर हैं जो इस दुपहरी में तुम्हारी तरह इधर-उधर मारे फिरेंगे। उन्हें क्या फिक्र ?"

बाप के नौकर शब्द से रामधारी का इशारा इस बात पर था कि उजागरसिंह नौकर था। असल में उजागरसिंह नौकर नहीं था। कभी वह फौज में था, उसी के लिये उसे एक नाममात्र को पेंशन मिलती थी।

उजागरसिंह ने रामधारी की बातें सुनीं और उसके चेहरे को देखा तो उसने इसी में भलाई समझी कि आगे बात न करे। उसके अतिरिक्त हवा बहुत गरम थी। उजागरसिंह अपने मजूर के साथ आगे बढ़ गया।

रामधारी मन-ही-मन बहुत ही झुंझलाया कि रास्ते में इस मनहूस से भेंट हो गयी। इससे बात करते हुए कुछ देर भी हो

गयी थी। वह उसे मन-ही-मन गालियाँ देता हुआ आगे बढ़ा। सूर्य का आसन उस समय बहुत जरा-सा पश्चिम की ओर ढलने लगा था। परन्तु इससे उसके प्रताप में कोई कमी नहीं आयी थी, बल्कि उसके उत्ताप में कुछ वृद्धि ही हुई थी।

इक्कीस

गिरधारी गांव को पीछे छोड़ आगे बढ़ता चला जा रहा था। चारों तरफ सन्नाटा था। रास्ते में किसी से भेंट नहीं हुई थी। वह मेड़ पकड़कर आगे बढ़ा चला जा रहा था। उसके पैरों में चमरौंधा जूता था, किन्तु फिर भी उसके पैर झुलसे जा रहे थे। सिर पर एक तह किया हुआ कपड़ा लिपटा था।

वह बीच-बीच में पीछे मुड़कर देखता जाता था कि रामधारी आ रहा है या नहीं। पर रामधारी का कहीं पता नहीं था। और आज उसे ऐसा मालूम दे रहा था कि पास में रामधारी का रहना जरूरी है।

फिर भी वह अकेले आगे बढ़ा चला जा रहा था। वह जिस रास्ते से जा रहा था, उस पर किसी तरह के पेड़ पौधे की छाया नहीं थी। इसलिये कड़ी धूप सीधे उसके सिर पर गिर रही थी। धूप के कारण गिरधारी को कोई असुविधा नहीं हो रही थी। वह धूप सहने का आदी था। वह एकटक अपने खेत की ओर ताक रहा था। उसके खेत के पास एक आम का बाग था।

उसकी तरफ उसकी दृष्टि गयी, तो उसे ऐसा मालूम हुआ कि बाग के अन्दर जैसे कोई चीज हिल रही है। क्या यह किसी पेड़ की डाल है, या कोई आदमी? नहीं, कोई भटका हुआ बछड़ा होगा।

उसने ध्यान से उस हिलने वाली चीज को देखना शुरू किया। वह ठीक-ठीक समझ नहीं पा रहा था कि हिलने वाली वस्तु क्या है। वह धीरे-धीरे उस वस्तु की ओर सावधानी से बढ़ने लगा, मानो किसी शत्रु के सम्मुख जा रहा है। उसके माथे से टप-टप पसीने की बूंदें गिर रही थी। थोड़ी दूर आगे बढ़ते ही उसकी समझ में आ गया कि यह हिलने वाली वस्तु आदमी ही है। उसकी आंखों में खून उतर आया। अवश्य ही यह मुन्नासिंह है, और आम तोड़ रहा है। यह बाग उसी का है, अतएव उसके आम तोड़ने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती थी। पर गिरधारी ने सोचा कि यह मुन्नासिंह की चालाकी है। इस भयंकर धूप में उसे आम तोड़ने की क्या जरूरत पड़ी। गिरधारी को यह शक हुआ कि वह जिस लिये आया था कि चोरी से सिन्दूरिया आम तोड़ ले जाय मुन्नासिंह भी उसी उद्देश्य से आया था, पर उसको आते देखकर अपने बाग में घुसकर आम तोड़ने का स्वांग रच रहा है।

गिरधारी थोड़ी दूर और आगे बढ़ा तो उसे स्पष्ट ज्ञात हो गया कि यह आदमी सचमुच मुन्ना ही है। मुन्ना ने एक बार उसे देखा, फिर आम की टोकरी उठाकर दूसरे पेड़ के नीचे चला गया।

गिरधारी अपने सिन्दूरिया आम के पेड़ के पास पहुंचा। वह जाकर उसके नीचे खड़ा हो गया, और ध्यान से उसकी प्रत्येक डाल को देखने लगा। अच्छा, यह बात है! वह एकाएक सन्नाटे में आ गया। अरे किसी ने अभी-अभी ऊपर की डाल के

सब आम तोड़ लिये थे। यह अवश्य ही मुन्ना का काम है। तभी तो वह चोर की तरह कनखियों से देख रहा था।

वह कुछ देर तक तक वहीं खड़ा सोचता रहा। बड़ी अजीब परिस्थिति थी। उसने सोचा—"खैर आम तो तोड़े गये हैं, इसमें कोई शक नहीं। पर इन आमों को कोई छिपा नहीं सकता। चलकर उसकी टोकरी की जांच क्यों न की जाय।"

उसे यह बात बहुत पसन्द आयी। साथ ही उसने यह मन ही मन तय कर लिया कि मुन्नासिंह ने ही चोरी की है। उसने कागजात में जालसाजी तो कर ही ली, फिर जब देखा कि इतने में शायद काम नहीं बनेगा, झंझटें खड़ी होंगी, तब उसने इस सरल उपाय का अवलम्बन किया। उसने चोरी की।

पेड़ तो उसका है, और फल पाये मुन्नासिंह! यह खूब रही! न मालूम कब से वह इस प्रकार चोरी करता आ रहा है। उसने कागजात में चोरी की, और इधर फलों की चोरी करता है। वह पिछले साल यह समझता था कि इस पेड़ में फल कम लगते हैं, पर असल में उसकी कारस्तानी थी। फल खूब लगते हैं, और यह पाजी इस पेड़ के आमों को चुराकर बाजार में बेच आता है। गिरधारी के बाप के हाथ का लगाया हुआ पेड़ है, और उसकी यह दशा।

गिरधारी ने अपने माथे के पसीने को पोंछ लिया, फिर वह मुन्ना के बाग की ओर बढ़ा।

मुन्ना उसे अपनी तरफ आते देखकर कुछ झिझका। पर पुराना खुर्राट था, दबनेवाला नहीं था, बोला—"जयराम जी की।"

गिरधारी एकदम उसके पास आ गया, और अभिवादन का जवाब बिना दिये ही बोला—"तुमने मेरे सिन्दूरिया आम तोड़े हैं?"

"सिन्दूरिया आम ! कौनसा सिन्दूरिया आम ? मुझे नहीं मालूम।"

"बनो मत ! वही आम जिसके लिये तुमने जाली कागजात बनवाये !.... बोलो, तुमने हमारे पेड़ के आम लिये हैं ?"

मुन्नासिंह अकड़ गया। वह अपने को अच्छा-खासा जमींदार समझता था, यद्यपि था वह एक मोटा किसान मात्र, जैसे गिरधारी था। उसने बिगड़ कर कहा—"जाली कागज बनवाये, आम तोड़े ! यह सब क्या तुम कह रहे हो ? मेरे ही आमों को कौन खायेगा, इसका ठिकाना नहीं ! तुम्हारे आम कौन छूने जाता ?"

बहुत दूर पर रामधारी टोकरी हाथ में लिये हुए आता दिखाई पड़ा। आते-आते अभी कई मिनट की देर थी।

गिरधारी बोला—"बिगड़ते क्यों हो ? धरम से कहो तुमने कागज नहीं बनवाये।"

"कैसे जाली कागज ? तुम जानते हो कि मैं कुछ पढ़ा-लिखा नहीं हूं ? मैं क्या जानूं कागजों का हाल" कहकर वह जैसे कुछ मुस्कराया।"

"तुम्हारे बाप भी तो कुछ पढ़े-लिखे नहीं थे" गिरधारी ने अर्थपूर्ण ढंग से कहा।

"तो क्या हुआ ?"

"फिर भी तो उन्होंने कितने ही घर उजाड़ डाले, कितने ही घरों में खूसट बसा दिये।"

"जाओ, अपना काम करो। मुझे अपना काम करने दो। इन सब फिजूल की बातों में कुछ नहीं धरा है।" उसने दूसरी तरफ मुंह फेर लिया। बोला—"कल बाजार जाना है। मेरे पास इतना वक्त नहीं है कि तुमसे चोंच लड़ाऊँ।"

गिरधारी बोला—"तुमसे बात करे मेरा सींग ! मेरे आम

दे दो ! मैं चला जाऊं—कहकर वह मुन्नासिंह की टोकरी की तरफ बढ़ा। टोकरी आमों से भर-सी चुकी थी। ऊपर सब मामूली आम थे, सिन्दूरिया एक भी नहीं था, पर इस बात से गिरधारी का शक और बढ़ा।

गिरधारी टोकरी के अन्दर खखोलना चाहता ही था कि मुन्नासिंह टोकरी और गिरधारी के बीच बिजली की तरह आते हुए बोला—"जाओ जाओ ! इसमें तुम्हारा आम नहीं है।"

गिरधारी ने बहुत मुश्किल से अपने को संभालते हुए कहा—"नहीं है, तो मेरे देखने में क्या हर्ज है ?"

"हर्ज है !" जिद के साथ मुन्नासिंह ने कहा।

"इसमें मेरे आम जरूर हैं। मैं पेड़ देख आया। अभी-अभी किसी ने आम तोड़े हैं।"

"नहीं !" फिर जिद के साथ मुन्नासिंह ने कहा।

"जरूर तोड़े हैं तुमने !"

"नहीं !"

"तो देखने में हर्ज क्या है ? तुम देखने नहीं देते, इससे शक होता है कि तुमने चोरी की है !"

"अच्छा यह बात ! चोरी की है, तो पुलिस में रपट लिखा आओ। तुम्हें मेरी तलाशी लेने का कोई हक नहीं !" मुन्नासिंह ने एक पक्के मुकदमेबाज की तरह कहा।

"वाह ! मेरी ही चोरी करे, और मुझे ही देखने का हक नहीं। यह अच्छी रही !" गिरधारी ने गुस्से से कहा।

"है नहीं है" मुन्नासिंह ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"है क्यों नहीं ?"

"नहीं है।"

"है।"

"हरगिज नहीं है।"

गिरधारी एक कदम बढ़कर एकदम मुन्नासिंह से सटकर खड़ा हो गया। फिर उसने टोकरी की तरफ बढ़ते हुए कहा "कहे देता हूं हट जाओ। देख लेने दो।"

"नहीं।"

"नहीं देखने दोगे? लम्पट पाजी कहीं के" गिरधारी के सिर पर उस समय खून सवार हो चुका था।"

"नहीं" मुन्नासिंह ने कहा। वह देखने कैसे देता? उसमें तो सचमुच सिन्दूरिया आम थे।

बस तुरन्त गिरधारी की लोहे की मूठवाली लाठी तड़ाक से मुन्ना के सिर बैठी। वज्र के मारे हुए केले के पौधे की तरह मुन्नासिंह जमीन पर गिर गया, और तुरन्त उठने की चेष्टा करने लगा।

गिरधारी जानता था कि मुन्नासिंह उससे कहीं तगड़ा है। हाथ में लाठी होने पर भी वह इस बात को भलीभाँति समझता था कि यदि मुन्ना एक बार उठ गया तो निहत्था होने पर भी लेने के देने पड़ जायेंगे। इसलिये उसने मुन्ना पर लाठियों की वर्षा जारी रखी। दूसरी लाठी खोपड़ी पर पड़ी। सधा हुआ हाथ था। भेजा खुल गया। बस और लाठियाँ पड़ीं, तो मुन्ना जहाँ-का-तहाँ ढेर हो गया। उसने चिल्लाने की कोशिश की, परन्तु कराहने की अस्फुट आवाज के अतिरिक्त मुंह से कुछ भी नहीं निकल सका। सांय-सांय चलने वाली लू में वह आवाज डूब गयी। पाँच-सात लाठियों के बाद कराहना भी बन्द हो गया। गिरधारी कहता जाता था—"पाजी कहीं का! छैला, लम्पट! मुन्नासिंह हमेशा के लिये चुप हो गया।

गिरधारी ने जब समझ लिया कि मुन्नासिंह मर चुका है तो उसने लाठियों की वर्षा बन्द कर दी।

रामधारी दौड़ता हुआ आ पहुँचा। गिरधारी ने पैर की

आहट सुनी तो पीछे की ओर मुड़कर देखा। भाई को आते देखकर उसे तसल्ली हुई। वह इतनी दूर तक जाना नहीं चाहता था। वह तो केवल चोटी से आम तोड़ने आया था। पर यह क्या हो गया? उसके पैर के नीचे से जमीन खिसक गयी। उसका सारा शरीर शिथिल पड़ गया। उसने मुन्नासिंह की ओर देखा तो वह आँख खोले पड़ा था, चारों तरफ खून की नदी बह रही थी। मुन्नासिंह की आँखों में आश्चर्य की छाप थी। गिरधारी डर के मारे थर-थर काँपने लगा।

"अरे भैया, तुमने यह क्या कर डाला?" रामधारी ने आँधी की तरह आकर प्रश्न किया।

गिरधारी ने कोई उत्तर नहीं दिया, पर भाई ने जो कुछ कहा था, उससे वह अपनी मुसीबत के परिमाण को समझ गया।

रामधारी ने उत्तर की प्रतीक्षा बिना किये ही मुन्नासिंह के खून से लथपथ शरीर की ओर ताककर कहा—"यह तो मर गया! भैया तुमने तो इसका काम ही तमाम कर दिया।"

गिरधारी के हाथ में उस समय तक खून से सनी हुई लाठी थी। उसकी आँखें लाल हो रही थीं, और उसकी दृष्टि में एक उड़ता हुआ भाव था, जिसे देखकर रामधारी को भी कुछ डर लगा। वह मुन्नासिंह की लाश की जांच करने के बहाने गिरधारी से कुछ दूर हटकर खड़ा हो गया। गिरधारी के सिर पर इसे समय खून सवार था। न जाने वह इस समय क्या कर डाले। पर अगले ही क्षण उसका हृदय करुणा से भर आया। उसे भविष्य बड़ा अंधकारमय दिखाई पड़ा। उसे केवल अपना तथा अपनों का ही सोच नहीं था। एक बार उसके दिमाग में मुन्नासिंह की बात भी आयी कि इस बेचारे मुन्नासिंह की स्त्री

है, बच्चे भी शायद हों, बुढ़िया मां है। उसका मन विषादपूर्ण विचारों से भाराक्रान्त हो गया।

गिरधारी ने कहा—"रामधारी!"

रामधारी ने भाई की तरफ देखा।

गिरधारी ने कहा—"अब?....अब क्या हो?"

"अब?"

और रामधारी अकस्मात भविष्य के सम्बन्ध में सजग हो गया। अभी थोड़ी देर में लोग आ जायेंगे, तो भैया रंगे-हाथों पकड़े जायेंगे। ओह...कितना भयंकर काण्ड हो गया? पुलिस, अदालत, फांसी..., एक क्षण में सारी बातें दुःस्वप्न की तरह उसके मन में दौड़ गयीं। उसने भाई की तरफ आगे बढ़ते हुए कहा—"भैया, चलो चलें।"

"और यह?" गिरधारी का मतलब यह था कि लाश छिपा दी जाय।

एक क्षण के लिये रामधारी झिझका। फिर उसने एक बार आकाश की ओर देखा, फिर उस तरफ देखा जिधर गांव था और उसने समझ लिया कि लाश छिपाना असम्भव है। लाश भी छिप गयी तो यह आम की टोकरी, और खून से लथपथ जमीन। अभी लोग आ जायेंगे। फिर यह रास्ते में भी पड़ता है। बोला—"पड़ा रहने दो। क्या किया जाय? चलो, चलें।"

गिरधारी बच्चे की तरह रामधारी के पीछे-पीछे चलने लगा। रामधारी ने बड़ी सावधानी से उसे गांव में पहुंचा दिया। किसी को पता भी नहीं लगा।

ऊपर सूर्य नरायण उस समय भी तप रहे थे। पर अब बुढ़ापे की छाप किरणों पर थी। ढोर निकल चरने लगे थे। लोग भी अब घरों से निकलने ही वाले थे।

बाईस

केहरसिंह ने सुना कि गिरधारी और रामधारी दोनों भाई कतल के मामले में गिरफ्तार हो गये हैं, तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। कल मुन्नासिंह को किसीने कत्ल कर दिया था। संध्या समय वही इसकी खबर लेकर गिरधारी के घर गया था। जब केहरसिंह ने यह खबर दी थी तो दोनों ने बहुत आश्चर्य प्रकट किया था। आज सवेरे भी वह वहां गया था, तो कोई बात नहीं थी। पर अभी वह फिर बन-ठन कर उधर का रास्ता पकड़ने ही वाला था तो उसे मालूम हुआ कि दोनों भाई गिरफ्तार हो गये हैं। दारोगाजी कल से ही गांव में आकर दौड़-धूप कर रहे थे, कहीं किसीसे सवाल करते थे तो कहीं किसीसे। मालूम होता है कि योंही शक पर गिरफ्तार कर ले गये हैं। या कौन जाने ?

वह बिल्कुल जाने के लिये तैयार था। पर इस खबर के पाते ही ठिठककर खड़ा हो गया। एक बात सोचकर उसे कुछ खुशी ही हुई। अभी चार पांच-रोज की बात है कि बिलसिया

के सामने उसके मुंह से कुछ ऐसी बात निकल गयी थी जिसका मतलब यह था कि सुखिया के साथ केहरसिंह का ताल्लुक था। उसी दिन से बिलसिया उससे खिच गयी थी, और जब भी केहरसिंह अकेला पाकर गिरधारी के घर पहुँचता तो या तो बिलसिया बड़े बच्चों को बुला लेती, या जमुना के पास जा बैठती। उसे अपनी परिस्थिति साफ करने का भी ठीक-ठीक मौका नहीं मिला था। वह बड़ी बेचैनी में था क्योंकि यद्यपि वह भ्रमर वृत्तिवाला था फिर भी अभी वह बिलसिया से अघाया नहीं था। ज्यों-ज्यों दिन जा रहे थे त्यों-त्यों बिलसिया का सौंदर्य और भी निखरता चला जा रहा था।

पर अब? अब अकड़ कहां जायगी? जिस मामले को लेकर केहरसिंह इस प्रकार परेशान था, उसे खुदबखुद इस तरह सुलझते हुए देखकर केहरसिंह का मन पुलकित हो उठा। इस प्रकार दैव को उसकी सहायता के लिये आते हुए देखकर उसका मन आनन्द से नृत्य कर उठा। वह जल्दी से एक इत्र का फाहा कान में रखकर गिरधारी के घर के लिये रवाना हो गया।

रास्ते में महावीर स्वामी की मूर्ति दिखाई पड़ी तो उसने बड़े भक्ति-भाव से उसके सामने हाथ जोड़े। उसका मन कृतज्ञता से पूर्ण था। घटनाएं इस तरह होती जायं तो फिर क्या था? उसने आंख मूंदकर प्रणाम किया और जेब से निकाल कर एक इकन्नी मूर्ति के सामने रख दी।

इसके बाद वह अकड़ता हुआ गिरधारी के घर पहुँचा। देखा तो सन्नाटा है। रास्ते में जहां गाय, बैल बंधते थे, वहीं पर यह पता लग गया है कि घर पर कोई भारी विपत्ति पड़ी है क्योंकि उनका सानी-पानी नहीं किया गया था।

घर के भीतर केवल जमुना के यहां एक कुप्पी जल रही थी। बिलसिया रोज इस समय रसोईखाने में होती थी, वहां आज

बिल्कुल सन्नाटा था, पर केहरसिंह की आहट पाकर शायद बिलसिया ही वहां से निकली, और उसके पास आने के बजाय सीधा और ऐसा मालूम पड़ा कि जल्दी से जमुना की कोठरी में चली गयी।

केहरसिंह को इस बात पर बड़ा क्रोध आया। आज भी इतनी अकड़। उसके तेवर चढ़ गये। पर वह अपने बाप का बेटा था। जानता था कि क्रोध से काम बिगड़ता है। इसलिये वह सीधा जमुना के पास पहुंचा, और रूआंसा चेहरा बनाकर खड़ा हो गया।

जमुना शायद रोते-रोते सो गयी थी। पास में अन्य बच्चे भी जहां-तहां पड़े हुए थे। केवल बिलसिया ही शायद गरमी के कारण ही बाहर रसोईघर के इर्द-गिर्द कहीं पर थी। केहरसिंह के घुसते ही जमुना की झपकी टूट गयी। इन दिनों केहर-सिंह जब कभी जमुना के सामने आता भी था तो जमुना उस पर कोई ध्यान नहीं देती थी, पर आज जो जमुना ने केहरसिंह को सामने देखा तो उसने तपाक से उसका स्वागत किया, और ऐसे मिली जैसे बहुत दिनों की बिछुड़ी हुई मिली हो। केहरसिंह एक ही चालाक था, उसने उस बात पर ध्यान नहीं दिया यह बात नहीं। वह मन ही मन हंसा।

जमुना बोली—"बेटा, सत्यानाश हो गया।"

"हां, वही सुनकर तो चला आ रहा हूँ। कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि पुलिसवालों ने क्यों फंसा दिया। मेरी जान में तो वे बेकसूर हैं।"

जमुना बोली—"आज दोपहर के बाद दारोगाजी आये, और उन्होंने दोनों भाइयों को बुलाकर कुछ सवाल पूछे, फिर दोनों को गिरफ्तार कर चले गये। लड़के अभी तक रोते रहे, अभी सो गये हैं।"

केहरसिंह ने कहा—"हां, सो तो देख रहा हूँ, मालूम होता है आज इनका खाना-पीना भी नहीं हुआ है। सब ऐसे ही सो गये हैं।"

जमुना बोली—"हां बेटा, लड़के भी रो रहे थे, और बिलसिया भी रो रही थी। मैं तो एक तरह से हूँ ही नहीं, इसलिये कौन पकाता और कौन खाता।" फिर कुछ सोचकर बोली—"जीते रहेंगे तो खायेंगे, पर बेटा यह तो बताओ कि कैसे बिलसिया के बाप और चाचा को छुड़ाया जाय।"

केहरसिंह ने कहा—"सो तो खैर होगा ही। कल सवेरे ही वकील बैरिस्टर सब कुछ किया जायगा। फिर दारोगाजी से भी मिला जायगा, क्या लेने-देने को कहते हैं सो देखूंगा। कोई मौके पर तो पकड़े नहीं गये हैं, दारोगाजी के हाथ छोड़ना न छोड़ना है।"

जमुना कुछ जैसे सोच रही थी फिर धीरे से बोली—"बेटा, मैंने किसीसे बताया नहीं था, मेरे पास दो सौ रुपये हैं। कौड़ी-कौड़ी जोड़कर इकट्ठा किया। अगर इससे इनको छुड़ाते बने तो ले लेना।"

केहरसिंह ने कहा—"सो खैर कोई बात नहीं। जरूरत पड़ेगी तो ले लिया जायगा। दारोगा कोई दो सौ से मानने वाला नहीं है पर वह भी काम आ जायगा। पर अभी तो बच्चों को खिलाने का ढंग करना चाहिए।"

जमुना ने आस-पास लेटे हुए बच्चों के सूखे चेहरों की ओर देखा, और बोली—"हां, बिना खाये सब सो गये हैं। पर अब रात ज्यादा हो गई है, जाने दो।

केहरसिंह ने कहा—"वाह जाने कैसे दूंगा, क्या लोग परदेश नहीं जाते? समझिये कि दोनों चाचा परदेश गये हैं। खाना

बनने में क्या देर लगती है। बिलसिया रसोई का काम सम्भाल ले, मैं उधर गाय, बैलों को सानी-पानी करता हूँ।"

जमुना की आंखें बैलों की बात सोचकर आर्द्र हो गयीं। किसानों को अपने ढोर बच्चों से कम प्यारे नहीं होते। बोली—"बेटा, उनकी बात तो मुझे याद ही नहीं रही। एक गाय तो गाभिन है, उसे तो जरूर कुछ देना पड़ेगा।"

बिलसिया अब तक कुछ नहीं बोली थी, अब वह बात करती हुई बोली—"आज हम लोगों को भूख नहीं है।"

केहरसिंह समझ गया कि बिलसिया उससे भागना चाहती है, बोला—"तुम्हें भूख नहीं है यह तो ठीक ही है पर हमारा भी तो एक फर्ज है, नहीं तो चाचाजी कल लौट आये तो कहेंगे कि केहर दो दिनों के लिये दुश्मनों ने हवालात भिजवा दिया था, सो तुम्हारे रहते हुए सब भूखे रह गये।" फिर जमुना की तरफ देखते हुए बोला—"नहीं चाची मैं ऐसा होने नहीं दूंगा।"

बिलसिया को जिस दिन यह मालूम हो गया था कि केहरसिंह ही सुखिया के दुर्भाग्य का कारण था उस दिन से उसे केहर से घृणा हो गई थी, और उसी दिन से वह उससे बचकर चलती थी। अब वह पहले की भोली-भाली लड़की नहीं थी। वह अगर गिरधारी को चकमा दे सकती थी तो केहर को भी चकमा दे सकती थी। तब से केहर ने कई तरह के डोरे डाले, पर वह हाथ नहीं आयी थी। उसने कहा—"अच्छा तो कुछ चबैना खा लेंगे।"

केहर एक बार निराश जैसे हो गया, पर उसने अन्तिम प्रयास के रूप में कहा—"पर सानी-पानी तो करना ही है, चलकर मुझे बता दो, और सबके लिये चबैना ले आओ।"

जमुना बोली—"बेटा, तुम्हें कुछ करने की जरूरत नहीं है, बिलसिया सानी-पानी सब काम कर लेती है, बस तुम खड़े

होकर धीरज बँधा दो, और कुछ करने की जरूरत नहीं है।"

केहरसिंह मन ही मन खुश होता हुआ बोला--"मैं कोई सुकुमार नहीं हूँ। सब काम जानता हूँ। लोग समझते हैं कि मैं मुखिया का लाडला लड़का हूं, पर कई बार जब मजदूर नहीं रहते तो सब काम करना पड़ जाता है। मैं सब कर लूंगा।"

बिलसिया ने जब देखा कि इसके साथ जाना ही पड़ेगा, तो उसने खाना पकाना स्वीकार कर लिया। यह तय हुआ कि बिलसिया कुछ मामूली खाना पका लेगी साथ ही बैलों और गायों को सानी-पानी देगी। केहरसिंह अन्तिम काम में उसे मदद देगा।

दोनों कुप्पी लेकर वहां से निकल गये। रोज की तरह जमुना अँधेरे में पड़ी रही, और पड़ी-पड़ी न मालूम कहां-कहां की बात सोचती रही। उसे बस गिरधारी के उस समय की दृष्टि याद आयी जब वह हथकड़ी बँधी हुई हालत में उससे मिलने आया। उसकी आंखों में केवल एक ही भावना थी, त्रास और भय। वह अपने पति को खूब पहचानती थी। हमेशा से वह दुर्बल चित्त का था, जब से भाग्य की थपेड़ें पड़ीं, तब से और भी दुर्बल हो गया था। वह उससे इस प्रकार बिछुड़ा जैसे अन्तिम बार मिलने आया है कौन जाने? इस घर पर न मालूम क्या शनीचर आया है। एक के बाद एक मुसीबत और आफत आती ही जाती है। मुन्नासिंह को किसने मार दिया? क्या गिरधारी ने उसको मारा? मालूम तो नहीं होता था क्या पता? किसके दिल में क्या है यह कौन जाने? हां मुन्नासिंह ने कुछ कसर नहीं रखी थी। जब देखो तब वही दुश्मनों के आगे होता था। उसी ने मुखिया को....। हां पर उसे मारने की क्या जरूरत थी? हा हा हा हा।

लड़के बिना खाये सो गये हैं। किस बुरी तरह रो रहे थे?

आज उनको कुछ खाने को भी नहीं मिला। पर बिलसिया गयी तो है पकाने। पता नहीं। न सोचना ही अच्छा है। चूल्हा फूंकने की आवाज आ रही है। उधर कोई गाय-बैलों की तरफ है। केहरसिंह सानी दे रहा है। घर में कभी नहीं किया होगा। हा हा हा हा। सन्नाटा है। नहीं कुछ चूर रहा है। क्या दाल चढ़ा दी? क्या जरूरत थी? क्या सबेरे की दाल नहीं है? अच्छा याद आया। गरमी का मौसम है। उस दिन दाल खराब हो गई थी। दाल चुर रही है। कोई पैर की आहट हो रही है। केहरसिंह तो जूता पहने था, क्या उसने जूता खोल लिया। खोल लिया होगा। कीमती जूता है, सानी-पानी जूता पहन कर ठीक नहीं होता। जिस काम का जो है।

कुछ कानाफूसी-सी हो रही है। शायद केहरसिंह बिलसिया से कुछ कह रहा है। क्या कह रहा है? कुछ सुनाई नहीं पड़ता। अच्छा यह कोई रो रहा है। बिलसिया रो रही होगी। बाप और चाचा दोनों गिरफ्तार हो गये, रोना ही चाहिये, पर रोकर क्या होगा? सब अपनी-अपनी तकदीर से बंधे हैं। जिसकी जैसी तकदीर वैसी होती है। रोने से क्या होगा? पर यह क्या? रोना एकाएक बन्द हो गया। शायद केहरसिंह ने समझाया होगा। ठीक है। समझाना ही चाहिये। रोने से कुछ मिलता नहीं। मैं पड़ी-पड़ी महीनों से रो रही हूं पर क्या हुआ? अब शायद गिरधारी को फांसी हो।

बिलसिया हँस रही है। केहरसिंह भी हँस रहा है। पर यह कैसी हँसी? क्या कोई उसे गुदगुदा रहा है? हाँ, खिलखिलाकर हँसरही है। अभी रो रही थी, अभी हँस रही है। फिर यह क्या? जैसे कोई किसीको पकड़ रहा है खींच रहा है। अब आवाज नहीं मालूम होती। दाल अभी तक चुर रही है। अरहर की दाल है। देर से गलती है। एकाएक यह चुप्पी कैसी? पर नहीं किसी

दूसरी तरफ आवाज आयी। किस तरफ से ? बैल इधर से उधर हट रहे होंगे । नहीं यह तो जैसे खटिया की आवाज है कुछ जैसे किसीने खाट को हटाया। यह वही बड़ी खटिया है, जिसमें गिरधारी और वह कभी सोया करती थी, और अब बच्चे सोया करते हैं। आज बच्चे यहाँ सोये हुए हैं पर खाट किसने हटायी। नहीं हटायी, नहीं हट गयी। फिर वही नियमित रूप से खाट की चर-चर आवाज मालूम होने लगी। ओह, हा हा· हा हा। इसी पर उसकी सब आशा है।

तेईस

केहरसिंह ने गिरधारी और रामधारी को छुड़ाने की कोई कोशिश नहीं की, पर उसके बाप सेहरसिंह ने इस सम्बन्ध में कुछ उठा नहीं रखा। इसका कारण यह नहीं था कि उसमें परोपकार की भावना अधिक थी, बल्कि इसका कारण यह था कि वह इस बात से डरता था कि गिरधारी और दारोगाजी से अधिक बातचीत हो, और वह साढ़े चार सौ वाली बात खुल जाय तो अनर्थ हो जायगा। सेहरसिंह ने इन रुपयों में से एक कौड़ी भी दारोगाजी को नहीं दिया था। वह सारे-के-सारे रुपयों को खुद डकार गया था।

इसलिये ज्योंही गिरधारी और रामधारी गिरफ्तार हुए, त्योंही वह बहुत दौड़-धूप करने लगा। गिरफ्तारी की खबर पाते ही वह थाने के हवालत में पहुँचा। उसकी तो सर्वत्र अबाध-गति थी। उसने गिरधारी से कहा—"डरो मत, मैं तुम्हारे लिये दारोगाजी से बात करूंगा, पर तुम किसी भी हालत में

उससे बात न करना, नहीं तो जहाँ सौ से काम बनता हो, वहाँ पाँच सौ मांगेगा।"

गिरधारी उसे देखकर गिड़गिड़ाने लगा, बोला "मुखिया किसी तरह से हमें बचाओ, नहीं तो मैं तो मर रहा हूँ, बाल-बच्चे भी मर जायेंगे। जो जरूरत पड़े सो बेच-बाच लो।"

सेहरसिंह ने कहा "वाह, जो तुम्हें बचाना ही न होता, तो मैं तुम्हारे पास आता ही क्यों। जैसे तुम्हारी हेठी हुई तैसे हमारी। पर उस बात को याद रखना कि कभी दारोगा से बातें न करना, बड़ा काइंया है, हम ही इससे बात कर सकते हैं।"

गिरधारी ने कहा—"नहीं, नहीं जब तुम हो मुझे बात करने की क्या जरूरत है।"

"हाँ" कहकर वह गिरधारी के कान के पास मुंह ले गया और लोहे के जंगलों के बाहर से बोला—"देखो यह तो बात सीधी है, रामधारी को तो मैं नहीं कहता, पर मैं तुम्हें जरूर छुड़ा लूंगा।"

कहकर वह चला गया। गिरधारी अकारण खुश हो गया। वह समझने लगा कि जब सेहरसिंह कह गया है तो वह अवश्य उसे छुड़ा लेगा। रहा चार-छः सौ रुपये लगेंगे सो एक जोड़ी बैल छोड़कर बाकी सब ढोर बेच लिये जायेंगे। पैसा तो हाथ का मैल है। जिंदा रहेंगे तो ऐसे सैकड़ों रुपये कमायेंगे। जान बची तो लाखों पायें।

रामधारी हवालात के एक कोने में बैठा था। गिरधारी से सेहरसिंह की जितनी बातचीत हुई थी उसने सिवाय कान में कही गयी बातों के और सब सुन लिया था। पर उसे कोई विशेष जोश नहीं आया था। वह जहाँ-का-तहाँ बैठा रहा मानो उसे कुछ आशा ही नहीं थी। गिरधारी ने रामधारी की ओर देखा तो उसे यह बात याद आयी कि सेहरसिंह ने उसे छुड़ाने की बात

नहीं कही। एक क्षण के लिये जैसे उसे किसी भूल का अनुभव हुआ। जैसे कुछ होना चाहिये था, पर नहीं हुआ। पर उसने यह सोचा कि रामधारी तो यों ही छूट जायगा। कतल तो मैंने किया है न कि उसने। अगर मैं ही छूट गया, तो वह क्यों नहीं छूटेगा। वह इसी सुखद विचार को लेकर रामधारी के पास गया, और बोला "सुना ?"

"क्या ?" फिर जैसे एकाएक होश में आते हुए कहा "हाँ।"

गिरधारी ने और पास आते हुए कहा "हम दोनों छूट जायेंगे।"

"हाँ..."

"सेहरसिंह आये थे। उन्होंने ऐसा ही कहा।"

रामधारी फिर भी कुछ नहीं बोला, तब गिरधारी ने मानो सारी योजना समझाते हुए कहा "चार-छः सौ लग जायेंगे, सो लग जायं। रुपये किस दिन के लिये होते हैं। जान बची तो लाखों पाये।"

रामधारी ने इस पर भी कुछ नहीं कहा।

इधर सेहरसिंह ने गिरधारी को तो ऐसा कहा, पर वह तुरन्त शहर में चला गया, और वहाँ से एक अच्छे वकील से दरख्वास्त दिलायी कि गिरधारी और रामधारी को थाने के हवालात में चौबीस घंटे से भी अधिक रखा गया है, ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं है, इसलिए मुलजिमों को जल्दी-से जल्दी जेल में भेज दिया जाय नहीं तो उनके हित को नुकसान पहुंचने का खतरा है। अगरचे इस दरख्वास्त में यह भी लिखा जा सकता था कि उन्हें जमानत पर छोड़ा जाय।

नतीजा यह हुआ कि गिरधारी और रामधारी फौरन जिला जेल में भेज दिये गये। दारोगाजी को यह मौका ही नहीं मिला

कि उनसे कोई लेन-देन की बातचीत करे। फिर कतल का मुक-दमा था, और उनको यह विश्वास हो गया था कि गिरधारी और रामधारी ने मिलकर मारा है इसलिये वे उनसे लेना नहीं चाहते थे। वे तो गाँव के और लोगों को डरा-धमकाकर कुछ वसूल करना चाहते थे, सो वे करते ही रहे। जिससे कुछ वसूल करना होता था, उससे जाकर यह करते थे कि साले तुम भी इसमें शामिल थे, और दस-बीस जो मिल जाता था, उसमें गनीमत समझते थे। कई को तो वे थाने तक बाँधकर ले आये, और घंटा दो घंटा हवालात की हवा खिलायी तब रकम वसूल हुई।

जिला जेल पहुंच जाने के बाद कई दिन हो गये, तिस पर भी जब गिरधारी नहीं छूटा तो उस पर एक भय-सा छा गया। सेहरसिंह भी तो नहीं आया।

ऐसे ही कई दिन बीते। आशा निराशा में परिणत होने लगी। हवालात के अन्धेरे में गिरधारी और रामधारी आपस में बातें कर रहे थे। एक टिमटिमाती लालटेन जल रही थी। संतरी आकर बीच-बीच में ताले को झटके के साथ खींचकर देख लेता था। दोनों भाइयों की आँखों में नींद का नाम नहीं था।

गिरधारी रामधारी से कहीं अधिक परेशान था। यदि राम-धारी परेशान था तो वह भीतर-ही-भीतर परेशान था, ऊपर से बिल्कुल चुप बना रहता था। जब तक कोई उससे बोलता नहीं था तो वह बोलता नहीं था। गिरधारी को उसकी यह चुप्पी बहुत अखरती थी जाने कैसा डर मालूम होता था। गिर-धारी को जमुना बहुत याद आती थी। क्यों एक छोटे-से पेड़ के लिये उसने यह भयंकर जहमत मोल ली? सुखिया? सो उसमें सुखिया का भी दोष था। मारकर क्या हुआ, महीनों

मुकदमा चलेगा, और शायद फाँसी होगी। उसको कैदियों ने बतलाया था कि फाँसी कैसे होती है। अरे बाप रे! बड़ा भयानक है। हाथ में हथकड़ी डालकर अन्धेरे में निकाल ले जाते हैं, फिर मुंह पर एक लाल टोपा चढ़ा देते हैं। इसके बाद गले में फंदा डालकर लटका देते हैं। फिर हाथ-भर जीभ निकल आती है। सोचकर उसका दम घुटने लगा। वह लोहे के जंगलों के अन्दर से आकाश की ओर देखने की चेष्टा करने लगा। पर वहां आकाश कहां था। ओह आकाश भी नहीं दिखलाई पड़ता। दम घुट रहा है। वह हांफने लगा। उसने घबराहट में पुकारा—"रामधारी!"

"हाँ।"

गिरधारी ने कहा—"ओफ, गुस्से में आकर मैंने क्या कर डाला। हम दोनों को फाँसी होगी।"

"हां" रामधारी चौंक पड़ा। वह एक बात सोच रहा था। एकाएक जो पुकारा गया तो मुंह से निकल गया हां। पर उसने सम्भलकर कहा—"फाँसी? नहीं, नहीं, नहीं, नहीं।"

गिरधारी थोड़ी देर के लिये चुप हो गया। वह उस टिमटिमाती लालटेन की तरफ देखने लगा, मानो अन्धकार ने उसकी आत्मा पर जो सिक्का जमा लिया था उसे हटाने की कोशिश कर रहा था। वह अधिक देर चुप न रह सका। निराशा की तिक्तता में बोल उठा—"तेरी भौजाई बेवा हो जायगी।"

एक जमे हुए विलाप की तरह यह बात सुनाई पड़ी। मानो एक मूर्त्त हाहाकार हो। उसकी बात हवालात के जंगलों से, दीवारों से, उस टिमटिमाती लालटेन से टकरा-टकराकर प्रतिध्वनित होने लगी।

संतरी आकर फिर ताले देख गया। झन-झन-झन। यहां

सब लोहा ही है। दिल को तोड़ डालने वाला, भयंकर।

संतरी चला गया। उसके जूतों की आवाज भी विलीन हो गयी। फिर वही कष्टकर चुप्पी, वही सन्नाटा, वही टिमटिमाती रोशनी, पेशाब की बदबू, मच्छर का राग।

गिरधारी को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे यह चुप्पी धीरे-धीरे उसे ग्रस रही है। जैसे यह उसकी नस-नस में पानी होकर घुस रही है। उसे ऐसा मालूम होने लगा जैसे धीरे-धीरे वह डूब रहा है। कुछ देर तक दांत-पर-दांत रखकर वह इस चुप्पी के दबाव को सहता रहा। फिर एकाएक मानो दीर्घ श्वास के रूप में उस दबाव को भाप बनाकर निकाल देने की कोशिश करते हुए बोल उठा—"हाय, जोरावरसिंह का वंश खतम हो गया।"

रामधारी ने जो एकाएक अपने पिता का नाम सुना तो तो वह उठ बैठा। बोला—"कैसे ?....खतम हो गया।"

"हम लोगों का वंश खतम हो गया" जिस प्रकार जज मुकदमे का फैसला सुनाता है गिरधारी ने उसी प्रकार से कहा।

"नहीं-नहीं-नहीं-नहीं" रामधारी ने कहा।

"नहीं क्या? मैंने ही घर उजाड़ दिया" और गिरधारी गिड़गिड़ाते हुए देवताओं की दुहाई देने लगा। जितने देवताओं के नाम उसे याद थे वह उन सबकी दुहाई दे गया। फिर उसने गाजी मियां और पीरों की दुहाई दी। अन्त में वह एकरस आवाज में गिड़गिड़ाने लगा—

श्री गुरु चरण सरोजरज, निज मन मुकुर सुधारि,
बरणो रघुपति विमल यश, जोदायक फल चारि।
बल-बुद्धि विद्या देहु मोहि, हरहु क्लेश विकार,
जय हनुमान ज्ञान गुण सागर, जय कपिल तिहुं लोक उजागर,
रामदूत अतुलित बलधामा, अंजनि पुत्र पवन सुत धामा।

इस प्रकार उसको हनुमान चालीसा रामायण जहाँ जो कुछ याद था, सब पढ़ गया। इन दुहाइयों तथा पाठों को सुनते-सुनते रामधारी के धैर्य का धागा टूट गया। वह आज अपने भैया के इस पाठ को एक विराट विलाप के रूप में सुन रहा था।

अकस्मात रामधारी बोल उठा—"नहीं-नहीं-नहीं-नहीं।"

गिरधारी रुक गया। बोला—"क्या नहीं?"

"कुछ नहीं योंहीं कहा।"

"फिर भी?"

रामधारी ने एक क्षण तक जैसे अपने वक्तव्य को तोला। फिर बोला—"जोरावरसिंह का वंश खतम नहीं हो सकता" और जंगले के बाहर अंधकार में ताकने लगा।

"कैसे?" ज्वरग्रस्त व्यक्ति की-सी व्यग्रता के साथ गिरधारी ने पूछा, मानो इस प्रश्न के उत्तर पर ही उसकी जिंदगी और मौत निर्भर हो।

"मैं सारा जुर्म अपने ऊपर ले लूंगा।"

"क्या?" गिरधारी को जैसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। कतल तो किया उसने वह कैसे अपने ऊपर जुर्म ले लेगा। बोला—"क्या?"

"मैं इकबाल कर लूंगा कि कि मैंने अकेले ही मुन्नासिंह को मारा है" रामधारी ने कहा। अब उसके स्वर में कोई हिचकिचाहट नहीं थी, बल्कि दृढ़ता थी।

"ऐसा कैसे हो सकता है? करे कोई और भरे कोई और। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता" फिर कुछ सोचकर बोला—"क्या यह अच्छा होगा?"

"क्यों अच्छा नहीं होगा? सुना नहीं कि उजागरसिंह और उसके मजूर मधवा ने मेरे बारे में क्या बयान दिया है?

इन दोनों ने जिस टोकरी को मेरे हाथ में देखा था, वही मुन्ना-सिंह के पास खड़ी मिली है। कोई भी गवाह यह नहीं कह रहा कि तुमको बाग में आते-जाते देखा है। बल्कि उजागर सिंह कहता है कि तुम घर पर थे। वह तो यहां तक कहता है कि जब वह मुझसे अलग होकर हम लोगों के घर से सामने से जा रहा था, तो उस समय उसे हम लोगों के मकान के अन्दर से तुम्हारी आवाज सुनाई पड़ रही थी।"

"हां" गिरधारी ने इतनी गहराई के साथ नहीं सोचा था। भय ने उसकी बुद्धि को कुंठित कर दिया था। बोला—"यह तो झूठ है। उसे मारा तो मैंने ही है। यदि इकबाल ही करना हो तो मुझे ही करना चाहिये। तुम क्यों मेरी करनी के लिये फांसी पर चढ़ोगे?"—उसने गहरी सांस ली।

रामधारी ने कुछ रुखाई के साथ कहा—"अब यह बात नहीं है। बात सिर्फ इतनी है कि दो आदमी फांसी पर चढ़े कि, एक? और मुझे तो गांव के गवाहों ने फंसा ही दिया।"

इतनी देर में सारी बात गिरधारी की समझ में आ गयी।

रामधारी बोला—"भैया तुम इस झगड़े से बचो तो सब तरह से घर की भलाई है। मेरा क्या है? जैसे रहे तैसे न रहे। फिर भौजाई भी तो है। तुम न होगे तो वह तो मर ही जायेगी। फिर बच्चों का कहीं पार नहीं लगेगा।"

गिरधारी निरुत्तर हो गया। अंत में दोनों भाइयों में बड़ी देर तक बातचीत होने के बाद यह तय हुआ कि रामधारी इकाबाल कर ले।

गिरधारी ने कहा "खैर जो रामजी को मंजूर होगा, वही होगा। फिर भी अगर मैं छूट गया तो बाप-दादों की निशानी बेचकर भी तुम्हारा मुकदमा विलायत तक लड़ूंगा और रामजी

ने चाहा तो तुम्हें छुड़ा भी लूंगा। रामधारी चुप रहा। कुछ नहीं बोला।

गिरधारी ने आगे हनुमान चालीसा का पाठ नहीं किया। वह थोड़ी देर इधर-उधर की सोचकर रात के अन्तिम पहर में सो गया।

पर रामधारी को नींद नहीं आयी। वह सोचता रहा, सोचता रहा। उसकी चिन्ताओं का कोई अन्त नहीं था। उसके मन में कोई कष्ट हो रहा था, एक अतृप्ति, एक बेचैनी, एक सूनापन मानो बहुत कुछ आशा थी पर आशा भंग हो गयी। क्या उसे इस बात के लिये कष्ट हो रहा था कि भैया ने इतनी आसानी से और इतनी छोटी बात कहकर उसके विराट त्याग के प्रस्ताव को स्वीकार कैसे कर लिया।

फिर भी जब सवेरे जेल का दारोगा मिला, तो उसने उससे कहकर भाई को बचाने के निमित्त इकबाली बयान दिया। कहा कि मैंने ही मुन्नासिंह को मारा था। जाते समय रास्ते में मुझे उजागरसिंह और मधवा मिले थे। वह टोकरी मेरी ही है।.... इत्यादि-इत्यादि।

चौबीस

पुलिस की बहुत कोशिशों के बावजूद गिरधारी के विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं मिला। पुलिस जितनी ही अधिक खोज करती गयी रामधारी के विरुद्ध उतने ही अधिक प्रमाण मिलते गये और गिरधारी के विरुद्ध परिस्थिति और भी साफ होती गयी इसलिये पुलिस को मजबूरन गिरधारी को छोड़ देना पड़ा।

गिरधारी के छूटते ही सेहरसिंह ने उसे बुलवाकर कहा "कहो कैसे तुम्हें छुड़ा लिया? मैं बराबर कोशिश करता रहा।"

गिरधारी ने कुछ अविश्वास के साथ कहा "रामधारी ने इकबाल कर लिया।"

"हाँ, लेकिन तुम्हारे खिलाफ भी कुछ सबूत बैठ रहे थे। पर मैंने उनको दबा दिया।"

केहरसिंह ने भी इसी प्रकार दावा किया—"चाचाजी जब से आप गये दिन-रात एक कर दिया। कोई गवाह न होने दिया।

उजागरसिंह की गवाही हो चुकी थी, नहीं तो उसे भी गवाही देने न देता।"

कुछ भी हो गिरधारी ने वकील करके रामधारी का मुकदमा खूब लड़ाया। केहरसिंह ने इसमें मदद दी। पर कुछ हो नहीं सका। वकीलों ने अपनी असफलता पर यह कहा कि जब रामधारी इकबाली बयान दे रहा है, तो फिर वे करते तो क्या करते। निम्न अदालत ने रामधारी को सेशन सुपुर्द कर दिया। वकीलों ने जब बहुत जोर लगाया, और रामधारी ने जब यह देखा कि अब उसके बयान बदल देने से गिरधारी पर किसी तरह की आँच नहीं आ सकती तो उसने सेशन में बयान पलट दिया। और अपने को निर्दोष बताया।

पर इसका कोई नतीजा नहीं हुआ। जज ने उसे आजन्म काले पानी की सजा सुना दी।

जिस दिन फैसला सुनाया गया उस दिन गिरधारी केहरसिंह के साथ अदालत में उपस्थित था। सजा सुनकर वह रोने लगा, फिर पुलिसवालों को घूंस देकर रामधारी को मिठाइयां दीं। जो रामधारी कभी मिठाई के दोनों को बात-की-बात में चट कर जाता था, वह आज बिल्कुल नहीं खा सका। गिरधारी ने उसको तसल्ली दी और वादा किया कि हाईकोर्ट में उसका मुकदमा लड़ा जायगा, और हो सकेगा तो विलायत तक मुकदमा लड़ेगा।

इस प्रकार तरह-तरह से सान्त्वना देकर गिरधारी अपने भाई से रोते हुए अलग हो गया। पुलिसवाले रामधारी को जेल पहुंचा आये। आजीवन काले पानी की बात सुनकर रामधारी इतना परेशान नहीं था जितना कि वह इस बात से परेशान था कि भैया ने जाते समय कहा था "जो कुछ हो गया सो हो गया। हाईकोर्ट तक लड़ूंगा।" मानो उसका कोई दोष था।

एक बार भी गिरधारी ने अपने भाई से अलग में भी यह नहीं कहा कि वह तो गिरधारी की सजा भोगने जा रहा है। एक बार भी नहीं। यदि गिरधारी ऐसा एक बार भी कह देता, तो उसका हृदय आनन्द से गद्‌गद हो जाता। उसके कान इसी बात को सुनने के लिये लालायित थे। यदि उसके कान इस बात को सुन पाते, तो उसके लिये यह भयंकर जीवन भी आसान हो जाता। हाँ उस दिन जब दोनों गिरफ्तार थे, तब उसने यह बात कही थी, किन्तु तब से भूलकर भी गिरधारी ने इशारे में यह बात नहीं कही थी। गिरधारी ने उससे जेल में या अदालत में जब भी मुलाकात की। तब ऐसे बातें करता रहा मानो इस अपराध से उसका कोई सम्बन्ध ही न हो। मानो एक आवेश के क्षण में उसी ने यह अपराध कर डाला था। और स्नेहमय बड़े भाई की तरह गिरधारी भरसक उसकी पैरवी कर रहा था।

मुकदमे के अन्त की ओर रामधारी के वकील ने भी उससे कहा था "समझे छोकरे! ज्यादा उम्मीद न करना। तुम्हारे खिलाफ सबूत बहुत ज्यादा हैं। जब कतल ही करना था तो कुछ सावधानी से करते। यही बहुत है कि भाई नहीं फंसा। अजीब बात है। सारा गांव तुम्हारे खिलाफ गवाहियां दे रहा है।"

वकील साहब की बातों को सुनकर रामधारी की जीभ पर कुछ बातें आ गयीं थीं, पर बड़े ही कष्ट से उसने उनको रोका। कैसा आश्चर्य था कि दुनिया में सभी उसको अपराधी समझ रहे थे, यहाँ तक कि गिरधारी का भी व्यवहार ऐसा था मानो उसी ने क्रोध के आवेश में आकर यह अपराध कर डाला है। उसे इस बात का बहुत रंज था।

उसे लम्बी सजा थी, इसलिये उसका चालान सेंट्रल जेल में हो गया। वहाँ उसको पहले दौरे पर रखा गया, यानी रोज बदल-बदलकर अलग-अलग बैरकों में रखा जाने लगा। जाते-

ही जाते उसे चक्की मिली। यों तो रामधारी बहुत सख्त मशक्कत का आदी था, पर चक्की पीसने की बात और थी। कई दिन तक तो उससे चक्की चलाते ही न बना। फिर उसकी मानसिक अवस्था भी अच्छी नहीं थी।

रामधारी के घर से अपील हो रही थी, बस इतना ही जेलर के एजेंटों के कान खड़े करने के लिये काफी था। जेल में जो थोड़ा बहुत खाता-पीता व्यक्ति फँस जाता है तो फौरन जेलर के एजेंट यह कोशिश करते हैं कि उससे जेलर की कुछ आमदनी करावें। मजे की बात यह है कि इस प्रकार के एजेंट अकसर कैदी ही होते हैं। पर अपने स्वार्थ के कारण वे कैदियों के विषय में हर तरह की मुखबिरी करते रहते है, और षड़यन्त्र रचते हैं। उनके इन सारे कामों का उद्देश्य यह होता है कि जेल के अफसरों को पैसे दिलाये जायं जिससे वे उनकी आँखों में सुर्खरू बने रहें। मार-पीट और कड़ी मशक्कत से बचे रहें, रिहाई के दिन अधिक पायें, और लगे हाथों कुछ अच्छा खा-पी लें और हो सके तो कमा लें।

ऐसा ही एक एजेंट दर्शनसिंह रामधारी के पास पहुंचा। उसने पहले तो यह कहा—"तुम भी कुर्मी और हम भी कुर्मी! अभी तुम नये आये हो, इसलिये तुम्हें मदद करना मेरा फर्ज है। आखिर रुपये किस दिन के लिये होते हैं? दो-चार रुपये जेलर साहब को दे दो। बस फिर क्या है मजे में दिन काटो। या तो कोई हलकी मशक्कत करो, या कुछ न करो।

दर्शनसिंह ने उसे यह भी बताया कि मशक्कत बदलने में यानी चक्की की कड़ी मशक्कत के बजाय बाध वगैरह की हलकी मशक्कत करा लेने में कितने रुपये लगेंगे, और बिल्कुल काम न करने के लिये कितने रुपये देने पड़ेंगे। दर्शनसिंह ने यह भी देखा था कि रामधारी जेल की मिट्टी मिली रोटी और पत्तों

की भुजिया खा पाता, इस पर दर्शनसिंह ने रामधारी को यह भी बताया कि वह चाहे तो जेल की मामूली रोटी न खाकर अस्पताल में मिलनेवाली गेंहू की रोटी खा सकता है। उसने यह भी बताया कि जेल के अन्दर गुड़, शक्कर और नशे की चीजें भी मिल सकती हैं।

इस प्रकार दर्शनसिंह ने जेल की सारी व्यवस्था को उसके सम्मुख स्पष्ट कर दिया। काले पानी की सजा के कारण रामधारी की बुद्धि इतनी कुंठित हो गयी थी कि वह पहले तो समझ ही नहीं पाया कि दर्शनसिंह क्या कह रहा है। पर धीरे-धीरे सब बातें उसकी समझ में आने लगीं। उसे यह ज्ञात हो गया कि यह एक न्यारी ही दुनिया है।

उसने यह समझ लिया कि पैसा होने पर आदमी यहां भी काफी आराम से रह सकता है। वार्डर फी रुपया कहीं चार आने और कहीं पांच आने काट कर जेल के अन्दर रुपये पहुँचा देते हैं, और जेल के अन्दर एक रुपया एक मोहर के बराबर होता है। एक पैसे में एक खूराक गेहूं की रोटी मिलती है, आध सेर दूध के लिये दो पैसे देने पड़ते हैं। कुछ बीमारों को गोश्त मिलता है वे उसे नशा-पानी के लिये बेच देते हैं। एक खूराक गोश्त दो पैसे में मिलती है। रामधारी को सबसे अधिक ताज्जुब इस बात से हुआ कि सेंट्रल जेल के गोरे कैदी अपनी डबल रोटी और मक्खन नाममात्र मूल्य पर हिन्दुस्तानी कैदियों के हाथ में बेच देते हैं। उसे गोरों के सम्बन्ध में कुछ और ही धारणा थी।

रामधारी कुछ तो बनारस की यात्रा कर दुनिया को पहचान चुका था। अब पुलिस, अदालत, जेल का साथ होते-होते वह समझ चुका था कि दुनिया कितनी जटिल है। पहले वह इतना तो जानता था कि पुलिसवाले और पटवारी पाजी होते हैं, पर

अब वह जान चुका था कि ऊपर से नीचे तक सभी विभाग उचक्कों से भरे हैं। पैसा ही इस सारे षड्यंत्र, बेईमानी का लक्ष्य है। पैसे के लिये ही लोग सब कुछ करते हैं।

उसने यह देखा कि उसके बैरक में रामाधार नाम का एक प्रसिद्ध डाकू है। उसको अदालत से सजा हो चुकी है। साथ के कैदियों ने बताया कि उसके सम्बन्ध में पुलिस की यह हिदायत है कि जेल में उसे सख्ती से रखा जाय। पर उस पर कोई सख्ती नहीं थी। वह मजे में बाहर से रुपये मँगाता और चैन की बांसुरी बजाता है। यों लिखने को तो उसके टिकट पर सभी तरह की मशक्कतें खानापूरी की तरह पर लिखी हैं, पर लोगों ने बताया कि उसने कभी कोई मशक्कत नहीं की। यदि उसे चक्की दी जाती है तो एक आदमी उसका आटा पीस देता है। वह मजे में जेल-भर घूमता है। और लोग तो यहां तक कहते थे कि रात को उसको कभी अफसर लोग बाहर भी ले जाते हैं। कैसा न्याय था। इसके विपरीत रामधारी ने देखा कि कई लोग उसीकी तरह बेकसूर फँस गये हैं, और पैसेवाले न होने के कारण उन पर अधिक से अधिक सख्ती होती थी।

दर्शनसिंह ने रामधारी को बहुत समझाया कि वह घर से रुपये मँगाये, पर रामधारी ने ऐसा करना स्वीकार नहीं किया। उसने सोचा कि योंही उसके मुकदमे में सैकड़ों रुपये खर्च हो चुके हैं। अब रुपये कहां से आयेंगे।

दर्शनसिंह ने कहा—"आखिर घर में तुम्हारा भी तो हिस्सा है, फिर क्यों न तुम्हारे लिये रुपये आवें?"

पर रामधारी ने एक नहीं सुनी।

तब दर्शनसिंह ने कहा—"अब तक मैं तुम्हें जेलर के पंजे से बचाये हुए था, पर अब आगे नहीं बचा सकता। अब तुम जानो और तुम्हारा काम जाने। मैंने सोचा कि एक कुर्मी भाई

की भलाई हो जायेगी पर तुम नहीं मान रहे हो। अभी तुम जेल की बातों को नहीं जानते।"

हुआ भी वही।

शाम को जब रामधारी अपने आटे की पल्ली लेकर गुदाम में जमा करने पहुँचा, तो गुदामी ने उसको रुखाई से बुलाया, फिर आटे को देखकर बोला—"यह तो बहुत मोटा है।"

रामधारी ने इस पर कहा—"रोज ही की तरह ही तो है।" सचमुच वह रोज की तरह था।

गुदामी को तैश आ गया। उसने कहा—"रोज की तरह कैसे है बे! सूअर! चोरी और उस पर सीना जोरी। बदमाशी की बात करता है?"

गुदामी ने दो कैदियों को इशारा किया। ये लोग मानो तैयार खड़े थे। उन्होंने आव देखा न ताव। बस लगे रामधारी पर डंडा बरसाने। रामधारी को औंधा करके लेटा दिया गया और उसके पैरों के तलुओं पर डंडे बरसने लगे। रामधारी को इस पर बड़ा अपमान मालूम हुआ, पर वह क्या करता। चोट भी बहुत आई। बैरक में पहुँचने पर दर्शनसिंह ने जेल-वालों की बुराई करते हुए उसके साथ बहुत सहानुभूति दिखलाई और कहीं से हल्दी, नमक लाकर उसके तलुओं पर लगा दिया। अगले दिन दर्शनसिंह ने कोशिश करके उसे दो दिन के लिये अस्पताल में भरती करवा दिया। दर्शनसिंह स्वयं अस्पताल पहुँचा और बोला—"यहां से सही सलामत जाना है तो कुछ रुपये खर्च करो। पैसा तो हाथ का मैल होता है।"

रामधारी ने सोचा कि अगली बार भेंट होने पर वह भाई से रुपयों के लिये कहे। सच तो यह है कि अगली मुलाकात के समय गिरधारी ने उससे पूछा भी कि कुछ पैसा तो नहीं चाहिये?

रामधारी क्षण-भर सोचता रहा। फिर उसने दृढ़ता के साथ कहा—"नहीं।"

जब उसने अपने को बलिदान कर दिया, तो फिर पैसे क्यों ले? नतीजा यह हुआ कि उस पर जेलवालों का जुर्म होता रहा। कभी मार पड़ती, तो कभी बेड़ी पड़ती, और कभी तनहाई की सजा मिलती। पर रामधारी ने जो एक बार तय कर लिया था कि भाई से पैसे नहीं मांगेगा सो उसने नहीं मांगे।

हाईकोर्ट में रामधारी की अपील खारिज हो गयी। रही-सही उम्मीद भी जाती रही। अब तो बस सामने दीर्घ यात्रा थी। अपील खारिज होने के बाद गिरधारी ने आकर भाई से मुलाकात की। सब कुछ कहने के बाद गिरधारी बोला—"ईश्वर जानता है भाई हमने तो भरसक कुछ उठा नहीं रखा। पर तुम्हारी तकदीर को क्या किया जाय?"

'तुम्हारी तकदीर' सुनकर रामधारी को बड़ा आश्चर्य हुआ, पर वह कुछ बोला नहीं। क्या उसने गिरधारी को बचाने के लिये ही अपनी तकदीर को इस प्रकार नहीं बनाया? वाह रे तकदीर!

इसके बाद गिरधारी ने तसल्ली के तौर पर बहुत कुछ कहा। पर रामधारी ने कुछ सुना कुछ नहीं।

रामधारी के मना करने पर भी दर्शनसिंह ने गिरधारी के पास एक जमादार भेज दिया, और गिरधारी ने उसके हाथ चार रुपये भेजे। रामधारी को इस बात का कुछ पता नहीं लगा। दर्शनसिंह ने इन रुपयों में से एक पैसा भी न तो रामधारी को दिया, और न जेलरों को। वह बीच ही में इन रुपयों को डकार गया। वह अक्सर दूसरों के साथ ऐसा करता था।

पहले गिरधारी हर तीन महीने बाद नियमित रूप से मुलाकात करने आता था। बाद में वह कभी आता, कभी नहीं।

कैद के चौथे साल से रामधारी की मुलाकात बिल्कुल बन्द हो गयी।

रामधारी अब तक जेल-जीवन का अभ्यस्त हो चुका था। अब जेलर के एजेन्टों ने निराश होकर उसका पीछा छोड़ दिया था। उसे अब जेल के जीवन में ही कुछ-कुछ रस आने लगा था। मनुष्य का स्वभाव भी कैसा अजीब होता है कि वह सब तरह के दुख में भी अपने लिये कोई न कोई मार्ग ढूंढ निकालता है।

रामधारी से उसके साथी कैदी पूछते—"क्यों, अब तुम्हारे भैया मिलने क्यों नहीं आते ?"

इस पर वह कह देता—"किसी काम में फंसे होंगे या कौन जाने कोई मर ही गया हो।"

वह दूर क्षितिज की ओर जहां जेल की अन्तिम दीवारें थीं देखता रहता, और दूसरी बात छेड़ देता।

जिस समय उसने बड़े भाई के बदले फाँसी पर चढ़ने की बात तय की थी, उस समय भी उसमें जो स्वस्थ स्वतन्त्र इच्छा थी वह मार, चक्की, बेड़ी, तनहाई के दबाव में न मालूम कब मर चुकी थी। अब वह अपने को आत्मबलिदानकारी नहीं समझता था, बल्कि वह यह समझता था कि वह भाग्य का शिकार है।

अब रामधारी एक साधारण कैदी की तरह इकरस जीवन व्यतीत करता था। सवेरे पचासे की धमधम आवाज से जगता था और दिन-भर कड़ी मशक्कत करता था। यों देखा जाय तो जेल का यह परिश्रम बाहर के किसान के परिश्रम से कुछ अधिक नहीं होता, किन्तु इसके करने के लिये मजबूरी होने के कारण तथा उसमें स्वार्थ या दिलचस्पी न होने के कारण यह श्रम उसे बहुत अखर जाता था। सोने के लिये मूंज की एक

मोटी और खुरदरी चटाई थी जिसे फट्टा कहते हैं।

जीवन में कोई विचित्रता नहीं थी। दिन आते थे और चले जाते थे, और अपने पीछे एक मुर्दनी का-सा कड़वापन छोड़ जाते थे।

फिर भी इस जीवन में कोई भी विचित्रता नहीं थी, यह कहना गलत न होगा कि कैदियों में पार्टीबन्दी थी, अफसरों में पार्टीबन्दी थी। यदि गरीब कैदी इन दलबन्दियों में हिस्सा नहीं लेते थे, तो कम-से-कम इनके सम्बन्ध में बातचीत तो करते ही थे। रामधारी इन दलबन्दियों से अलग रहता था। इसलिये कैदी उसे बुद्धू कहते थे।

इस प्रकार साल के बाद साल निकलते चले गये। समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता, इस बात को कैदी जैसे अनुभव करता है, कोई और व्यक्ति अनुभव नहीं करता। रामधारी के जीवन में एक ही उत्तेजना थी वह थी गिरधारी स भेंट, किन्तु अब वह भी सालों से नहीं हुई थी। पत्र डाला सो उत्तर नहीं आया। वह सोचता कि गिरधारी कभी इतना निष्ठुर नहीं हो सकता कि जान-बूझकर भेंट न करने आवे। अवश्य ही उस पर कोई भारी विपत्ति पड़ी होगी, शायद जमुना मर गयी हो। और गिरधारी उससे जितना प्रेम मानता था, उसे पता नहीं उसे क्या हुआ हो।

वर्षों से भेंट नहीं हुई थी, किन्तु फिर भी जब रविवार आता था तो वह सवेरे से जैसे किसी बात की प्रतीक्षा करने लगता था। जब कैदी मुंशी या रायटर भेंटवालों के कागजात लेकर आता था तो वह जरा दूर पर खड़े होकर कान खड़े करके भेंटवाले कैदियों के नाम सुनता था। जब सब भेंट करने वाले कैदियों के नाम पढ़ दिये जाते और उसका नाम न निकलता, तो वह जाकर निराश होकर बैठ जाता। उसकी आंखों

में पिथौरा का चित्र घूम जाता था। विशेषकर वह हिस्सा जहां उसका घर था। फिर तीन-चार बैल और गायों के जुगाली करने का दृश्य उसके सामने आ जाता। बीच में गिरधारी। वह सोचता—"न मालूम कब वहां जाने की नौबत आवे, आवे या न आवे।"

बहुत से कैदी लम्बी-लम्बी कैद काटकर जेल से रोज छूटते थे। इनको देखकर लम्बी मियादवाले कैदियों की आशा बंधती थी कि कभी वह दिन भी आयेगा जब वे लोग भी अपनी मियाद पूरी कर घर की ओर रवाना होंगे। एक तरफ तो इस प्रकार रामधारी के मन में आशा बंधती थी, और दूसरी तरफ वह यह भी देखता था कि बहुत से कैदी जेल में ही मर जाते हैं। इनकी मृत्यु से उसे बहुत गहरी निराशा होती थी। जिस दिन जेल में कोई मरता था उस दिन सारी जेल पर एक आतंक और मुर्दनी छा जाती थी। अपने प्रियजनों से दूर, जेल की दीवारों के अन्दर यह मृत्यु अजीब दुखदायी होती थी।

एक कैदी की कहानी तो बहुत करुण थी। उस व्यक्ति ने काटते-काटते बीस साल की मियाद पूरी कर डाली थी। रिहाई का दिन बंध चुका था। छूटने में केवल सात दिन बाकी थे। परेड के दिन उसने बड़े साहब से दिन मांगे। उसे बहुत आशा थी कि बड़े साहब उसे सात दिन देंगे क्योंकि उसने ईंट के भट्टे में बहुत अच्छा काम किया था, और बड़े साहब भी इस बात को जानते थे। बड़े साहब दिन देने के लिये तैयार भी हो गये थे, पर जेलर ने अंगरेजी में उनसे कहा—"हजूर यह बड़े काम का आदमी है। इसके अलावा किसी को भट्टे का काम मालूम नहीं है। अगर आज छोड़ दिया जायगा तो जो काम चालू है, वह नष्ट हो जायगा। नतीजा यह हुआ कि बड़े साहब ने उसे दिन नहीं दिये। इस बात से उस कैदी को बड़ी

निराशा हुई। वह समझता था कि उसने खैरख्वाही से काम किया है, उसकी कुछ तो सुनवाई होगी। उसी दिन संध्या समय उस कैदी को बुखार आया, और अगले दिन दो बजे वह मर गया।

ऐसे ही और कितनी घटनाएं होतीं। एक घटना इस प्रकार थी कि एक अच्छे खानदान का नौजवान फौजदारी में बीस साल की सजा पाकर जेल में आया। देखने में बहुत ही सुन्दर था। घर में नयी बहू छोड़कर आया था। जिस दिन से आया था बहुत उदास रहता था। आते-ही-आते उसे चक्की दी गयी। दर्शनसिंह तो छूट चुका था, किन्तु दर्शनसिंह के भाई-बंद लगे उस पर अपनी पेंच डालने कि किसी प्रकार हत्थे चढ़े और जेलर को रुपये दे। रुपये देने से उसे इनकार नहीं था, पर अभी वह समझ ही नहीं पा रहा था कि उस पर क्यों सख्ती हो रही है। एक नयी दुनिया को समझने में भी तो कुछ दिन लगते ही हैं। इसी बीच में एक दिन उसको गिराकर मारा गया। बस इस बात से उसको इतना मलाल हुआ कि रात को उसने फाँसी लगा ली। इसके चार दिन बाद हाईकोर्ट से यह खबर आयी कि वह बेदाग छोड़ दिया गया है।

इस प्रकार रामधारी का जीवन आस-पास होनेवाली घटनाओं की छाया में बीत रहा था। फिर भी दिन बीतते जाते थे। और एक कैदी इससे बढ़कर क्या चाह सकता था कि दिन कटे? यद्यपि एक तरफ कैद के दिन भी कट रहे थे, दूसरी तरफ जीवन के दिन भी कम हो रहे थे।

पच्चीस

अपनी मियाद पूरी करके अर्थात् रिवीजन बोर्ड के कारण साढ़े दस साल से कुछ अधिक जेल में काटने के बाद जब रामधारी छूट गया तो वह वैसा सरल युवक नहीं रह गया था जैसा कि वह पहले था। इन सालों में उसने जीवन के खराब पहलू को बहुत अच्छी तरह देखा था। जिस भाई के लिये उसने फांसी का फन्दा अपने गले में डाल लिया था, उस भाई ने उसे बिल्कुल त्याग दिया था, यहाँ तक कि वह उसके पत्रों का उत्तर भी नहीं देता था। सबसे अधिक उसे इसी बात का अफसोस था। पर अब भी उसे विश्वास था कि घर जाने पर उसके साथ बहुत अच्छा बर्ताव होगा।

वह संध्या समय घर पर पहुंचा।

देखा वहाँ का सारा नक्शा ही बदल गया था। गांव तथा घर के जिस चित्र को वह मन-ही-मन गूंगे के गुड़ की तरह माला बनाकर फेरा करता था, वह बिल्कुल बदल चुका था। मुश्किल से पहचान में आता था। यदि पुराने पेड़ न होते तो

वह अपने गांव तथा घर को पहचान पाता कि नहीं इसमें भी सन्देह था।

इसी बीच में जमुना मर चुकी थी। जमुना शायद उसी समय मर चुकी थी जब दोनों भाई हवालात में थे, पर गिरधारी ने रामधारी को यह खबर नहीं दी थी। गिरधारी ने एक दूसरी शादी की थी। सब नक्शा ही बदला हुआ था।

गिरधारी ने रामधारी को देखकर खुशी जाहिर की, पर उतनी नहीं जितनी रामधारी को आशा थी। गिरधारी ने तरह-तरह के कारण बतलाये जिनसे वह उससे इतने दिनों तक मिल नहीं सका था। बिलसिया की शादी का झंझट था, फिर लोगों के कहने से अपनी भी शादी करनी पड़ी। पैसों की कमी थी।

रामधारी ने कहा—"खैर भैया कोई बात नहीं। मैं तो समझ ही गया था कि कोई-न-कोई विपत्ति जरूर पड़ी होगी। अब तो मैं आ ही गया हूँ।

रामधारी ने नयी भौजाई से पैदा भतीजे तथा भतीजियों से घनिष्ठता स्थापित करनी चाही, पर उसे सफलता नहीं मिली। गिरधारी ने उन्हें बता भी दिया कि ये तुम्हारे चाचा लगते हैं, पर रामधारी के चेहरे पर इन वर्षों के दौरान में न मालूम काहे की छाप आ गयी थी कि वे उसके पास नहीं फटकते थे। उससे वे ऐसे भागते रहे जैसे वह कोई जानवर हो। पहले के भतीजे भी उससे प्रेम से नहीं मिले। इन बेचारों को तो काम ही से फुर्सत न मिलती थी। रामधारी को इस बात का बड़ा दुख हुआ। हफ्तों पास रहने पर भी यह दूरी दूर नहीं हुई।

एक दिन उसने अपने छोटे भतीजे को अपने बाप से यह पूछते सुना—"बाबू, जेल में कौन लोग जाते हैं?"

गिरधारी ने यों ही बिना कुछ सोचे-समझे कह दिया "जो बुरा काम करते हैं, वे ही जेल जाते हैं।"

लड़के ने फिर पूछा—"चाचा क्यों जेल गये थे ?"

गिरधारी ब्योरे में नहीं जाना चाहता था। उसने कह दिया—"उन पर कतल का जुर्म था।"

लड़के ने पूछा—"कतल क्या है ?"

गिरधारी ने कहा—"आदमी को मार डालने को कतल कहते हैं।"

जब लड़के ने इससे अधिक पूछना चाहा तो गिरधारी ने उत्तर नहीं दिया। पर लड़के को जितना मालूम हो गया था, वह उसीको अपने साथियों में फैलाने के लिये लालायित हो उठा।

उसने जाकर पास ही खड़े लड़कों से कहा—"चाचाजी हत्यारे हैं।"

रामधारी ने दूर से सुना, और उसका मन कड़वा हो गया। नयी भौजाई ने भी रामधारी का अच्छी तरह स्वागत नहीं किया। कहां तो जमुना उसकी मां और वहिन दोनों थी और कहां यह भौजाई जिसने उससे कोई विशेष बात तक नहीं की। उसकी आंखों में प्रेम का तो कहीं नाम भी नहीं था, शायद कुछ घृणा ही थी।

रामधारी ने देखा कि भाई के दो घर पक्के बन गये हैं। भाई के इसलिये कि अब वह उसे अपना समझने में असमर्थ था। अब वह अपनी कल्पना के स्वर्ग में अपने को एक अजनबी तथा बाहरी रूप में पा रहा था।

उसे यह भी ज्ञात हुआ कि इस बीच में गिरधारी तीर्थयात्रा भी कर आया। उसने देखा कि भौजाई के हाथों में सोने की पतली चूड़ी भी हो गयी हैं। पहले इस परिवार में सोने की चीज की बात कल्पनातीत थी। अब गिरधारी अपने हाथ से कोई काम नहीं करता था। अब उसका काम बहुत बढ़ गया

था। जमीन और ढोरों की संख्या भी बढ़ी थी। मेहरसिंह मर चुका था। केहरसिंह उसकी जगह पर मुखिया हो गया था। केहरसिंह और गिरधारी की बड़ी दोस्ती थी। रामधारी ने देखा कि केहरसिंह और नयी भौजाई में भी बड़ी दोस्ती है। केहरसिंह से जितना बन पड़ता है यहीं रहता है।

केहरसिंह ने रामधारी के आने पर कोई खुशी नहीं दिखाई। करीब तीन महीने रहने के बाद यह बात रामधारी की समझ में आ गयी कि उसे यहाँ कोई नहीं चाहता। एक दिन तो हद हो गयी। रामधारी ने सुना कि नयी भौजाई और गांव की एक स्त्री में इस प्रकार की बातचीत हो रही है—

दूसरी औरत बोली—"अब तो सारी जायदाद का बंटवारा होगा न ?"

भौजाई ने कहा—"क्यों ?"

दूसरी औरत ने कहा—"रामधारी अपना आधा हिस्सा नही लेगा ?"

भौजाई बोली—"उसका आधा हिस्सा कैसा ? हमारे ससुर के पास तो कुछ नहीं था और जो कुछ था भी, उससे कहीं ज्यादा पैसे इनके मुकदमे में और भेंट में खर्च हो गये। अब जो जायदाद बनी है वह तो अपने कर्तव्य से बनी है। उसमें किसीका हिस्सा नहीं है। भाई जरूर हैं, रहेंगे तो खाते-पीते रहेंगे। हम भी समझेंगे कि इतने मजूर हैं, एक मजूर और सही।...."

रामधारी से और सुना नहीं गया। उसके मन में विचित्र भावनायें आयीं। क्या इन भावनाओं को अफसोस कहा जा सकता है? नहीं रामधारी अफसोस से कहीं दूर था। अफसोस तब तक होता है जब तक आदमी समझता है कि हम चाहते तो दूसरे प्रकार का आचरण करते। पर रामधारी अपने को निष्ठुर

भाग्य का शिकार मात्र समझ रहा था। जेल ने उसकी मनुष्यता को बिल्कुल निस्तेज कर दिया था। जो कुछ बाकी था वह बाहर आकर खतम हो गया। फिर भी उसमें इतनी मनुष्यता तो रह ही गयी थी कि वह आगे यहां रहना अपने लिये असम्भव समझे।

एक दिन वह किसीसे बिना कुछ-कहे सुने घर से निकल पड़ा। पर जाता तो कहां जाता? वह तो इसी गांव में पैदा हुआ था। वह इसके बाहर की दुनिया से प्राय: अपरिचित था। इस गांव के बाहर उसने जेल को जाना था। कहीं जान-पहचान नहीं। पर उसने तय कर लिया था कि उसे यहां रहना नहीं है।

इसलिये वह चलता गया, चलता गया। बिना किसी लक्ष्य के चलता रहा। रास्ते में भूख-प्यास लगी, पर उसने परवाह नहीं की। लौटने की कल्पना भी उसे असह्य थी। जेल में वर्षों तक उसने जिस गांव तथा घर का मधुर स्वप्न देखा था अब वह उसके लिये विष की तरह हो चुका था। उसने चलते-चलते कई बार सोचा कि यदि वह जेल से न लौटता, वहीं मर जाता, तो अच्छा होता।

संध्या-समय थककर वह एक आम के बाग में ही टिक गया। राह चलते हुए लोगों से पूछा तो उसे ज्ञात हुआ कि सामने मंजगांवा है।

मंजगांवा नाम सुनते ही उसे स्मरण हो आया कि रामाधार का घर वहीं पर है। उसने छूटते समय उससे बहुत अनुरोध किया था कि वह छूटे तो अवश्य उसके पास आवे। उसने यह भी बताया कि पिथौरा से मंजगांवा केवल आठ कोस पर है, अधिक दूर नहीं।

रात दस बजे के करीब रामधारी रामाधार के घर पहुंचा।

छब्बीस

इसके बाद बहुत साल बीत गये। रामधारी अब मंजगांवा के रामाधार की बदौलत अपराधियों के एक भयंकर गिरोह में है। रामाधार अब खुद कुछ नहीं करता, वह अब एक तरह से डाकुओं और चोरों की कमाई पर रहता है। वह इस बीच में पुलिसवालों से मिलकर चलता रहा है। इसलिये व्यक्तिगत रूप से उस पर कोई आंच नहीं आती।

प्रतिबार जब रामधारी जेल से छूटता है, तो वह एक बार अपने पैतृक मकान की प्रदक्षिणा-सी करके चुपचाप लौट जाता है। वह एक बार उस बाग में भी जाता है, जहां गिरधारी ने मुन्नासिंह को मार डाला था। फिर वह एक बार आकाश की ओर कातर नेत्रों से देखता है। पर जब वहां से कोई उत्तर नहीं आता तो अट्टहास करके चल देता है।

प्रतिबार जब वह जेल से लौटता है तो देखता है कि गिरधारी की और भी तरक्की हुई है। समय-समय पर गांववाले गिरधारी को रामधारी की चोरी, डकैती और अन्य सत्य

और काल्पनिक करतूतों की बातें सुनाते हैं। कोई ग्राम के वृद्ध इस पर कह देता है—"वह तो लड़कपन से ही ऐसा था।

गांववाले सुखिया वाली घटना को याद करते हैं, पर गि धारी के सामने यह नहीं कहते कि रामधारी भतीजी को भग ले गया था। पर मन-ही-मन ऐसा कहते हैं। जब गिरधा इन बातों को सुनता है तो वह भी चुप रहता है, हुक्का पीत रहता है। उसकी आंखों के सामने वह दृश्य आ जाता है, ज वह हनुमान चालीसा पढ़ रहा था, और उसके भाई ने ए देवदूत की भांति अपने ऊपर सारा अपराध ओढ़ने का प्रस्ताव किया था। उसके चेहरे पर तथा उसकी आंखों में एक वेदना की छाया खेल जाती है, पर वह जल्दी-जल्दी हुक्के के कश खींचने लगता है। चौपाल धुएं से भर जाता है। तबियत तो चाहती है कि भाई से जाकर गले मिले, पर हजारों मजबूरियाँ हैं। इन मजबूरियों के सामने वह कुछ भी नहीं कर पाता। उसकी आंखें कुछ आर्द्र हो जाती हैं।